प्रभात कुमार मुखर्जी
की
कहानियाँ

अनुवादक
मदनलाल जैन

साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली की ओर से
साहित्य निकेतन, कानपुर

भूमिका

उन्नीसवी सदी के अंतिम चरण मे बँगला-कहानी साहित्य की मदाकिनी ने रवी द्रनाथ की लेखनी द्वारा साहित्य की धरती को स्पश करते हुए मत्यलोक की भागीरथी के रूप मे मनुष्य की प्रान द-वेदना की कलध्वनि को मुखरित किया था, उसी जमाने में प्रभातकुमार ने कहानीकार के रूप मे पदार्पण किया था। प्रभातकुमार का आविर्भाव रवी द्रनाथ के आविर्भाव के कुछ समय बाद, करीब एक युग के बाद हुआ था। इस दृष्टि स प्रभातकुमार को छोटी कहानिया लिखने के क्षेत्र मे प्रथम सफल अनुयात्री कह सकते ह। 'गल्प गुच्छ' की पहली कहानी 'घाट की बात' १८९४ मे लिखी गई थी और प्रभातकुमार के प्रथम गल्प सकलन 'नवकथा' का रचना-काल १८९५ से १८९९ तक है। उनकी पहली कहानी 'पडी पाई लडकी' (कुडानो) की रचना से पहले रवी द्रनाथ की चौरासी कहानियो मे से तिरपन लिखी जा चुकी थी। साहित्य साधना मे पभातकुमार रवी द्रनाथ के मम सामयिक थे पर कला की दृष्टि और कला सृष्टि मे उनका अपनी विशेषता थी और वे अपने आपमे अन य थे। प्रभातकुमार का लेखक के तौर पर तो रवी द्र मडली मे भल ही गिन लें पर वे रवी द्र-गान के कलाकार नही थे।

रवी द्रनाथ कहानीकार के रूप मे भी कवि थे। प्रभातकुमार मुख्यत कहानीकार थे। रवी द्रनाथ की कहानियो मे वास्तविकता कल्पना के आत्मप्रकाश और विकास का अवलम्बन मात्र है तो प्रभातकुमार सम्पूर्ण रूप से वास्तविकता पर खडे हैं। रवी द्रनाथ की

रचनाओ मे कवि का काल्पनिक भाव ही मुख्य होता है, पर प्रभात कुमार की कहानियों का प्राथमिक और अंतिम आवेदन कहानी मे ही होता है। जीवन की व्याख्या के बदले जीवन के रूप को प्रकाशित करने मे ही उनकी शक्ति की स्फूर्ति है।

जिस जमाने म प्रभातकुमार ने कहानीकार के रूप मे ख्याति और प्रतिष्ठा अर्जित की थी उस जमाने मे उनकी लोकप्रियता अपरिसीम थी। उनकी ख्याति के मध्याह्न काल मे रवीन्द्रनाथ के अग्रज फ्रेंच साहित्य के प्रकाड पडित स्वर्गीय ज्योतीरिन्द्रनाथ ठाकुर ने प्रभात-कमार को लिखा था—बडे बडे फ्रेंच कहानीकारो की कहानियो की अपेक्षा तुम्हारी कहानियाँ किसी भी रूप मे निम्न कोटि की नही हैं। इस प्रशसा मे हो सकता है कि स्नेह की कुछ अत्युक्ति हो, लेकिन कहानीकार प्रभातकुमार की प्रतिभा की दुनिया के प्रथम कोटि के कहानीकारो की प्रतिभा के साथ तुलना करने मे कुण्ठा का कोई कारण नही हो सकता। उस जमाने मे कहानीकार के रूप मे उनकी अपरिसीम लोक-प्रियता के कारण ही उन्हें बँगला का मोपासाँ कहा जाता था। कहानीकार के रूप म रवीन्द्रनाथ की अपेक्षा मोपासा के वे अधिक नजदीक हैं—यह बात विस्मयकारी होने पर भी सच है। कारण यह कि रवीन्द्रनाथ की रचनाओ मे जीवन का भाष्य है और प्रभातकुमार मे मोपासाँ की तरह जीवन का उन्मेष।

रवीन्द्रनाथ की अपेक्षा मोपासाँ के साथ अधिक तुलनीय होने पर भी मोपासाँ म और उनमे काफी दूरत्व है। रचनाकार के रूप मे वे एक गोत्र के हो सकते हैं, लेकिन जीवन को देखने की भगिमा मे दोनो मे काफी पार्थक्य है। इस दृष्टि से दोनो दो भिन्न मेरुओ पर खडे हैं। मोपासाँ ने देखा है कि मनुष्य अपने जीवन के केन्द्र म, अपनी सत्ता की गहराई मे एक आदिम पशु का गोपन रूप मे लालन करता हुआ चल रहा है। उसकी सारी सभ्यता और शिष्टता के अन्तराल में उसी

पशु प्रवृत्ति की अमोघ ताडना है। जीवन मे द्वन्द्व के प्रत्येक नाटकीय मुहूर्त म उसका लोलुप, भयानक और अति विचित्र सत्य प्रकाशित होता है। मोपासा की रचना मे छिपे हुए मनुष्य धर्म की ही जीत होती है लेकिन प्रभातकुमार की रचना मे मनुष्य की हृदय-वृत्ति का ही यशगान है। वह हृदयवृत्ति प्रेम से मधुर, सु दर और कौतुक से उज्ज्वल और रहस्यमय है। प्रभातकुमार की कहानियो मे मानव-हृदय ने एक उ मुक्त विस्तृति पाई है। इसीलिए कहानियो का आवेदन अत्य त सहज, परिच्छन्न और स्वच्छ है। प्रभातकुमार यद्यपि मूलत हास्य रसिक लेखक नही हैं, फिर भी इसी कारण से हास्य और कौतुक से सवदा स्निग्ध हैं, नयनाभिराम लावण्य की तरह अपनी कहानिया मे हमेशा विराजमान हैं। यहा तक कि अति करुणरस की कहानियो मे भी उसी हास्य और कौतुक के प्रलेप ने एक विचित्र आस्वाद पैदा किया है।

यह सब इसीलिए सभव हो सका कि प्रभातकुमार जीवन को स्वाभाविक स्वरूप मे देखने की सहज दृष्टि की साधना मे सिद्ध थे। जीवन की जिज्ञासा मे वे विद्रोही नही हैं। उन्होने जीवन को देखा है, बिना किसी शका के खुशी से उसे मान लिया है, और मानकर खुश हुए हैं। देखने मे ही उनका आनन्द है, सिर्फ देखने योग्य द्रष्टव्य मिलना चाहिए। सहज, स्वाभाविक, स्वच्छ जीवन को देखकर वे आनदित होते थे इसीलिये उन्होने जीवन के मूल्य का निरूपण नही किया। इसीलिए नये मूल्य बोध को सृष्टि करने की अपेक्षा हमेशा से चले आये मूल्य-बोध की पुन प्रतिष्ठा की ही तरफ उनका झुकाव है। उनकी रचना मे इसी कारण मनुष्य के अदर और बाहर का, समाज और व्यक्ति का, नीतिधर्म और प्राणधम का सतुलन कदाचित् ही विचलित होता है।

कलाकार के रूप मे प्रभातकुमार बँगला साहित्य के श्रेष्ठ कला कारो म भी एक विशिष्ट व्यक्ति हैं। कहानी के परिणाम, व्यवहृत उपकरण की अत्यावश्यकता और अनिवार्यता, कहानी के विन्यास और गुथन की दक्षता म प्रभातकुमार असामान्य हैं। उनकी कहानी कहने की भगी इतनी सामाजिक और अनायास है कि वह कहानी की विषय-वस्तु की तरह ही स्वत स्फूर्त होती है।

बगला लघुकथा के इतिहास मे रवीन्द्रनाथ की तरह प्रभातकुमार भी परवर्ती अनेक कहानीकारो के लिये अपार प्रेरणा के उत्स थे। उनके परवर्ती काल के अनेक ख्यातिप्राप्त लेखक उनके द्वारा प्रभावित हुये। रवीन्द्रनाथ की तरह उन्होने भी एक विशाल ऐतिहासिक क्षेत्र बनाया है।

प्रभातकुमार बँगला के एक अत्यन्त सफल कहानीकार थे और बँगला के समसामयिक काल का सारा वैचित्र्य और वैशिष्ट्य उनकी रचना म विद्यमान है। फिर भी भारत के चिरकालीन मूल्य-बोध की आस्था के कारण, जीवन के प्रति स्वाभाविक, सहज और प्रसन्न दृष्टि की उदारता और प्रसारता के कारण उनकी रचना सर्व भारतीय पाठको का हृदयरजन करेगी ऐसा मेरा विश्वास है।

ताराशकर वद्योपाध्याय

क्रम

देवी

इस बात को सौ साल से कुछ ज्यादा अर्सा हुआ होगा।

पौष महीने की लबी रात किसी भी तरह समाप्त होना नही चाहती। इतने मे उमाप्रसाद की नींद टूट गई। उसने लोई म टटोल-कर देखा तो पत्नी नही है। बिछौने पर हाथ फैलाकर देखा कि उसकी षोडशी पत्नी एक तरफ गठरी हुई पडी सो रही है। उसने सरककर सावधानी से उसके शरीर पर लोई ओढा दी। बगल और पैरो की तरफ हाथ से टटोलकर देख लिया कि कही खुला तो नही है।

उमाप्रसाद की उम्र बीस साल की है। इन दिनो सस्कृत छोडकर शौक से फारसी पढना शुरू किया है। मा नही है, बाप परम पडित, परम धार्मिक निष्ठावान, शक्ति उपासक, गाव के जमीदार हैं, मान सम्मान की सीमा नही है। बहुतो का विश्वास है कि उमाप्रसाद के पिता कालीकिकर राय एक प्रकृतसिद्ध पुरुष हैं, आद्याशक्ति का उन पर विशेष अनुग्रह है। गाव के आबाल वृद्ध उन पर देवता की तरह श्रद्धा करते हैं।

उमाप्रसाद अपने नवीन जीवन मे सप्रति नव प्रणय की मादकता का अनुभव करने लगा है। ब्याह हुए पाच छह साल हो गये हैं, परतु पत्नी के साथ घनिष्ठता का सूत्रपात अभी अभी हुआ है। स्त्री का नाम दयामयी है।

स्त्री की देह को घेरकर उमाप्रसाद ने उसकी कनपटी पर एक हाथ रखा—देखा कि वह जगह ठड के मारे हिम हो रही है। उसने धीरे से पत्नी का मुह चूम लिया।

जिस नियमित चाल से पत्नी की साँस चल रही थी सहसा उसमे

व्यतिक्रम पैदा हो गया। उमा समझ गया कि पत्नी जाग उठी है। उसने मृदु स्वर से कहा – 'दया !"

दया बोली—"क्या ? यह 'क्या' वह कुछ जोर से ही बोली।

"तुम क्या जाग रही थी ?"

दया ने थूक निगलकर कहा—"नहीं, सो रही थी।"

उमाप्रसाद ने स्नेह से स्त्री को अपने सीने के पास खींच लिया। बोला—"सो रही थी तो जवाब किसने दिया ?'

दया तब अपनी भूल समझकर सकुचित हो गई। बोली—"पहले सो रही थी, अब जाग गई हूँ।'

उमाप्रसाद ने पूछा—"अब कब ? ठीक किस समय ?' उमा बडा शरारती है।

"कब क्या ? तभी !'

"कब ?'

'जाओ मैं नहीं जानती।' कहकर दया ने स्वामी के बाहुपाश म से छूटने का वृथा प्रयत्न किया।

ठीक किस समय जाग गई थी यह बात दया भी किसी तरह नहीं बतला रही थी और उसका पति भी किसी तरह नहीं छोड रहा था। कुछ देर तक मान मनौवल होती रहने के बाद दया की पराजय हुई। उसने जवाब दिया—'तभी जब तुमने । इतना कहकर वह चुप हो गइ।

"मैंने क्या किया ?"

दया ने खूब जल्दी से कहा— 'वही जब तुमने मेरी मिट्टी ली अब तो हो गया ! अरी दैया ! तुम इतना सब जानते हो !"

तब भी एक पहर स ज्यादा रात बाकी थी। दोनों मे कितनी ही बातें होती रही। अधिकाश बातों का न सिर था न पैर। हाय, सौ साल पहले हमारे प्रपितामहो के तरुण वयस्क पिता मातागण

प्रसार प्रपदार्थ हमारी ही तरह इसी प्रकार चचल मति के थे। इतने बड़े शावन परिवार म पैदा होकर भी उमाप्रसाद ने तब तक एक दिन भी स्त्री से रुपय-पैसे की, कमाई धमाई की, लिखन-पढ़न की कोई बात नहीं की, और यम नियमादि के बारे म उस बिलकुल मूख बना रखा था।

बहुत सी इधर उधर की बाता के बाद उमाप्रसाद बोला—"दखो, मैं नौकरी के लिए पश्चिम की तरफ जाऊँगा।"

दया बोली—"तुम्ह नौकरी करने की क्या जरूरत है। तुम्ह किस चीज की कमी है? जमीदार का लडका होकर कोई नौकरी करता है क्या?"

"मुझे यहा कष्ट है।"

'क्या?"

'तुम अगर मरे कष्ट का समझो तब फिर किसकी कमी है।"

यह सुनकर दया बडी सकुचित हुई। साचने लगी कि इन्ह किस बात का दु ख है। बहुत साचन पर भी कुछ निश्चित नहीं कर सकी। उसके मन म एक शरारत आई। बोली—"तुम्ह क्या दु ख है, बताऊँ। शायद मैं तुम्हारे मन के मुताबिक नहीं हूँ।" दया जानती थी कि इस बात से उमाप्रसाद के चित्त को चोट पहुँचेगी।

उमाप्रसाद न अपनी प्रिय पत्नी के लगातार कई चुबन लेकर इस आघात का बदला लिया। बाद मे बोला—"मरा दु ख तुम्हीको लेकर है। मुझे तुम दिन भर को नहीं मिल पाती। सिर्फ रात को मिलने से साध नहीं मिटती। परदेश म नौकरी करन जाऊँगा, वहा तुम्ह ले जाऊँगा, और दाना मजे मे सारे दिन सारी रात अकेले रहगे।"

"नौकरी करोगे तो सारे दिन मुझे लेकर कैसे रहोगे? मुझे तो अकेला छोडकर तुम आफिस चले जाओगे।"

'आफिस से बहुत जल्दी लौट आऊँगा।'

दया ने सोचकर देखा, यह हो सकता है। लेकिन रुकावटें भी तो बहुत-सी हैं।

"तुम तो ले जाओगे पर सब लोग जाने क्या देंगे ?"

"यहाँ से थोडे ही ले जाऊँगा ? जब जान लूगा कि तुम मैके गई हो, तब चुपचाप आकर तुम्हे साथ ले जाऊँगा।'

यह सुनकर दया हँस पडी। यह भी क्या सभव है !—"वहा हम कितने दिन रहगे ?"

"कई साल रहेंगे।"

दया धीरे धीरे मुस्कुरा रही थी। सहसा एक बात उसके खयाल मे आई। बोली—"लल्ला को छोडकर क्या ज्यादा साल मैं वहाँ परदेश मे रह सकूगी।"

उमाप्रसाद स्त्री के गालो पर गाल रखकर कान मे बोला—"तब तक तो तुम्हारे भी एक लल्ला हो जायगा।" यह सुनकर दया के होठों से लगाकर कर्णमूल तक लज्जा के मारे लाल हो गये। लेकिन अँधेरे मे इसे कोई देख नही सका।

उल्लिखित लल्ला उमाप्रसाद के बडे भाई ताराप्रसाद की एक-मात्र सतान है। स्वय उमाप्रसाद इस घराने मे सबसे छोटा है। इस परिवार मे बालक का सिंहासन बहुत दिनो से सूना था इसीलिए लल्ला का यहाँ बहुत आदर है। लल्ला घर भर के लोगो की आँखो का तारा है। लल्ला की माँ हरसुन्दरी के तो गर्व के मारे धरती पर पैर ही नही पडते।

दया सहमा बोली—"आज अभी तक लल्ला कैसे नहीं आया ?"

सुबह सबेर रोज लल्ला अपनी काकी के पास आता है। यह उसका रोज का काम है। यद्यपि घर मे दास दासियो की कमी नहीं है, फिर भी गृहकार्य का अधिकाश दया अपने ही हाथ से करती है। खासकर उसके ससुर के पूजा आह्निक सम्बन्धी कार्यों मे दया को

छोडकर और किसी को हाथ लगाने का अधिकार नही था। दिन-भर इन कामो मे लगी रहने पर भी लल्ला को वह एक मुहूर्त के लिए भी आखो से ओझल नही करती थी। काकी शरीर न पोछे तो लल्ला शरीर नही पोछवाता, काकी काजल न लगावे तो लल्ला काजल नही लगवाता, काकी की गोद के सिवा किसी और की गोद मे बैठकर लल्ला दूध नही पीता। लल्ला को बिछौने पर बडी रात गये तक काकी सुलाकर आती है। सुबह सवेरे उठते ही लल्ला 'काकी काकी' की रट लगा देता है। इस जिद और हठ के लिए बीच-बीच मे उसे अपनी मा हरसुदरी से मार भी खानी पडती है। लेकिन इससे रोना रुकता नही, बल्कि और भी दस गुना बढ जाता है। तब हरसुदरी उसे गोद मे लेकर, क्रोध और नीद मे लडखडाती लडखडाती आकर दया के सोने के कमरे के सामने पुकारती है—"छोटी बहू, ओ छोटी बहू, ला अपने सपूत को।" यह कहकर दया के दरवाजा खोलने की अपेक्षा किये बिना ही, वह लल्ला को धरती पर बिठाकर चल देती है। दया अक्सर जागती रहती है। जागती न हो तो लल्ला का रोना सुनते ही जाग जाती है, और दौडकर लल्ला को छाती से लगाकर [illegible] जाती है—"किसने मारा मेरे राजा भैया को, किसने मारा"—कहकर उसे बार बार पुचकारती है। सिरहाने की तरफ पान के डिब्बे म कभी लड्डू, कभी बतासे, कभी नारियल के लड्डू रहते हैं। वहीं खाकर लल्ला काकी की गोद म सो जाता है। आज अभी तक आया नहीं आया यह जानकर दया को उत्कठा हो गई। बोली—"भगवान न करे कही लल्ला को कुछ हो-हुआ तो नही गया।"

उमाप्रसाद बोला—"शायद अभी रात [illegible] है। ठहरो, [illegible] हूँ।"

उमाप्रसाद ने बिछौने पर से उठकर [illegible] और नारियलो का बगीचा था। तब [illegible]

देर भी नही थी। दया चुपचाप आकर स्वामी की बगल मे खडी हो गई। बोली—' अब रात ज्यादा नही है।"

जाडे की ठडी हवा तेजी से खिडकी के रास्ते कमरे म आने लगी। फिर भी दोना जने उस धुधली रोशनी में एक दूसरे की तरफ देखते हुए बडी देर तक खडे रह। बडी देर से उनके नेत्र उपासे थे।

दया बोली—"देखो आज मरा मन कैसा हो गया है। लल्ला अभी तक नहीं आया। न जाने, मन ऐसा क्यो हो गया है।'

उमाप्रसाद बोला—"अभी तक लल्ला के आन का समय नही हुआ है। जिस दिन मो जाता है उस दिन आन म देर होती ही है। तुम्हारा मन इसलिए खराब नहीं है। क्या एसा हुआ है, यह मै जानता हू।"

"क्यो, बताओ तो भला ?'

"मैने कहा था न कि मैं पश्चिम मे नौकरी करने जाऊँगा। इसीलिए तुम्हारा मन ऐसा हो गया है।' यह कहकर उमाप्रसाद ने पत्नी को और भी नजदीक खीच लिया।

दया न एक दीघ निश्वास छोडकर कहा—"मुझे समझ मे नहीं आता। ऐसा लगता है जैसे अब तुमसे मुलाकात नहीं होगी।"

बाहर चादनी बिलकुल फीकी पड गई थी। पत्नी की बात सुनकर उमाप्रसाद का चेहरा भी फीका पड गया।

बडी दर तक दोना खडे रहे। चाद डूब गया। पेड पौधे अँधेरे म छिप गय। खिडकी बन्द करके दोना बिछौने पर लौट आये।

बीच बीच म एक आध पक्षी की आवाज सुनाई पडी। एक दूसरे के सीने से लगकर वे सो गये।

धीर धीरे खिडकी की सध म से प्रभात का प्रकाश कमरे में आने लगा। तब भी दोना नीद में डूबे हुए थे।

सहसा बाहर से उमाप्रसाद के पिता ने आवाज दी—"उमा!"

पहले पहल दया की नीद खुली। उसन झकझोरकर उमा को जगा दिया।

कालीकिंकर ने फिर आवाज दी—"उमा।" उनकी आवाज कुछ काप रही थी, मानो वह बदल गई हो। यह उ ही का कठस्वर है यह बडी मुश्किल से समझ मे आया।

इतने सवेरे पिता जी तो कभी बुलाते नही, और आज उनकी आवाज ऐसी कैसे है ? तो क्या सचमुच लल्ला को कुछ हो ?आ गया है ? उमाप्रसाद ने उठकर चटपट दरवाजा खोल दिया।

उसने देखा कि पिता जी रक्तवर्ण का कौपेय वस्त्र पहन हैं, कधे पर नामावली का उत्तरीय है गले म रुद्राक्ष की माला है। यह क्या ? इतने सवेरे उनका पूजा का भेष क्या ? और दिन तो गगा स्नान करन के बाद वे पूजा के वस्त्र पहनते हैं। मुहूर्त भर म ये विचार उमाप्रसाद के मस्तिष्क म उठ खडे हुए।

दरवाजा खोलते ही कालीकिंकर ने पुत्र से पूछा—"बेटा, छोटी बहू कहाँ है ?'

स्वर पहले की तरह काप रहा था। उमाप्रसाद ने कमरे मे चारो तरफ देखा। दया बिछौना छोडकर कुछ दूरी पर गुमसुम खडी थी।

कालीकिंकर ने भी उसी तरफ देखा। बहू को देखते ही, पास आकर उसके चरणो मे साष्टाग नमस्कार किया।

उमाप्रसाद विस्मय के मारे भौचक्का हो गया। दयामयी ससुर के इस अद्भुत आचरण को देखकर चुपचाप निस्पद खडी रही।

प्रणाम करने के बाद कालीकिंकर बोले—"माँ, मेरा जन्म सार्थक हो गया। लेकिन इतने दिन क्यो नही बताया था ?"

उमाप्रसाद बोला—"पिता जी पिता जी।"

कालीकिंकर बोले—"बेटा इन्ह प्रणाम करो।"

उमाप्रसाद बोला—"पिता जी, आप पागल तो नही हो गये ?"

"पागल नही हुआ बेटा, इतने दिन पागलपन करता रहा। आज आरोग्य लाभ हुआ है, वह भी मा की कृपा से।"

उमाप्रसाद अपने पिता की बात का कुछ भी अर्थ नही समझ सका। बोला—"पिता जी, आप क्या कहते हैं ?"

कालीकिंकर बोले—"बेटा मेरा बड़ा सौभाग्य है। जिस कुल मे पैदा हुआ हूँ वह पवित्र हो गया। बाल्यकाल मे काली का मन्त्र लिया था। इतने दिनो तक जो साधना, जो आराधना करता रहा, वह निष्फल नहीं गई। जगन्मयी माता कृपा करके छोटी बहू के रूप मे हमारे घर मे स्वय आई हैं। पिछली रात स्वप्न मे मुझे यही आदेश मिला है। मेरा जीवन सफल हो गया।'

× × ×

दयामयी मानवी थी—सहसा देवीत्व स अभिषिक्त हो उठी।

इस घटना के बाद तीन दिन बीत गये हैं। इन तीन दिनो मे यह खबर दूर दूर फैल गई है। आस पास के बहुत से गाँवो से अनेक लोग आकर प्रसिद्ध शक्ति जमीदार कालीकिंकर राय के घर में दयामयी रूपिणी आद्याशक्ति के दर्शन कर गये हैं।

दयामयी की यथारीति पूजा शुरू हो गई है। धूप दीप जलाकर, शख घटा बजाकर, षोडशोपचार से उसकी पूजा हो रही है। इन थोड़े से दिनों मे दयामयी के सामने कई बकरो की बलि दी जा चुकी है।

लेकिन इन तीन दिनो मे देवता की पूजा पाकर भी दयामयी रोती रही है। आहार निद्रा एक तरह से त्याग ही दी है, यही कहना ठीक होगा। इस आकस्मिक अद्भुत घटना ने उसे इस प्रकार अभिभूत और परेशान कर डाला है कि वह दो दिन पहले इस घर की बहू थी, ससुर और जेठ के सामने बाहर नहीं निकलती थी, ये सब बातें भूल गई है। अब उसके मुह पर घूघट नही है हर किसी की तरफ शून्य दृष्टि से पगली की तरह देखती रहती है। उसका कठस्वर अत्य त

मृदु हो गया है, रक्तवर्ण दोनों आँखें फूल उठी हैं, वेश भूषा भी ठीक-ठाक नहीं है।

दो पहर रात बीत चुकी है। पूजा के कमरे में एक कोने में धूप-दीप धीमे धीमे जल रहे हैं। मोटे कम्बल के बिछौने पर रेशमी कपड़े की चादर है, उसी पर दयामयी सो रही है। शरीर पर एक मोटा शाल है। दरवाजा बन्द भर था, कुंडा नहीं लगा हुआ था। बहुत धीरे धीरे वह दरवाजा खोलने लगा। चोर की तरह सावधानी से उमाप्रसाद ने कमरे में प्रवेश किया। दरवाजा बन्द करके कुंडा लगा दिया। उमाप्रसाद दयामयी के बिछौने पर जाकर बैठा। उस दिन की उषा काल के समय की घटना के बाद स्त्री के साथ उसकी एकांत में यह पहली मुलाकात थी।

दयामयी जाग रही थी। स्वामी को देखकर वह उठ बैठी। उमाप्रसाद बोला—"दया, यह क्या हो गया ?"

आह् आज तीन दिन के बाद दया ने स्वामी के मुह से एक स्नेह-सनी बात सुनी थी। इन तीन दिनों में भक्तों के मां मां संबोधन से उसका हृदय मरुभूमि की तरह सूख गया था।

स्वामी के मुह से निकले हुए इस दुलार के शब्द ने उसके प्राणों में मानो अकस्मात् सुधा-वृष्टि कर दी। उसने स्वामी के सीने में अपना मुह छिपा लिया।

उमाप्रसाद ने स्त्री के शरीर पर से शाल हटाकर उसे छाती से लगा लिया और उच्छ्वसित स्वर में बार बार कहने लगा—"दया—दया यह क्या हो गया—यह क्या हो गया ?'

दया निर्वाक थी।

उमाप्रसाद भी कुछ देर तक नीरव रहा। फिर मे बोला—"दया—क्या तुम्हें ऐसा लगता है कि यह [illegible]? क्या तुम [illegible] नहीं हो, तुम देवी हो ?"

अब की बार दया बोली—"नही, मैं तुम्हारी स्त्री के सिवा और कुछ नहा हूँ, मैं तुम्हारी दया के सिवा कुछ नही हूँ—मैं देवी नही हू—मैं काली नही हूँ।"

यह सुनकर उमाप्रसाद ने आग्रह के साथ स्त्री का मुह चूम लिया। बोला—'दया, ता चलो हम लोग यहाँ स भाग जायें। एमे किसी दूर देश म जाकर रहें जहाँ किसी को हमारा पता न लगे।"

दया वाली—"हाँ चलो। लेकिन कैसे जाओगे ?"

उमाप्रसाद—"यह सब मैं ठीक कर लूँगा, लेकिन कुछ समय लगेगा।

दया बोली—"कब ? कब ? जल्दी करो—नही तो ज्यादा दिन मैं नही बचूगी। मेरे प्राण होठो तक आ गय हैं। अगर मृत्यु नही हुइ ता मैं पागल हो जाऊँगी।"

उमाप्रसाद बोला—"नही दया—तुम कुछ चिंता मत करो। सात दिन तक तुम धीरज रखो। आज शनिवार है। आगामी शनिवार को मैं फिर तुम्हारे पास आऊँगा—तुम्ह लेकर घर से निकल भागूगा। ये सात दिन तुम धीरज रखकर काट दा मेरी लक्ष्मी !"

दया बोली—'अच्छा !"

उमाप्रसाद बोला—"अच्छा तो अब चलता हूँ। कोई आ न जाय।'—इतना कहकर उसने पत्नी का गाढ आलिंगन करके विदा ली।

दूसर दिन सुबह, जब दयामयी की पूजा समाप्त होने को आई तभी गाँव का एक अस्सी वप का बूढा लाठी का सहारा लिये आ उपस्थित हुआ। उसकी कोटरगत आँखा से झर झर आँसुओ की धारा वह रही थी। आते ही दयामयी को देखकर गले मे दुपट्टा डालकर उसके सामने घुटन टककर हाथ जोडकर कहने लगा—'माँ, मैं हमशा से तुम्हारी पूजा करता रहा हूँ। आज मैं बडी विपत्ति मे पड गया हूँ। आज भक्त की रक्षा करो।'

दयामयी वृद्ध के मुह की तरफ आखे फाड-फाडकर देखती रही। पुरोहित बोले—"क्यो दादा, तुम्ह क्या हो गया ?"

वृद्ध बोला—"मेरा नाती पिछले कई दिनो से ज्वर मे पडा हुआ है। आज सुबह वैद्यराज ने जवाब दे दिया है। वह अगर नही बचा तो मेर वश का लोप हो जायगा, मेरे घर मे दीया जलाने वाला कोई नही रहगा। इसीलिये मा से उसके प्राणो की भिक्षा मागने आया हूँ।"

कालीकिंकर चडीपाठ कर रहे थे। वे बूढे के दुख से अत्यन्त दुखित होकर दयामयी के मुह की तरफ देखकर बोले—"माँ, बूढे के नाती का बचा ला माँ।"—कहकर वे बूढे से बोले—"दादा, अपने नाती को लाकर मा के पैरो म डाल दो, फिर यम के बाप की भी ताकत नही जो उसे यहाँ से ले जाय।"

यह सुनकर बूढे को बडा भरोसा हुआ। वह लाठी का सहारा लेकर घर की तरफ भागा।

घट भर के बाद विधवा पुत्रवधू की गोद मे नाती को लिये बूढा फिर लौट आया। दयामयी के पैरो मे बिछौना करके मृतप्राय बालक को सुला दिया। बीच-बीच म चरणामृत के पात्र स कुशी द्वारा थोडा-थोडा चरणामृत लेकर पुरोहित उसके मुह मे दने लगे।

वालक की विधवा माता दयामयी की सहेली थी। उसका व्यथा कातर मुह देखकर दयामयी का हृदय व्यथित हो उठा। वालक की तरफ दखकर दयामयी की आँखो म पानी भर आया। वह एक मन से देवता से प्राथना करने लगी—"हे भगवान्, मैं देवता होऊँ, काली होऊँ, मनुष्य होऊँ, जो भी होऊँ—इस बालक को बचा लो भगवान्।"

दयामयी की आँखा मे आसू देखकर सब लोग बोल उठे—"जय माँ काली, जय माँ दयामयी, माँ को दया आ गई—माँ की आँखो मे आँसू।"

कालीकिंकर दुगुनी भक्ति से चडीपाठ करने लगे। ज्यो

समय बीतने लगा, बालक की अवस्था उत्तरोत्तर उतनी ही अच्छी होने लगी। शाम से पहले सबने अपनी राय जाहिर की कि अब बालक के जीवन के बारे में कोई आशंका नहीं है, खुशी से घर भेज दिया जाय।

दयामयी के देवी होने का संवाद जितना जल्दी चारों तरफ फैल गया था, उनकी कृपा से मृतप्राय बालक की प्राणरक्षा का संवाद और भी जल्दी चारों तरफ फैल गया। दूसरे दिन सुबह ही एक और व्यक्ति आकर दयामयी के चरणों में निवेदन करने लगा कि उसकी कन्या आज तीन दिन से प्रसव वेदना के मारे दुःख भोग रही है—शायद बचेगी नहीं। कालीकिंकर बोले—"उसके लिए चिंता क्या करते हो? माँ का चरणामृत ले जाकर लड़की को पिला दो। अभी अच्छी हो जायगी।'

वह आँखों से आँसू बरसाता हुआ दयामयी के चरणामृत का पात्र सिर पर रखकर ले गया। पहर बीतते न बीतते खबर आई कि लड़की ने चरणामृत पीते ही निरापद एक राजपुत्र के समान सुंदर सुलक्षण पुत्र को जन्म दिया है।

× × ×

आज शनिवार है। आज उमाप्रसाद अपनी पत्नी को लेकर चुपचाप पलायन करेगा। उसने सारा आयोजन कर लिया है। रुपये भी जमा कर लिये हैं। मुर्शिदाबाद राजमहल या वर्धमान ऐसे किसी पास के प्रसिद्ध शहर में वह नहीं जायगा—जाने पर पकड़े जाने की संभावना है। नाव से पश्चिम की तरफ जायगा। बड़ी दूर जायगा—कहाँ जायगा, यह अभी तक ठीक नहीं है। या तो भागलपुर, नहीं तो मुंगेर। वहाँ जाकर नौकरी की चेष्टा करेगा। राह खर्च के लिये उसके पास रुपया है। उसकी स्त्री के शरीर पर जो गहने हैं उन्हें बेच देने पर कम से कम दो साल दोनों का रोटी-कपड़े का खर्च निकल सकता

है। दो साल म भी क्या उसे नौकरी नही मिलेगी। जरूर मिल जायगी। प्रयत्न करने पर क्या चीज असाध्य है?

इसी प्रकार नाना चिताओ मे उमाप्रसाद ने दिन बिता दिया। धीरे-धीरे शाम हुई। आज वह दयामयी की आरती देखेगा। एक दिन भी तो उसकी आरती नहीं देखी थी। जब शख और घटे की ध्वनि से चडीमडप गूज उठता है, पूजा शरू हो जाती है, तब उमाप्रसाद घर छोडकर गाव के बाहर भाग जाता है। आज दयामयी का अतिम आरती है, आज वह भी देखेगा। देखेगा और मन ही-मन हँसेगा। कल सुबह जब पुरोहित सबसे पहले आकर देखेंगे कि देवी अतर्धान हो गई है तब उनकी कैसी अवस्था होगी, इसी बात की उमाप्रसाद कल्पना करने लगा।

दो पहर रात बीत चुकी थी। घर के सब लोग सो रहे थे। चोर की तरह उमाप्रसाद ने अपनी शय्या छोडी। अँधेरे म धीरे-धीरे पूजा के कमरे की तरफ आगे बढा। धीरे-धीरे दरवाजा खोलकर भीतर प्रवेश किया। कोने मे घी का दीया उसी तरह टिमटिमाता जल रहा है। दयामयी के बिछौने पर उमाप्रसाद जाकर बैठ गया। दयामयी सो रही थी।

पहले तो उमाप्रसाद ने स्नेह से दयामयी का मुख चुबन किया। फिर झकझोर कर उसे उठा दिया। नीद टूटते ही दयामयी हडबडाकर बिछौने पर उठ बैठी।

उमाप्रसाद बोला—"दया इतनी नींद? उठो, चलो।"

दया विस्मित की तरह बोली—"कहाँ?"

'कहाँ?—जाने के समय पूछ रही हो कहाँ—चलो, आज रात को नाव से हम लोग पश्चिम की तरफ चले जायँ।"

दया कुछ देर तक चुपचाप सोचती रही।

उमाप्रसाद बोला—"उठो, उठो, अब रास्ते मे सोचना। सब कुछ ठीक-ठाक कर लिया है। चलो चलो।"

यह कहकर उमाप्रसाद ने स्त्री का हाथ पकडा। दया ने सहसा हाथ छुडाकर कहा—"मुझे तुम स्त्री रूप मे अब मत छुओ। मैं देवी नही बल्कि तुम्हारी स्त्री हूँ, यह ठीक नही कह सकती।'

यह सुनकर उमाप्रसाद हँसने लगा। स्त्री का गला पकडकर उसका मुख चुबन करने वाला था कि सहसा दयामयी उसके पास से सरककर दूर जा बैठी। बोली—"नही नही, शायद इससे तुम्हारा अकल्याण होगा।"

इस बात से उमाप्रसाद वज्राहत हो उठा। बोला—"दया, तुम भी पागल हो गई।'

दया बोली—"तो इतने लोगो का रोग कैसे अच्छा हो गया। तो क्या देश भर के लोग सब पागल हैं।"

उमाप्रसाद न बहुत समझाया। बहुत अनुनय की। बहुत रोया।

दयामयी के मुह म सिफ वही एक बात थी—"नही, नही, तुम्हारा अकल्याण होगा। शायद मैं तुम्हारी स्त्री नही हूँ, मैं देवी हूँ।"

अत म उमाप्रसाद बोला—"तुम देवी होती तो ऐसी पाषाणी नही होती। इसी बात पर तुम्हारा मन अचल अटल हो गया है ? '

दयामयी अब रोती रोती बोली—"तुम मुझे समझ नही पाये।'

उमाप्रसाद दयामयी की शय्या से उठकर कुछ दर तक पागल की तरह उस कमरे मे अस्थिर भाव से टहलने लगा। बाद मे हठात दयामयी के पास आकर बोला—'दया मेरे साथ तुम्हारा विवाह हुआ था ?"

दया बोली—"हुआ था।'

'तुम अगर देवी हो, तुम अगर काली हो, तब मैं तो महादेव हुआ, नही तो तुम्हारे साथ मेरा विवाह कैसे होता ?"

इस बात का दया क्या उत्तर द। वह चुप रही।

उमाप्रसाद ने फिर कहना शुरू किया—'तुम अगर आद्याशक्ति

भगवती हो तो नरलोक में किसकी ताकत है जो तुमसे विवाह करे ? मैंने तुमसे विवाह किया है, इतने दिनों तक मैं तुम्हारे स्वामी के आसन पर अधिष्ठित रहा हूँ, इसीसे यह सिद्ध होता है कि मैं भी मनुष्य नहीं हूँ—मैं भी देवता हूँ, मैं खुद महेश्वर हूँ !"

दयामयी बोली—"अगर यही सच हो, तो मैं तुम्हारी स्त्री हूँ। देवी होऊँ चाहे मनुष्य, पर मैं तुम्हारी स्त्री हूँ।"

यह सुनकर उमाप्रसाद को मानो स्वर्ग मिल गया। स्त्री को सीने से लगा लिया। बोला—"चलो, तब हम लोग चलें। यहां जितने दिन रहेंगे उतने दिन तुम्हारे हमारे बीच विच्छेद रहेगा।"

दयामयी बोली—"अच्छा तो चलो।"

थोड़ी दूर पैदल चलने के बाद गंगा के किनारे नाव में चढ़ना था। लेकिन कुछ दूर जाकर दया सहसा ठहर गई और बोली—"मैं नहीं जाऊँगी।" इस बार उसका स्वर अत्यंत दृढ़ था।

उमाप्रसाद ने फिर से अनुनय करना शुरू किया। लेकिन किसी भी तरह कुछ लाभ नहीं हुआ।

दया बोली—"मैं अगर देवी हूँ, तुम अगर मेरे स्वामी महेश्वर हो, तो दोनों ही यहां क्यों न रहें, दोनों ही पूजा स्वीकार करें, भागें क्या ? इतने लोगों की भक्ति को क्या ठेस पहुँचायें ? मैं नहीं जाऊँगी, चलो लौट चलें।"

उमाप्रसाद मर्माहत होकर बोला—"तुम अकेली लौट जाओ, मैं नहीं जाऊँगा।"

यही हुआ। दया अकेली देवीत्व के आसन पर आ विराजी। उमाप्रसाद उसी रात्रि के अंधकार में गायब हो गया। दूसरे दिन उसका कोई पता नहीं लगा।

दयामयी के देवीत्व पर सभी का विश्वास था, केवल विश्वास नहीं था तो उनकी बड़ी बहू हरसुन्दरी—लल्ला की मां का। पहले

दो चार दिन तक बडी बहू ही दयामयी के लिये शांति का साधन थी। पहले-पहल जब खुद दयामयी ही विश्वास करना नही चाहती थी कि वह देवी है, तब वह एक दिन बडी बहू के पास जाकर रोने लगी थी—'दीदी, मेरा यह क्या हो गया ?" वह बोली—"क्या कहू बहन ससुर जी पागल हो गये हैं। बूढी उमर मे अक्ल सठिया गई है।'

उमाप्रसाद के लापता होने के बाद दो सप्ताह बीत गये। तीसरे सप्ताह लल्ला को बुखार चढ आया। दिन-पर दिन लल्ला सूखने लगा।

वैद्य आया, लेकिन कालीकिंकर ने उसे चिकित्सा नही करने दी। बोले—"मेरे घर मे स्वय माँ का अधिष्ठान है, कितने दु साध्य रोग मा के चरणामृत पान करने से ठीक हो गये, अब क्या मेरे घर म रोग होने पर वैद्य आकर चिकित्सा करेगा ?'

बडी बहू अपने पति ताराप्रसाद के पास जाकर रोने लगी—"अजी, छोटे को किसी वैद्य को दिखाओ, नही तो मेरा छोटा नही बचेगा। वह राक्षसी डायन मेरे छोटे को नही बचा सकेगी। उसकी क्या ताकत है।"

ताराप्रसाद बाप का भक्त था। पिता के विश्वास, पिता के विधान, इन सब पर उसका वेद की तरह विश्वास था। वह स्त्री से बोला—"खबरदार, यह बात मुह पर भी मत लाना, नही तो बालक का अकल्याण होगा। माँ भगवती जो करेंगी वही ठीक होगा।"

लेकिन बडी बहू के प्रतिदिन के अनुनय विनय और रुदन से ससुर न एक दिन गलवस्त्र होकर दया से पूछा—"माँ, लल्ला को बुखार है, उसे वैद्य को दिखाने की जरूरत है क्या ?

दयामयी बोली—"नहा, मैं ही उसे ठीक कर दूँगी।"

कालीकिंकर निश्चिन्त हो गये। ताराप्रसाद भी निश्चिन्त हो गय।

लल्ला की मा ने एक दिन एक भरोसे की नौकरानी को वैद्यराज के पास भेज दिया—रोग का सारा विवरण कह दिया। औषधि की जरूरत है यह भी कह दिया।

वैद्यराज यह सुनकर दांतो तले जीभ दबाकर बोले—"मा से बोलो, जब स्वयं शक्ति ने कहा है कि वे ही बालक को ठीक कर देंगी, तो मैं दवा देकर पाप का भागी क्यों होऊँ।"

जिसे भी देखती उसीको लल्ला की माँ रोकर कहती—"अरे कोई दवा बता दो, मेरा छोटा नहीं बचेगा।"

सभी कहते—"अरे ऐसा मत कहो, तुम्हें किस बात की चिन्ता है? तुम्हारे घर मे स्वयं आद्याशक्ति विराज रही हैं।"

लल्ला की बीमारी बराबर बढ़ती गई। दया बोली—"लल्ला को लाकर मेरी गोद म रख दो।"

लल्ला को गोद मे लेकर दया दिन भर बैठी रही। लल्ला बहुत-कुछ ठीक रहा। लेकिन रात को उसकी बीमारी फिर बढ़ गई।

दयामयी ने एक मन एक प्राण होकर लल्ला को कितना आशीर्वाद दिया, उसके शरीर पर हाथ फेरा।

लेकिन किसी भी तरह वह नहीं बच सका।

जब लल्ला के मरने की खबर सारे घर म फैल गई तब तारा प्रसाद अधीर होकर भागता हुआ आया। दयामयी से बोला—"राक्षसी, लल्ला को ले लिया। किसी भी तरह उस पर से अपना मोह दूर नहीं कर सकी।'

लल्ला की माँ पहले तो शोक के मारे अत्यन्त विह्वल हो उठी। जब कुछ स्वस्थ हुई तो दयामयी को जो मुह मे आया सो गाली देने लगीं। बोलीं—"वह देवी नही है। वह तो डायन है। देवी कभी बालक को खाती है?"

कालीकिंकर छलछल नेत्रो से दया की तरफ देखकर बोले—"मां, लल्ला को लौटा दे। अभी देह नष्ट नही हुई है। लौटा दे मा, लौटा दे।"

दयामयी भी रान लगी। मन मे यमराज को उद्देश्य करके आज्ञा दी—"इसी समय लल्ला की आत्मा लल्ला के शरीर मे लौटा दे।'

इससे जब कुछ नही हुआ तो उसने विनती की।

आद्याशक्ति की विनती से भी यमराज ने लल्ला के प्राण नही लौटाय।

तब अपने देवीत्व पर दया को अविश्वास हो गया।

आज उसकी पूजा बन्द ही रही। दिन भर मे कोई उसके पास नही आया। दया अकेली बैठी हुइ दिन भर चिंता करती रही।

शाम हो गई। आरती का समय हुआ। जैस तैसे करके आरती हुई।

दूसरे दिन कालीकिंकर ने पूजा के कमरे मे जाकर देखा—सर्वनाश!—पहनने की साडी को रस्सी की तरह बाँटकर छत की शहतीर से लटकाकर देवी न आत्महत्या कर ली है।

—x—

बलवान जँवाई

प्रथम परिच्छेद

नलिनी बाबू अलीपुर के पोस्ट मास्टर हैं। दिन अस्त हो रहा है इसलिये घर आने के लिए छटपटा रह हैं। आश्विन का महीना है— सामने पूजा आ रही है। नलिनी बाबू ने छुट्टी की दरखास्त दी थी लेकिन अभी तक हड आफिस से कोई हुक्म नही आया। अगर आज पाच बजे के बीच भी हुक्म आ जाय तो आज ही मेल से इलाहाबाद रवाना हा जावेंगे। इलाहाबाद मे उनकी ससुराल है। नलिनी बाबू पहली ही बार ससुराल जा रहे हैं। चीज वस्त खरीदकर, ट्रक पेटी सजाकर तैयार बैठे हैं, लेकिन अभी तक छुट्टी का हुक्म नही आया है। चार बज गय। सहसा टन् टन् करके टलीफोन की घटी बज उठी। बडी आशा से नलिनी बाबू न टेलीफोन का चोगा उठाया और बोले— "yes ?"

लेकिन अफसोस, छुट्टी का हुक्म नही आया। एक मनी आडर के बारे मे कुछ गडबडी हो गई थी, उसीके बारे मे कुछ पूछ-ताछ थी।

नलिनी हताश हाकर फिर कुर्सी पर जाकर बैठ गये। दो एक छिटपुट काम करने के बाद जेब से एक पत्र निकालकर पढने लगे। पत्र उनकी स्त्री का लिखा हुआ था। इससे पहले भी पत्र कई बार पढ चुके थे, अब फिर पढने लगे—

(एक पक्षी का चित्र था)

नीचे सुनहरी स्याही से लिखा था—

"जाओ पछी जहा हैं मेरे प्राणपति"

प्रियतम,

तुम्हारा सुधासिंचित पत्र पाकर मन और प्राण शीतल हो गये।

नाथ, इतने दिन बाद क्या इस लम्बे विरह का अन्त होगा ! तुम्हा चन्द्र मुख देखने के लिए मेरा चित्त-चकोर उत्कंठित हो रहा है। हमा ब्याह को आज दो साल हो गये हैं, आज तक एक दिन के लिए भी पति सेवा करने का मौका नहीं मिला। छुट्टी मिलने पर शीघ्र चले आना। दुखिनी आशा लगाये बाट जोह रही है। दिनाजपुर से मझली दीदी आज आ गई हैं। कब तक तुम्हारी छुट्टी होगी ? पंचमी के दिन रवाना हो सकोगे क्या ? बहुत क्या लिखूं। याद रखना, भूल मत जाना।

तुम्हारी ही
सरोजिनी

नलिनी बाबू ने पत्र को उलट पुलट कर पढ़ा। अन्त में उसे फिर से जेब में रख लिया।

पांच बजने में अब देर नहीं है। आज भी छुट्टी की कोई सम्भावना नहीं है। नलिनी बाबू ने एक मृदु दीर्घ निश्वास लेकर फिर से काम में मन लगाने का प्रयत्न किया। खैर, आज चतुर्थी है। अगर कल छुट्टी आ जाय तब भी पञ्चमी के दिन रवाना हो सकते हैं।

पांच बजने में जब दो एक मिनट बाकी थे तब फिर टेलीफोन की घंटी बज उठी। नलिनी बाबू ने फिर चोंगे में मुंह लगाकर कहा— 'yes ?'

द्वितीय परिच्छेद

छुट्टी ! छुट्टी ! छुट्टी !—नलिनी बाबू को दो सप्ताह की छुट्टी मिल गई है। डिप्टी पोस्ट-मास्टर को चार्ज देकर आज ही रात को नलिनी बाबू रवाना हो सकेंगे।

सरोजिनी ने पत्र में लिखा है कि दिनाजपुर से मझली दीदी आ गई हैं। इनके आने के बारे में नलिनी बाबू पहले ही से जानते थे, और

खासकर इसीलिये इस बार इलाहाबाद जाने का उनका इतना आग्रह था। दिनाजपुर की मझली दीदी पर उनको विशेष गुस्सा है—इसी-लिए उनसे एक बार मिलने के लिए वे बहुत व्यग्र हैं। लेकिन यह किस्सा क्या है, यह जानने के लिए मझली दीदी का कुछ परिचय और नलिनी के विवाह के दिन का कुछ इतिहास जानना जरूरी है।

मझली दीदी के पति बडे ही साहबी ठाठ के व्यक्ति हैं—वे दिनाजपुर के डिप्टी मजिस्ट्रेट हैं। मझली दीदी के नाम का उल्लेख करते ही सब लोग उन्हें अनायास पहचान सकेंगे। श्रीमती कुंजबाला देवी की लिखी हुई ओजस्वी स्वदेशी कविता वर्तमान समय के मासिक पत्रों में किसने नहीं पढी है? सौभाग्य से फुलर साहब बंगला नहीं जानते, जानते होते तो अब तक कुंजबाला के स्वामी की नौकरी को लेकर काफी खीचतान होती।

कुंजबाला विदुषी है, इसलिए उनकी वाणी बडी पैनी है। वे अंग्रेजी पढी लिखी हैं इसलिये उनका कार्य कलाप सब विषयों में साधा-रण वर्ग ललनाओं से भिन्न है। उदाहरण के रूप में कह सकते हैं कि एक बार उनका एक देवर एक शीशी इत्र की खरीद लाया था। देखकर कुंजबाला ने पूछा—"यह किसके लिये लाया है?'

'खुद लगाऊँगा।'

"हट—ऐसी चीज तो सिर्फ स्त्रियां और बाबू लोग लगाते हैं—पुरुष कभी इत्र नहीं लगाते।"

छोटा देवर भाभी का तीक्ष्ण विद्रूप न समझकर भोले आदमी की तरह बोला—'क्यों? बाबू क्या पुरुष नहीं होते?'

नलिनी बाबू का जब विवाह हुआ था, तब उनका चेहरा भी खासा गोल मोल छैला की तरह का था। दोनो गाल फूले फूले थे दोनो हाथ मक्खन की तरह थे, कलाइयो की हड्डी कोमल मांस में अच्छी तरह छिपी हुई थी। भद्र घराने की शीलता के योग्य न होने पर भी

विवाह के दिन कुजबाला नलिनी की देह के प्रति विद्रूप का तीक्ष्ण बाण छोडन का प्रलोभन सवरण नही कर सकी। रवीन्द्रनाथ की कविता को कुछ अदल बदल करके वह बोली थी

नलिनी जैसा चेहरा जिसका
नलिनी जिसका नाम
कोमल कामल कोमल अति
जैसा कोमल नाम
जसा कोमल वैसा वेकल
तैसा ही आलस धाम
नलिनी जैसा चेहरा जिसका
नलिनी जिसका नाम।

एक श्लेष वाक्य मनुष्य को जिस प्रकार सचेतन करता है, दस उपदेश वचनो से भी वैसा नही होता। वही श्लेष वाक्य अगर किसी सुन्दरी के मुह से निकला हो और वह सु दरी अगर रिश्ते मे साली हो तो एक श्लेष वाक्य का फल सौगुना साघातिक हो उठता है।

विवाह के बाद नलिनी बाबू कलकत्ता लौट आये। उनके ससुर भी सपरिवार अपने कमस्थान इलाहाबाद चले गये। लेकिन विदुषी साली के व्यग को नलिनी किसी भी तरह नही भूल सका।

एक दिन शाम को पोस्ट आफिस से घर लौटकर आराम कुर्सी पर बैठे नलिनी बाबू धूमपान कर रहे थे। इसी समय उनके मन म एक मतलब की बात आई। अरे, मैं चाहूँ तो तुरन्त इस कलक को मिटा सकता हूँ, और शरीर को पुरुषोचित बना सकता हूँ। दूसरे दिन बाजार से सैंडो के डबल वगैरह खरीद लाये और घर म बदस्तूर व्यायाम करना शुरू कर दिया। रोज की अपनी खाद्य-सूची म से मिठाई दूध, घी और चावल यथासभव कम करके उसकी जगह रोटी, मास, अडा वगैरह जोड दिया। शुरू-शुरू मे पाँच सात मिनट से ज्यादा व्यायाम नही कर

पाते थे—थक जाते थे। अभ्यास करते-करते धीरे धीरे सुबह-शाम आधा घंटा नियमित व्यायाम करने लगे।

साल भर मे इस प्रकार उनके अंग प्रत्यंग खूब मजबूत हो गये। तब अपना चेहरा और भी कठोर करने के लिये उन्होने दाढी बनाना बन्द कर दिया। एक दो शिकारी मित्रो के साथ मिलकर बीच-बीच मे गावो मे जाकर हस, जगली सूअर आदि का शिकार करना शुरू कर दिया।

इस प्रकार दो साल बीत गये। अब नलिनी वह नही रहा। अब उसके कपोलो पर चर्बी नही है, ठोडी की नोक पतली पड गई है, हाथ-परो की हड्डी मजबूत और मोटी हो गई है, परिणामत वह अपने नाम के बिलकुल अयोग्य हो गया है। ऐसी हालत मे एक बार कुजबाला के साथ मुलाकात करना जरूरी है। अफसोस कि नाम परिवर्तन करने का कोई उपाय होता। नलिनी बाबू ने अपने मन मे सोच रखा है कि उनके पुत्र होने पर उसका नाम खूब भीषण रखगे—क्या नाम रखेंगे यह अभी तक स्थिर नही कर सके हैं।

तृतीय परिच्छेद

दूसरे दिन दो बजे नलिनी बाबू इलाहाबाद स्टेशन पर उतरे। वे पाजामा और लम्बी शेरवानी पहने थे, सिर पर पगडी थी। हाथ मे एक बडी लकडी थी। असबाब के साथ एक बदूक की पेटी थी। उनकी इच्छा थी कि छुट्टी मे कुछ शिकार भी किया जाय।

स्टेशन पर उतरकर चारो तरफ देखा—अरे, कोई लेने नही आया। कल रवाना होने से पहले उन्होने ससुर के नाम चार आने का एक टेलीग्राम भेजा था, वह क्या पहुँचा नही? कुली को बुलाकर माल-असबाब लेकर नलिनी बाबू स्टेशन के बाहर आये। एक तांगेवाले से पूछा—"महेन्द्र बाबू वकील का मकान जानता है?"

तांगेवाला बोला—"हां बाबू, आइये।"

"चलो"—कहकर नलिनी तांगे पर सवार हो गये।

इससे पहले नलिनी बाबू इलाहाबाद मे कभी नही आये थे। इतना ही नही, उन्होंने पहली ही बार बगाल से बाहर कदम रखा था। पछाँह के शहर का नया दृश्य देखते देखते वे जा रहे थे।

आध घंटे बाद तांगा एक वृहद् कपाउण्ड के मकान मे पहुँचा। सामने ही बैठक थी, बरामदे मे एक नौ या दस साल की लडकी खेल रही थी। बरामदे के नीचे बाईं तरफ एक कुआ था, वहाँ एक पछाँह का नौकर बैठा जोर जोर से कड़ाही माज रहा था।

तांगे से उतरकर उसी नौकर को आवाज देकर नलिनी बाबू बोले— क्या यही महेन्द्र बाबू वकील का मकान है?"

"हाँ बाबू।"

"बाबू हैं?"

"नही। वे केदार बाबू के मकान पर शतरज खेलने गये हैं।"

"अच्छा—भीतर खबर दो कि जँवाई बाबू आये हैं।"

यह सुनते ही जो लडकी बरामदे म खेल रही थी वह भागकर भीतर गई और आसमान विदीर्ण करती हुई बोली—"सुनो, हमारे जँवाई बाबू आये हैं।"

नौकर का नाम रामशरण है। यह सुनकर वह दाँत फैलाकर बोला—"अरे जँवाई बाबू?"—कहकर उसने चटपट हाथ धो डाले और नलिनी को एक लम्बा सलाम किया।

इसके बाद रामशरण ने तांगे से सामान उतार डाला। इधर घर मे कई बालक-बालिकायें आकर उचक उचककर जँवाई को देखने लगे।

रामशरण ने नलिनी बाबू को बैठक मे ले जाकर बैठाया। और बोला—"बाबू स्नान करोगे क्या?"

नलिनी बोला—"हाँ स्नान करूँगा। तुम गुसलखाने मे पानी रखो।"

इसी समय एक बगाली नौकरानी आकर नलिनी को प्रणाम करके बोली—"अच्छे तो थे ?"

"हा अच्छा ही था। तुम लोग कैसी हो ?"

हँसकर नौकरानी बोली—"जैसा रखते हैं वैसी हूँ। छह महीने स मैं इस घर मे नौकरी कर रही हूँ—दीदी से रोज पूछती हूँ—जँवाइ बाबू कब आयेंगे, जँवाई बाबू कब आयेंगे। चलो इतन दिन बाद आपको हमारा खयाल आया, यही ठीक है। आपने स्नान कर लिया। माँ पूछ रही हैं कि इस समय जलपान करोगे या भात चढा दिया जाय ?"

नलिनी मुगलसराय स्टेशन पर केलनर की कृपा से नाश्ता करके आया था। वह बोला—"इस समय भात चढाने की जरूरत नही—कुछ जलपान कर लूगा।"

नौकरानी बोली—"अच्छा तो स्नान कर डालो। बाद म आपको मैं एक नई चीज दिखाऊँगी। मेरी बखशीश के लिए कौन सा गहना लाये हैं मो बाहर निकालकर रख लो'—इतना कहकर नौकरानी नलिनी की तरफ रमणी सुलभ कटाक्षपात करके धीरे से हँस दी।

रामशरण बोला—"तू बखशीश लेगी, और मै बखशीश नही लूगा ?"

नलिनी इसका कुछ अर्थ नही समझ सका, केवल गम्भीरतापूर्वक गर्दन हिलाने लगा।

स्नान समाप्त करके लौटकर नलिनी ने देखा कि कितने ही बालक बालिकाओ न उसकी बदूक की पेटी खोलकर बन्दूक बाहर निकाल ली है। सब लोग मिलकर उसके भिन्न भिन्न अशो को जोडने का प्रयत्न कर रहे हैं।

उन लोगा के हाथ से बन्दूक लेकर नलिनी ने सावधानी से कहीं और रख दी। इसी समय वही नौकरानी आई। उसकी गोद मे कुछ महीना का एक बालक था। उसका मुह अभी अभी धोया गया था, आखा म अभी अभी काजल लगा था और सिर के बालो म सावधानी से कघी की गई थी।

नौकरानी ने बालक को हाथ मे लेकर नचाकर कहा—"देखो जँवाई राजा कैसा सोने का चाद है। मानो राजकुवर हो। लो—एक बार गोद मे लो।'

नलिनी कभी भी छोटे बालको को पसद नहीं करता। फिर भी भद्रता की खातिर बोला—"वाह, बालक तो खूब है।"—इतना कहकर उसे गोद मे ले लिया।

नौकरानी बोली—"खूब कहने भर से काम नही चलेगा। मुह दिखाई का क्या दोगे?'

नलिनी ने जेब म से दो रुपये निकालकर बालक की बन्द मुट्ठी म रख दिय।

कलकत्ता की नौकरानी उसे देखते ही गाल पर हाथ रखकर बोली, "ओ दैया! यह क्या? लोग क्या कहेगे? रुपा देकर सोने के चाद का कोई मुह दखता है?'

वहा खडे हुए बालक-बालिकायें खिलखिलाकर हँस पडे।

अत्यन्त सकुचित होकर कहने को और कोई बात न पाकर नलिनी बोला—"सोना तो लाया नही।" मन ही मन अपनी पत्नी पर भी गुस्सा आया। उसे क्या पत्र मे नलिनी को लिखना नही चाहिए था कि अमुक के बालक हुआ है, उसका मुह देखने के लिए गिन्नी लाना।

नौकरानी बोली—"यह कौन सुनेगा? तब तो आज ही सुनार को बुलाकर सोने के गहने गढवाने का आडर दो। लडके के बाप

या ही हो गये ।" इसका क्या मतलब है ?—तो क्या नलिनी ही लडके का बाप है ?

बालक को नौकरानी की गोद मे लौटाकर डरते डरते नलिनी ने पूछा—"लडका कब हुआ ?"

नौकरानी फिर गाल पर हाथ रखकर बोली—"तुमने तो चौका दिया ? तुम्हारा लडका कब हुआ, यह तुम नही जानते, बाहर के लोगो से पूछ रहे हो ?'

और बालको मे जो दो बालक अपेक्षाकृत उम्र मे बडे थे वे नौकरानी की व्यग्योक्ति सुनकर हँस पडे। छोटे बालक उनकी देखा देखी जोर से हँसने लगे और जमीन पर लोटने लगे।

अभी हाल मे नहाकर आये हुए नलिनी का माथा पसीने से तर हो गया है। मन के विस्मय को मन ही मे रखने की वह प्राणपण से चेष्टा कर रहा है। इस गूढ रहस्य का भेद निकालने की उसमे क्षमता नही है।

इसी समय एक बालिका आकर नलिनी के हाथ मे एक गिलास देकर बोली—' लालाजी, शरबत पीओ।'

नलिनी ने गिलास से मुँह लगाकर देखा कि पानी नमकीन है। उसने गिलास नीचे रख दिया। तब सहसा उसके खयाल म आया कि उस पर जो पिता होने का इलजाम लगाया गया है यह भी जँवाइयो से मजाक करने का एक तरीका होगा। यह मीमासा करके नलिनी का मन कुछ शात हुआ। उसकी कुचित भौहे फिर से सीधी हो गईं।

उसी बैठक के एक कोने मे दरवाजा खुलने की आवाज हुई। दरवाजे का पर्दा हटाकर रामशरण नौकर बोला—"बाबू आइये—जलपान रखा है।"

नलिनी ने देखा, भीतर का एक कमरा दिख रहा है। उठकर वह उस कमरे मे गया। कमरे के बीच मे एक सुदर कार्पेट बिछा

उसके सामने चादी की रकाबी, कटोरी, गिलास म भरे तरह तरह के खाद्य और पेय रखे थे। नलिनी धीरे-धीरे आकर आसन पर बैठ गया और जलपान करन लगा।

इसी समय कमरे के भीतर से पाजेबा की छमछम आवाज सुनाई दी। एक छोटी सी लडकी न दरवाजे से मुह बढाकर कहा—'मझली दीदी आ रही है।'

नलिनी न समझा कुजबाला आ रही है। अपने दाहिने हाथ की आस्तीन उसने अच्छी तरह ऊपर चढा ली। ताकि कुञ्जबाला आकर देखे कि उसके हाथा की कलाई अब गोल नही हैं, मासल नहा हैं, बल्कि वे मजबूत हड्डी और शिराआ की हैं।

पाजेब की आवाज पास ही पास आने लगी।

'कहा लालाजी इतने दिन बाद याद आई?"—कहते-कहते युवती आकर कमर के बीच म खडी हो गइ।

लेकिन सिफ मुहूत भर के लिये। चार आखें होते ही वह महिला एक हाथ लम्बा घूँघट निकालकर तेजी मे उम कमरे से वाहर निकल गई।

नलिनी ने देखा कि वह कुञ्जबाला नही है।

पास के कमरे मे से दो तीन महिलाओं का उत्तेजित कठस्वर नलिनी के कानो म सुनाई दिया—

'क्या री भाग क्या आई?"

'आ दैया, वह तो कोई और है!"

"कोई और है? क्या हमारा शरत नही है?'

"नही, शरत नही है।"

'तब कौन है?'

"मैं क्या जानूँ।'

"यह क्या हो गया? कोई बदमाश है क्या?"

"जैसा लम्बा-चौड़ा चेहरा है, यह देखते हुए तो आश्चय नही होता।'

"हाय दैया, यह क्या हो गया। जँवाई बनकर कौन आ गया है?'

एक बालक की आवाज सुनाई दी—'एक ब ट्रक लेकर आया है।'

"हैं—भैया, कैसा सवनाश है! आ रे रामशरण, रामशरण कहाँ गया? जा जल्दी से बाबू का खबर दे।"

स्त्रिया के पैरो की तेज आवाज सुनाई दी। इसके बाद नलिनी ने और कुछ नही सुना।

इसी बीच पास रखी एक पुस्तको की आलमारी की तरफ नलिनी की नजर गई। उसमे जिल्द बँधी ला रिपार्टें रखी थी। प्रत्येक पुस्तक के नीचे सुनहरी स्याही से लिखा था—एम० एन० घोप।

तब सारी बातें नलिनी के सामने दिन की रोशनी की तरह स्पष्ट हो गइ। उसके ससुर का नाम तो महेन्द्रनाथ बद्यापाध्याय है। य महेन्द्रनाथ घोप हैं। यानी वह भूल से किसी और के मकान पर चढ आया है।

नलिनी ने तब मन ही मन हँसते हुये, निश्चित मन से एक-एक करके जलपान की चीजो के पान खाली कर डाले।

चतुथ परिच्छेद

इधर रामशरण नौकर ऊध्वश्वास भागता हुआ बाबू को खबर करने गया। केदार बाबू वकील के मकान पर छुट्टी के समय अक्सर शतरज खेलने का अड्डा जमता है। इस समय वहाँ बडे महेन्द्र बाबू, छोटे महेन्द्र बाबू (नलिनी के असली ससुर) एव अन्यान्य वकील इकट्ठे हुए हैं।

शतरज चल रही है, इसी समय आँधी की तरह रामशरण कमरे

म श्राया । अपने स्वामी की तरफ देखकर बोला—"बाबू—बाबू—जल्दी घर चलो—"

उसका चेहरा देखकर—डरकर, महेन्द्र घोष बोले—"क्या रे—कोई बीमार सीमार तो नही हो गया ?"

'घर म एक डाकू आया है ।"

यह सुनकर सभी उद्ग्रीव हो उठे । महेन्द्र घोष बोले—"डाकू ? दिन के समय डाकू ?"

रामशरण बोला—"डाकू होगा या बदमाश होगा या पागल होगा, कुछ ठिकाना नही । वह कहता है कि मैं बाबू का दामाद हूँ ।"

यह सुनकर और सब लोग हँसने लगे । लेकिन महेन्द्र घोष ने उत्तेजित स्वर म पूछा—"कब आया ? क्या कर रहा है ?"

यही तीन बजे आया है, एक लाठी लाया है, एक बन्दूक लाया है—अन्दर जाकर जलपान किया है । माईजी वगैरह को बडा डर लग रहा है ।'

'बन्दूक लाया है ? लाठी लाया है ?—हतभागे पाजी सूअर—तू घर किसके जिम्मे छोडकर आ गया ?"—इतना कहकर विक्षिप्त की तरह महेन्द्र बाबू बाहर आये । गाडी तयार थी । छलाँग मारकर गाडी पर चढकर बोले—'जोर से चलाओ ।"

कुछ वकील भी साथ ही साथ बाहर आ गये थे । कोई बोला—'शायद पागल होगा ।' कोई बोला—'नही पागल होता तो बन्दूक क्यो लाता । कोई बदमाश गुडा होगा ।' छोटे महेन्द्र बाबू (नलिनी के ससुर) बोले—'पागल हो चाहे गुडा हो, पकडकर पुलिस के हवाले कर देना ।'

गाडी नक्षत्र वेग से भागी—घर पहुँचकर महेन्द्र बाबू गाडी से उछलकर नीचे उतरे और बोले—"कहाँ ? कौन है ?

इसी समय नलिनी कमरे म से बाहर निकलकर बरामदे मे आकर

खड़ा हुआ। गृहस्वामी को अभिवादन करके बोला—"आप महेन्द्रबाबू हैं? आपसे मुझे एक क्षमा प्रार्थना करनी है।'

नलिनी की भाव भंगी और बातचीत से महेन्द्र बाबू भौंचक्के हो गये। घर पहुँचकर जिस प्रकार के प्रहार का बन्दोबस्त करना उन्होंने सोचा था, उसमें बाधा पड़ गई।

महेन्द्र बाबू ने पूछा—"आप कौन हैं?"

"मेरा नाम नलिनीकांत मुखोपाध्याय है। मैं महेन्द्रनाथ बंद्योपाध्याय का जँवाई हूँ। 'महेन्द्र बाबू वकील का मकान' तांगे वाले से कहा था, वह मुझे यहाँ ले आया। मुझे अपनी गलती अभी-अभी मालूम पड़ी है। अब तक चला जाता। आपको लेने आदमी गया है, [illegible] कर आपसे क्षमा प्रार्थना करके जाऊँगा, यही सोचकर आपकी [illegible] कर रहा हूँ।'

यह सुनकर महेन्द्र घोष का क्रोध पानी हो गया। [illegible] दोनों हाथ अपने हाथ में लेकर हो हो करके वही [illegible]। अन्त में बोले—"आप महेन्द्र के जँवाई हैं? [illegible] महेन्द्र वकील होने से, मुवक्किलों की बीच-बीच में [illegible] है। कभी घर गाँव के किसी वकील ने मेरे [illegible] था, लेकिन मुवक्किल कागज-पत्र लेकर [illegible] पहुँचा। लेकिन जँवाई की गड़बड़ [illegible]।"—[illegible] महेन्द्र घोष अट्टहास कर उठे।

इसके बाद नलिनी को [illegible]। [illegible] नलिनी के लिए एक भाड़े की [illegible]। [illegible] विदा लेकर अपने ससुराल [illegible]।

[illegible]

मे अनेक व्यक्तियो ने तरह-तरह की आश्चर्यजनक बदमाशी की कहानियाँ सुनाइ। कई पागलो की बातें हुईं। अत मे सभा भग हुइ। वकीलगण एक एक करके अपने-अपने घर रवाना हो गय।

महेन्द्र बद्योपाध्याय का मकान शाहगज मुहल्ले मे है। उन्होने घर लौटकर चाय और तबादार हुक्के का हुक्म दिया। आफिस के कमरे मे आरामकुर्सी पर बैठकर वे चाय पीने लगे। नौकर एक बडी चिलम हुक्के पर चढाकर, आग पर धीरे धीरे पखे से हवा करने लगा।

चाय पीना समाप्त होने पर महेन्द्र बाबू ने हुक्के की नलको मुह मे लगाकर आराम से आँखें मीच ली।

कुछ देर इसी प्रकार बीत जाने पर, एक भाडे की गाडी कपाउन्ड मे आई। वकील के मकान मे कितने ही लोग आते जाते रहते हैं। महेन्द्र बाबू जरा भी उत्कठित नही हुए, बल्कि आखें बन्द किये पड रहे।

बाहर से आवाज सुनाई दी, एक अपरिचित कठस्वर सुनाइ दिया— क्या यही महेन्द्र बाबू का मकान है ?"

' हाँ बाबू। '

"खबर दो कि बाबू के जँवाई आये हैं।"

"जवाई" शब्द सुनते ही महेन्द्र बाबू कुर्सी छोडकर उठ बैठे। खिडकी का पर्दा उठाकर देखा—"एक बडी लाठी हाथ मे लिये प्राढील व्यक्ति खडा है, ताँगे वाला ताँगे मे से एक बन्दूक की पेटी बाहर निकाल रहा है।

दखते ही महेन्द्र बाबू चिल्लाकर बाले—"कोई है रे ?"—कहते कहते बाहर बरामदे मे आकर खडे हो गय।

उनकी उग्र मूर्ति देखकर बेचारा नलिनी भौचक्का हो गया। महेन्द्र बाबू दाँत निकालकर ससम स्वर मे बोले—"पाजी बदमाश, भाग यहाँ से। अभी भाग। घूम फिरकर अब मेरे घर पर आया है ? ससुर बनाने को कोई और नहीं मिला ? बदमाश गुडे !'

इसी बीच में अनेक नौकर दरबान वगैरह आ पहुँचे थे।

महेन्द्र बाबू ने हुक्म दिया—"मार के निकाल दो। गर्दन पकड़ के निकाल दो।"

नौकरों ने नलिनी पर आक्रमण करने की तयारी की। यह देखकर नलिनी अपनी बड़ी लाठी सिर के ऊपर घुमाकर बोला—"खबरदार, हम चले जाते हैं। लेकिन जो हमको छुएगा, उसकी हड्डी हम चूर चूर कर डालेंगे।"

नलिनी की उग्र मूर्ति और लाठी देखकर नौकर किंकतव्यविमूढ होकर खड़े रहे।

नलिनी महेन्द्र बाबू को लक्ष्य करके बोला—"आप गलती कर रहे हैं। मैं आपका जँवाई नलिनी हूँ।"

यह सुनकर महेन्द्र बाबू अग्निशर्मा होकर बोले—"बेटा चोर कहीं का! तुम ससुर को पहचानते हो और मैं जँवाई को नहीं पहचानता? मेरे जँवाई का ऐसा गुंडो का सा चेहरा? भागो यहां से—निकलो यहाँ से—नहीं तो अभी पुलिस में दे दूंगा।"

नलिनी ने और कुछ नहीं कहा। तांगे में बैठकर तांगेवाले से कहा—"चलो स्टेशन।"

छठा परिच्छेद

गड़बड़ शांत होने पर, तबीदार हुक्का समाप्त करके महेन्द्र बाबू घर में आये।

उनकी पत्नी उन्हें देखते ही बोली—"शराब तो नहीं पी ली है? जवाई जी को भगा दिया?"

महेन्द्र बाबू गम्भीर स्वर में बोले—"जँवाई किसे कह रही हो? वह तो एक बदमाश था।"

'बदमाश है यह कैसे जाना?"

इसके जवाब म मह द्र बाबू न शतरज खलत समय केदार बाबू के मकान पर जो कुछ सुना था, सब कह दिया।

सुनकर पत्नी बोली—"यह ता ठीक है, लेकिन इससे क्या यह प्रमाणित हो गया कि वह बदमाश था ? दाना के ही एक स नाम हैं—घर भूलकर वहा जा पहुँचना क्या सभव नही है ?"

स्त्री के मुह से यह युक्ति सुनकर मह द्र बाबू कुछ दब-से गये। लाठी और ब दूक देखकर ही वे हठात 'ज्ञान शू य हो गए थे—इन सब बाता का भला बुरा सोचन का अवसर ही नही मिला।

कुछ सोचकर मह द्र बाबू बोले—"अगर वह होता तो खबर देकर आता—हम लोग स्टेशन पर उ हे लेने जाते। बात नही, चीत नही, सहसा कभी जँवाइ पहली बार ससुराल इस तरह आता है क्या ? वह बदमाश था—बदमाश !"

'कैसे जाना कि आने की बात नही थी ? आने की बात ता पक्की थी। पूजा से पहले ही आयग हम लाग तो यह जानते हैं—फिर भी ठीक कब आयेंगे इसकी खबर नही है।'

पिता का मुसीबत म पडा देखकर कु जबाला बाली—"नही वह नलिनी नही है—मैंने उसे दखा है।'

महे द्र बाबू बोले—"तूने देखा है क्या ? बता तो—कहाँ से देखा ?

"जब यह गडबड चल रही थी मने दोमजिले पर जाकर खिडकी म से देखा था। नलिनी तो हमारा माखन का पुतला है। यह तो देखा एक आडील जवान था।

मह द्र बाबू अत्य त आश्वस्त हाकर बोले—"ठीक कहती है। मैंने तो यह बात उसके मुह पर ही कह दी है। मैं क्या अपने जवाई को नही पहचानता ? उसका क्या एमा मिर्जापुरी गुडे जैसा चेहरा है ?

उसका तो खासा बाबुओ-जैसा चेहरा है। ब्याह के समय सिर्फ एक ही दिन देखा है—तो क्या इसमें ऐसी भूल हो सकती है ?"

इस प्रकार बातचीत चल रही थी कि इतने म एक नौकर आकर बोला—"बाबू टेलीग्राम आया है।"

टलीग्राम पढकर महेन्द्र बाबू का चेहरा उतर गया। यह वही नलिनी का भेजा हुआ कल का चार आने वाला टेलीग्राम था।

पत्नी ने पूछा—"क्या खबर है ?'

नितात अपराधी की तरह माथा खुजाते खुजाते महेन्द्र बाबू बाले—"अभी-अभी टेलीग्राम आया है। ऐसा लगता है कि वे जँवाई जी ही थे।"

पत्नी बोली—"तो अब उन्हे लौटाने का क्या उपाय है ?'

"जाऊँ, खुद जाकर देखू। जाते समय ताँग वाले स स्टेशन चलने को कहा था। इस समय ता कलकत्ता जाने वाली कोई गाडी नही है। शायद स्टेशन पर बैठे हा। जाऊँ समझा बुझाकर लौटा लाऊँ।"

घर के लोगा न मन मे सोचा था कि नलिनी इस बात को लेकर साली मलहजो से मजाक करके जी का गुबार निकालेगा। लेकिन नलिनी न लौटकर एक दिन भी यह बात नही उठाई। जा भूल हो गई है उसके लिए उसके ससुराल के सभी लाग लज्जित अनुतप्त हैं—यही नलिनी के लिए काफी है। एक दिन केवल किसी अन्य प्रसग मे महेन्द्र घोष वकील की बात चलने पर उसन कहा था—"कुछ भी हो, दूसरे की ससुराल मे जाकर जो मान सत्कार मिला—वह बहुतो को अपनी ससुराल म भी नही मिलता।'

फूलों की कीमत

प्रथम परिच्छेद

लदन शहर मे जगह-जगह निरामिष भोजनशालाएँ हैं। एक दिन मैंने नेशनल गलरी मे घूम-घूमकर चित्र देखते-देखते अपने आपको बहुत थका डाला। अ त मे एक बज गया, बडे जोर की भूख भी लग आई थी। वहाँ से पास ही सेंट मार्टिस लेन म एक ऐसी ही भोजन शाला है। मैं वहाँ पहुँचा।

उस समय तक लन्दन की भोजनशालाओं मे लच के लिए बहुत लोग नही आये थे। हाल मे घुसते ही मैंने देखा कि सिर्फ दो या क्षुधातुर व्यक्ति यहाँ वहा विक्षिप्त-से बैठे हैं। मैं जाकर एक टेबल के सामने बैठ गया और दैनिक सवाद-पत्र पढने लगा। नीचा मुह किये वेट्रेस आई और हुक्म की प्रतीक्षा करने लगी।

मैंने सवादपत्र से आँखें हटाकर खाद्य तालिका हाथ म लेकर आवश्यक आर्डर दिया। "धन्यवाद' कहकर तेज चाल से वेट्रेस वहाँ से चल दी।

इसी समय मेरे पास से थोडी दूर पर एक टेबल पर मेरा नजर पडी। मैंने देखा, वहाँ एक अग्रज लडकी बैठी है। उसकी तरफ देखते ही, उसने मेरी तरफ से अपनी नजर दूसरी तरफ फेर ली। वह अवाक हुई-सी मुझे देख रही थी।

यह कोई नई बात नहीं थी, क्योंकि श्वेत द्वीप म हमारे श्यामवर्ण पूर्ण शरीर के रग को देखकर जन साधारण सभी जगह मुग्ध हो जाते हैं, और उनके ध्यान का भाग जरूरत म कुछ ज्यादा ही हम मिलता है।

लडकी की उम्र तेरह या चौदह वर्ष की होगी। उसकी वह

भूषा से कुछ दरिद्रता की झलक मिलती थी। उसके बाल पीठ पर बिखरे थे। लडकी की आँखें बडी-बडी थी, मानो उनमे कुछ विषण्णता का भाव हो।

वह जानने न पाये इस भाव से मैं बीच बीच मे उसकी तरफ देखने लगा। मेरा खाना आने के थोडी देर बाद ही वह अपना भोजन समाप्त करके उठ खडी हुई। वेट्रेस ने आकर उसका बिल उसे लिखकर दे दिया। बाहर निकलने के दरवाजे के पास ही आफिस है, वहाँ बिल और बिल की कीमत चुकाकर जाना होता है।

लडकी के उठने पर मेरी दृष्टि ने भी उसका अनुसरण किया। अपनी जगह पर बैठे हुए मैंने देखा कि लडकी अपने बिल का मूल्य चुकाकर कमचारिणी से गुप चुप पूछ रही है—"Please miss, यह जो महाशय हैं, ये क्या भारतवासी हैं?"

"लगता तो ऐसा ही है।"

"वे क्या हमेशा यहा आते हैं?"

"ऐसा तो नही लगता। और कभी देखा हो ऐसा तो याद नही आता।"

"धन्यवाद"—कहकर लडकी मेरी तरफ घूमी, और एक बार चकित दृष्टि से मेरी ओर देखकर बाहर चल दी।

इस बार मै विस्मित हो गया। क्या? यह क्या बात है? मेरे बारे म उसका यह कौतूहल देखकर, उसके बारे म भी मुझे अत्यन्त कौतूहल हुआ। अपना खाना समाप्त होने पर मैंने वेट्रेस से पूछा—"यह जो लडकी वहा बैठी थी, उसे क्या तुम जानती हो?"

"नही महाशय, मैं तो विशेष नही जानती। फिर भी प्रत्येक शनिवार को वह यहा लच लेती है, यह मैंने देखा है।"

"शनिवार के सिवा और किसी दिन नही आती?"

"नही, और तो कभी नहीं देखा है।"

एक आध इधर उधर की बातो से शुरु करके धीरे-धीरे मैं बाता का रग जमाने लगा।

लडकी ने एक बार मुझसे पूछा—"आप क्या भारत- वासी हैं ?"

"हा।"

"मुझे माफ कीजिएगा—आप क्या निरामिप भोजी हैं ?"

मैंने जवाब न देकर पूछा—'क्यो भला ?"

"मैंने सुना है, भारतवप के अधिकाश लोग निरामिप भोजन करते हैं।"

"तुमने भारतवद के बारे म ये बातें कैसे जानी ?

"मेरे बडे भाई भारतवप मे फौज के सैनिक हैं।"

तब मैंने कहा—"मै असल मे निरामिप भोजी नही हूँ, फिर भी बीच बीच मे मुझे निरामिप भोजन करना अच्छा लगता है।'

यह सुनकर लडकी कुछ निराश हो गई।

मैंने जान लिया कि इस बडे भाई के सिवा लडकी का कोई पुरुप अभिभावक नही है। लबेथ मे वह अपनी वृद्धा विधवा माता के साथ रहती है।

मैंने पूछा—"तुम्हारे बडे भाई के पत्र वगैरह आते होगे ?"

"नही, बहुत दिना से कोई पत्र वगैरह नही आया। इसीलिए मेरी माँ बहुत चिंतित है। और लोग उससे कहते हैं कि भारतवप साँप, बाघ और ज्वर राग का दश है। इसीलिए उन्हें आशका है कि कही मेरे भाई पर कोई मुसीबत न आई हो। सचमुच क्या भारतवर्ष साँप, बाघ और ज्वर रोग से भरा है ?'

मैं जरा हँसा। मैंने कहा—"नही। ऐसा हाता तो क्या मनुष्य वहाँ रह सकते थे।"

लडकी ने एक मदु दीघ निश्वास लेकर कहा—"माँ कहती है

यदि किसी भारतवासी से मुलाकात हो तो सारी बातें पूछूँ।"—यह कहकर अनुनयपूर्ण नेत्रों से उसने मेरी तरफ देखा।

मैं उसके मन का भाव समझ गया। घर माँ के पास ले जाने के लिए अनुरोध करने का उसे साहस नहीं हो रहा है, फिर भी उसकी इच्छा है कि मैं एक बार उसके पास जाऊँ।

इस दीन विरह कातर जननी से मुलाकात करने के लिए मैं भी बेचैन हो उठा। गरीब दरिद्र की कुटिया का साक्षात परिचय पाने का अवसर कभी नहीं मिला। देखूगा कि इस देश में ये लोग किस प्रकार जीवन यापन करते हैं, किस प्रकार सोचते विचारते हैं।

लड़की से मैंने कहा—"चलो, मुझे अपने घर ले चलोगी? अपनी मां से मेरा परिचय करा दो।'

यह प्रस्ताव सुनकर बालिका की दोनों आंखों से कृतज्ञता छलक पड़ी। वह बोली—"Thank you ever so much,—it would be so kind of you! इसी समय चल सकेंगे क्या?"

"खुशी से।

"आपके किसी काम में हर्ज तो नहीं होगा?"

"नहीं नहीं, बिलकुल नहीं। आज शाम को मुझे फुरसत है।"

यह सुनकर लड़की पुलकित हो उठी। आहार समाप्त करके हम दोनों उठे। रास्ते में मैंने पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है, बतलाओगी?'

'मेरा नाम एलिस मार्गरेट क्लिफोर्ड है।"

विनोद करते हुए मैंने कहा—'ओ हो, तुम्हीं Alice in wonderland की एलिस हो?

आश्चर्य से लड़की की आँखें चकित रह गई। उसने पूछा—"वह क्या है?

मैं भी जरा संकुचित हो उठा। मेरा ख्याल था कि ऐसी कोई

अंग्रेज लडकी नही होगी जिसने Alice in wonderland नाम की वह अद्वितीय बाल-मनोरजन कारी पुस्तक कठस्थ न की हो।"

मैंने कहा—"वह एक बडी सुन्दर किताब है। क्या तुमने पढी नही ?"

"नही, मैंने तो नही पढी।"

मैंने कहा—"तुम्हारी मा अगर राजी हो तो मैं तुम्हे वह किताब उपहार दूगा।"

इस प्रकार कथोपकथन करते करते सेंट मार्टिंस चर्च के पास से चेयरिंग क्रास स्टेशन के सामने आ पहुँचे। स्ट्रेड से बडी बडी दो-मजिली बसें इधर उधर आ-जा रही थी। कैबो की भी अपार भीड थी। टेलीग्राफ आफिस के सामने फुटपाथ पर खडे होकर लडकी से मैंने कहा—"आओ, हम लोग यही पर वेस्ट मिन्स्टर बस के लिए प्रतीक्षा करें।"

लडकी बोली—"पैदल चलने म आपको आपत्ति है क्या ?"

मैंने कहा—"बिलकुल नही। लेकिन क्या तुम्हे तकलीफ नही होगी ?"

"नही, मैं तो रोज ही पैदल चलकर घर जाती हूँ।"

वह कहाँ काम करती है यह पूछने का अब मौका मिला था। अंग्रेजी शिष्टाचार के अनुसार ऐसा सवाल करना ठीक नही है, लेकिन सभी नियमो के अपवाद होते हैं। जिस प्रकार रेल मे चढकर सहयात्री से "कहाँ जा रहे हैं ?" पूछना बडा भारी पाप है, पर "ज्यादा दूर जायेंगे क्या ?" यह पूछने मे कोई दोष नही है। सहयात्री की इच्छा हो तो कह सकता है मैं उस स्टेशन तक जाऊँगा। इच्छा न हो तो कह सकता है—"नही ज्यादा दूर नही जाऊँगा।" इसमे हमारे सवाल का जवाब भी मिल गया, उसका पर्दा भी बना रहा। इसी हिसाब से मैंने लडकी से पूछा—"इस तरफ तुम अक्सर आती हो ?"

लडकी बोली—"हा, मैं सिविल सर्विसस्टोस मे टाइप राइटिंग का काम करती हूँ। रोज शाम को घर जाती हूँ। आज शनिवार होने के कारण जल्दी छुट्टी मिल गई है।"

मैंने उससे कहा—"चलो, स्ट्रैंड से न जाकर एम्बैंकमेंट से चला जाय। भीड कम है। —यह कहकर मैंने उसकी बाँह पकडकर सावधानी से रास्ता पार करा दिया।

टम्स नदी के उत्तरी किनारे से होकर ऐम्बैंकमेंट नाम का रास्ता गया है। चलते चलते मैंने कहा—"तुम क्या अक्सर इसी रास्ते से जाती हो?"

लडकी बोली—"नही, इस रास्ते पर यद्यपि भीड कम है, पर मैले कुचैले कपडे पहने लोगो की सख्या ज्यादा है। इसीलिए मैं स्ट्रड और ह्वाइटहाल से ही घर जाती हूँ।"

मैंने मन ही मन इस अशिक्षिता दरिद्र बालिका के सामने पराजय स्वीकार की। अंग्रेज जाति की सौंदर्यप्रियता के सामने मेरी यह आत्म पराजय पहली ही बार नहीं हुई थी।

बातें करते करते हम वस्टमिन्स्टर ब्रिज के नजदीक पहुँचे। मैंने कहा—'तुम्हे एलिस कहकर बुलाऊँ या मिस विलफाड कहकर।"

प्यार से मुस्कराकर लडकी बोली—'मैं तो अभी बडी हुई नहीं। आपकी जो इच्छा हो मुझे उसी नाम से बुला सकते हैं। और लोग मुझे मैगी कहकर बुलाते हैं।'

"तुम क्या बडी होने के लिए उत्कठित हो?'

'हाँ।"

"क्या भला?"

'बडी होने पर काम करके मैं ज्यादा कमा सकूँगी। मेरी माँ बूढ़ी हो गई है।'

"तुम जो काम करती हो, वह तुम्हें पसद है?'

"नही। मेरा काम वडा ही मशीन मरीखा है। मैं ऐसा काम चाहती हूँ जिसमे मुझे दिमाग लगाना पड़े। जैसे सेक्रेटरी का काम।"

हाउस ग्राव पार्लियामट के पास पुलिस सतरी गश्त लगा रहा था। उसे दाहिनी तरफ रखकर, वेस्टमिन्स्टर ब्रिज पार करके हम लोग लेंबेथ पहुँच गये। यह गरीबो का मुहल्ला है। मैगी बोली—"मैं अगर कभी सेक्रेटरी हो सकी ता मा को इस मोहल्ले से निकालकर कही और ले जाऊँगी।"

छोटी जाति के लोगो की भीड को पार करके हम लोग चलने लगे। मैंने पूछा—"तुम्हारा पहला नाम छोडकर यह दूसरा नाम बुलाने का नाम कैसे हुआ ?"

मैगी बोली—"मेरी मा का पहला नाम भी एलिस है, इस लिए मेरे पिता जी मेरे दूसरे नाम को ही छोटा करके बुलाते थे।"

"तुम्हारे पिता जी तुम्हे मैगी कहकर बुलाते थे या मेग्सी कहकर ?"

"जब दुलार से बुलाते थे तब मेग्सी कहकर बुलाते थे। आपने कैसे जाना ?"

विनोद करते हुए मैंने कहा—"हाँ हाँ, हम लोग भारतवासी हैं न, हम लोग जादू और भूत भविष्यत् की अनेक बातें जानते हैं।"

लडकी बोली—"यह मैंने सुना है।"

विस्मित होकर मैंने पूछा—"अच्छा! क्या सुना है ?"

"सुना है कि भारतवर्ष मे अनेक ऐसे लोग हैं जो अलौकिक क्षमता रखते हैं। उन्हें इयोगी (yogi) कहते हैं। लेकिन आप तो इयोगी नहीं हैं।"

"तुमने कैसे जान लिया मैगी कि मैं योगी नहीं हूँ ?"

"इयोगी लोग मांस नहीं खाते।"

"इसीलिए शायद तुमने पहले ही मुझसे पूछ लिया था कि मैं निरामिष-भोजी हूँ या नहीं ?"

लडकी जवाब न देकर मृदु मृदु हँसने लगी।

अत मे हम लोग एक सँकरे दरवाजे के सामने पहुँचे। जेब से लैच की (चाबी) निकालकर मैगी ने दरवाजा खोला। भीतर जाकर मुझसे कहा—'आइए।"

तृतीय परिच्छेद

मरे भीतर आने पर मैगी ने दरवाजा बद कर दिया। सीढी के पास जाकर जरा ऊँचे स्वर से बोली—"माँ, तुम कहा हो ?"

नीचे से आवाज आई—'बिटिया मैं रसोईघर मे हूँ, नीचे उतर आ।'

यहा यह बता देना जरूरी है कि लदन की सडके जमीन से ऊपर होती हैं। रसोईघर प्राय सडको से नीचे होते हैं।

माँ की आवाज सुनकर, मेरी तरफ देखकर मैगी बोली—"Do you mind ?"

मैंने कहा—'Not in the least, चलो।"

सीढिया से उतरकर लडकी के साथ मैं उनके रसोईघर मे नीचे उतर गया।

दरवाजे के पास खडी होकर मैगी बोली—"माँ एक भारतवासी सज्जन तुमसे मिलना चाहते हैं।'

वृद्धा ने आग्रह के साथ कहा—"कहाँ हैं ?'

मैंने मैगी के पीछे पीछे मुस्कराते हुए प्रवेश किया। लडकी ने हम दोना का परिचय कराया—"ये मिस्टर गुप्त हैं। ये मेरी माँ हैं।'

"How do you do ?'—यह कहकर मैंने हाथ फैला दिया।

मिसेज क्लिफोर्ड ने कहा—"क्षमा कीजिएगा। मेरे हाथ अच्छे नहीं

हैं।"—यह कहकर उसने अपने हाथ फैलाकर दिखाये। उनमें मैदा लगा हुआ था। वह बोली—"आज शनिवार है इसीलिए केक बना रही हूँ। रात को लोग आकर इन्हें खरीद ले जायेंगे। रात को सड़कों पर यह बेचेंगे। इस प्रकार किसी तरह कष्ट से हम लोग जीवन निर्वाह करते हैं।'

गरीबों के मुहल्ले में शनिवार की रात एक महोत्सव का दिन होता है। सड़कों पर रोशनी लगी हुई ठेलागाड़ियों में अक्सर लोग माल बेचते फिरते हैं। रास्तों पर इसी शाम को और दिनों की अपेक्षा भीड़ ज्यादा होती है। गरीबों के लिए शनिवार ही खर्च वगैरह करने का दिन होता है, क्योंकि इसी दिन उन लोगों को साप्ताहिक वेतन मिलता है।

ड्रेसर टेबल पर मैदा, चर्बी, किसमिस, अंडे वगैरह केक तैयार करने का सामान सजा हुआ है। टीन के बर्तन में हाल के तैयार किये हुए कुछ केक भी रखे हुए हैं।

मिसेज क्लिफोर्ड बोलीं—"गरीबों के रसोईघर में बैठना क्या आपको अच्छा लगेगा ? मेरा काम समाप्त हो गया है। मैगी, तू इन्हें बैठने के कमरे में ले जा। मैं अभी आती हूँ।"

"मैंने कहा —"नहीं नहीं। मैं यहाँ अच्छी तरह बैठ सकूँगा। आप तो खूब अच्छे केक बनाती हैं।"

मिसेज क्लिफोर्ड ने मुस्कराकर मुझे धन्यवाद दिया।

मैगी ने कहा—"माँ बहुत अच्छी टाफी बनाती हैं। खाकर देखोगे ?"

मैंने आह्लादपूर्वक अपनी सम्मति जताई। मैगी ने एक आलमारी खोलकर एक टीन की पेटी भर टाफी लाकर सामने रख दी। खाकर उनकी तारीफ करना शुरू कर दिया।

केक तैयार करते करते मिसेज विलफोड ने पूछा—"भारत कैसा देश है ?"

"बडा सुन्दर देश है।"

"बसने के लिए निरापद है क्या ?"

"निरापद ही है। हा, इस देश की तरह ठडा नही है, गरम देश है।'

"वहा साप और बाघ बहुत ज्यादा हैं ? वे मनुष्य का विनाश नहीं करते ?"

मैंने हँसकर कहा—"इन सब बातो पर विश्वास मत करो। साप और बाघ जगल म रहते हैं, वे मनुष्य की बस्ती मे नही आते। दैवात् आ जाते हैं तो लोग उन्हे मार डालते हैं।"

और ज्वर ?"

"ज्वर का प्रकोप भारत मे कही कही ज्यादा है—सर्वत्र नहीं है, और हमेशा भी नही रहता।"

'मेरा बेटा पजाब म है। वह फौज म काम करता है। पजाब कैसी जगह है ?'

'पजाब बडी अच्छी जगह है। वहा ज्वर का प्रकोप कम है। वहाँ स्वास्थ्य बडा अच्छा रहता है।'

मिसेज विलफोड न कहा—"मुझे यह जानकर बडी खुशी हुई।'

उनका केक बनाना समाप्त हो गया। लडकी से बोली—"मैगी, तू मिस्टर गुप्त को ऊपर ले जा। मैं हाथ धोकर चाय तैयार करके लाती हूँ।"

आगे आगे मैगी और पीछे पीछे मैं उनकी बैठक मे पहुँचे। असबाब वगैरह बहुत कम और कम कीमत का था। फर्श पर बिछा हुआ कार्पेट बहुत पुराना हो गया है, जगह जगह स फटा हुआ है, लेकिन सब-कुछ खूब साफ सुथरा है।

मैगी ने कमरे मे आकर पर्दों को सरका दिया और खिडकिया खोल दी। एक कांच की पुस्तको की आलमारी थी, मैं खडा खडा वही देखन लगा।

कुछ देर बाद मिसेज विलफोर्ड चाय की ट्रे हाथ मे लिये कमरे मे आइ। उनके कपडो पर से रसोईघर के सारे चिह्न गायब थे। चाय पीत पीते मैं भारतवष की बातें सुनाने लगा।

मिसेज विलफोड न अपन बेटे की एक फोटो दिखलाई। यह भारतवष जाने से पहले ली गई थी। उनके बेटे का नाम फ्रासिस या फ्राक है। मैगी न एक अलबम निकाला। इसम शिमला पहाडी की अनेक अट्टालिकाएँ और प्राकृतिक दृश्या के चित्र हैं। भीतर के पृष्ठ पर लिखा है—"To Maggie on her birthday from her loving brother Frank"

मिसेज विलफोर्ड बोली—"मैगी, वह अँगूठी तो मिस्टर गुप्त को दिखा!"

मैंने कहा—"तुम्हारे दादा ने भेजी है क्या? कहा है मैगी, कैसी अँगूठी है देखू?"

मैगी बोली—"वह एक जादू की अँगूठी है। एक इयोगी न फ्राक को दी थी।"—यह कहकर उसने अँगूठी बाहर निकाली। मुझसे पूछा—"आप इससे भूत भविष्यत बता सक्ते हैं?"

Crystal gazing नाम के खेल की बात मैंने बहुत दिनो से सुन रखी थी। मैंने देखा कि अँगूठी म एक स्फटिक जडा हुआ है। मैं हाथ म लेकर उसे देखने लगा।

मिसेज विलफोड बोली—"इसे भेजते समय फ्राक ने लिखा था कि एकाग्र मन से इस स्फटिक के सामन देखकर दूर गये हुए जिस किसी मनुष्य के बारे में सोचोगे उसकी सब बातें साफ दिखाई देंगी। इयोगी न फ्राक को ये सब बातें बताई थी। बहुत दिनो तक फ्राक की

जब कोई खबर नही मिली तो मैंने और मैगी ने कई बार उसकी तरफ नजर गडाकर सोचा है, लेकिन इसका कोई फल नही हुआ। आप एक बार देखिये तो ? आप हिन्दू हैं, आप शायद सफल हो जायें।"

मुझे मालूम पडा कि अंधविश्वास सिर्फ भारतवर्ष तक ही सीमित नही हैं। पर यह कुछ नही है एक पीतल की अंगूठी मे साधारण काँच का एक टुकडा जडा हुआ है, यह भी इस जननी और बहन से कहने को मन नही हुआ। उन लोगो ने समझ रखा है कि उनके फ्राँक ने उस दूर के स्वप्नवत् भारतवर्ष से एक अभिनव आश्चर्यजनक चीज भेज दी है, मैं इस विश्वास को कैसे तोड दूँ ?

मिसेज क्लिफोर्ड और मैगी के आग्रह करने पर अंगूठी को हाथ मे लेकर स्फटिक को बडी देर तक देखता रहा। अंत मे उन्हें लौटाकर मैंने कहा— 'इसमे मुझे तो कुछ दिखाई नही देता।"

मा और बेटी दोनो ही यह सुनकर दुखी हुई। उनका ध्यान दूसरी तरफ आकृष्ट करने के लिए मैंने कहा -' आपके यहाँ जो वेहाला पडा है, यह क्या तुम्हारा है मैगी।"

मिसेज क्लिफोर्ड ने कहा—"हाँ। मैगी बहुत अच्छा बजाती है। कुछ बजाकर सुना न मैगी।'

मैगी ने अपनी मा की तरफ रोष से देखकर कहा— 'Oh, Mother !"

मैंने कहा—"मैगी कुछ बजाओ न ? मुझे वेहाला सुनना बडा अच्छा लगता है। देश मे मेरी एक बहन है वह भी तुम्ही जितनी बडी होगी, वह मुझे वेहाला बजाकर सुनाती था।"

मैगी ने कहा—' मैं जैसा बजाती हूँ, वह बिलकुल सुनने लायक नहीं होता।'

मेरे बहुत अधिक आग्रह करने पर अंत मे मैगी बजाने के लिए

राजी हुई। बोली—"मेरे भडार मे ज्यादा कुछ नही है। क्या सुनेंगे ?"

"मैं फरमाइश करू ? अच्छा तो अपना music-case ले आओ—क्या-क्या है देखू।"

मैगी ने काले चमडे का बना एक पुराना म्यूजिक केस निकाला। मैंने उसे खोलकर देखा कि उसमे अधिकाश स्वर-लिपिया साधारण हैं, जैसे—Good bye Dolly Grey," "Honey suckle and the Bee" आदि। कुछ ऐसी भी हैं जो सचमुच म अच्छी हैं, हा फैशन के हिसाब से बहुत पुरानी हो गई हैं, जैसे—"Annie Laurie," 'Robin Aceair,' The last rose of summer' इत्यादि। मैंने देखा कि उसमे बहुत से स्काच गीत भी हैं। मुझे स्काच गीत बहुत ही ज्यादा पसद हैं। इसलिए "Blue bells of Scotland' नामक स्वर लिपि चुनकर मैंने मैगी के हाथ मे दी।

मैगी उसे वेहाला पर बजाने लगी, मैं मन ही मन सुर म गीत गाने लगा—

"Oh where and oh where is my
Highland daddie gone !"

गीत समाप्त होने पर मैगी को धन्यवाद देकर मैं बहुत प्रशसा करने लगा। मिसेज विलफोर्ड बोली—"मैगी को कभी उपयुक्त शिक्षा प्राप्त करने का मौका नही मिला। जो कुछ सीखा है सब अपने प्रयत्न से सीखा है। अगर कभी हमारी अवस्था सुधरी तो उसे lessons दिलवाने का बदोवस्त करूँगी।"

बातचीत समाप्त होने पर मैंने कहा—"मैगी, और कुछ बजाओ न ?"

अब मैगी का सकोच तिरोहित हो गया था। वह बोली—"क्या बजाऊँ, बताइए !"

मैं उसकी स्वर लिपियाँ खोजने लगा। आजकल जो गीत शौकीन समाज मे पसद किये जाते हैं, उनम से एक भी मैंने उसमे नही देखा। मैं समझ गया कि उन सब गीतो की प्रतिध्वनि अभी तक इस दरिद्र बस्ती मे नही आई है।

खोजते खोजते सहसा एक यथाथ उच्च कोटि की स्वरलिपि हाथ लग गई। यह Gounod के लिखे हुए Faust नामक opera का Flower Song था। मैंने इसे हाथ मे लेकर उससे अनुरोध किया—"इसे बजाओ।"

मैगी बजाने लगी। गीत समाप्त होने पर मैं कुछ देर तक विस्मय मे मौन बना रहा। culture नाम की चीज यूरोपीय समाज म कितने निम्न स्तर तक के लोगो म प्रवेश कर गई है, यही मेरे विस्मय का कारण था। मैगी न इस कठिन स्वर लिपि का भी बहुत अच्छी तरह बजाया—और वह एक निम्न श्रेणी की बालिका मात्र है। मैंने सोचा कलकत्ता मे किसी दिग्गज बैरिस्टर या प्रसिद्ध सिविलियन की इस उम्र की कन्या गुनो के फाउस्ट से एक गीत अगर इतना सुन्दर बजाती तो समाज मे धन्य धन्य हो जाती।

मैंने मैगी को धन्यवाद देकर पूछा—"यह भी क्या तुमने गु सीखा है?"

'नही। यह मैं खुद नही सीख सकी। अपने गिर्जे के मिस्टर की लडकी से मैंने यह सीखा है। आपने कभी यह ओपेरा सुना है?'

मैंने कहा—"नही। मैंने ओपरा म कभी फाउस्ट नही सुना। हाँ गटे के 'फाउस्ट के अग्रेजी अनुवाद' का मैंने लाइसीयम म अभिनय देखा है।'

'लाइसीयम म? जहाँ एविंग अभिनय करता है?'

"हाँ। तुमने कभी एविंग का अभिनय देखा है?"

मैगी दुखी होकर बोली—"नहीं मैं आज तक किसी वेस्ट एण्ड

थियेटर मे नही गई। एविंग को कभी नही देखा। चित्रो की दूकान की खिडकी मे सिर्फ उसकी फोटो देखी है।"

"इस समय एविंग लाइसीयम मे Merchant of Venice का अभिनय कर रहा है। मिसेज क्लिफोड और तुम अगर एक दिन आओ तो मैं बडी खुशी से तुम्हे ले जाऊँगा।"

मिसेज क्लिफोड ने धन्यवाद के साथ अपनी सम्मति जताई। मैंने पूछा—"आप शाम का खेल देखना पसद करती हैं या दोपहर का?"

यहा लदन के थियेटरो के बारे मे कुछ जान लेना जरूरी है। कलकत्ता के थियेटरो की तरह, आज अमुक नाटक के अभिनय मे "हो-हो हल्ला हुआ—" कल नाटक के बीच म "हँसी का हुरा, गीतो का गुर्रा और खुशी का फुहारा" ऐसी बातें नहीं होतीं। एक तो वहाँ थियेटरो म प्रत्येक रात को अभिनय होता है (रविवार को छोडकर), इसके अलावा किसी थियेटर म शनिवार को, किसी मे बुधवार को, किसी म शनि और बुध दोनो दिन "मेटिनी" अर्थात् दोपहर का अभिनय भी होता है। एक नाटक किसी थियेटर मे शुरू होने पर प्रतिदिन उसी का अभिनय होता है। जब तक दर्शको का अभाव न हो, तब तक इसी तरह चलता है। इस प्रकार कोई नाटक दो महीने या छह महीने या लोकप्रिय musical comedy हो तो दो तीन साल तक लगातार उसीका अभिनय चलता रहता है।

मिसेज क्लिफोड बोलीं—"मेरा शरीर अच्छा नही है। दोपहर का खेल ही अच्छा रहेगा। किसी शनिवार को मैगी की छुट्टी के बाद एक साथ चलेंगे।"

मैंने कहा—"ठीक है। सोमवार को जाकर आगे वाले जिस शनिवार की मिलेगी, उसी शनिवार की टिकट खरीदकर आपको तारीख बता दूँगा।"

मैगी बोली—"लेकिन मिस्टर गुप्त, आप ज्यादा कीमत की टिकट मत लेना। ऐसा करेंगे तो हम बड़ा कष्ट होगा।"

मैंने कहा—"नहीं, ज्यादा कीमत की टिकट क्या लूंगा? अपर सकल की टिकट लूंगा। मैं कोई भारतीय राजा या नवाब हूँ नहीं। अच्छा Merchant of Venice पढ़ा है?"

"मूल नाटक नहीं पढ़ा है। स्कूल में हमारी पाठ्य-पुस्तक में Lamb's Tales की कहानी का बहुत कुछ अंश उद्धृत था। वही पढ़ा है।"

"अच्छा, मैं तुम्हें मूल नाटक भिजवा दूंगा। अच्छी तरह पढ़ लेना। तब अभिनय समझने में सुविधा होगी।"

शाम हो आई थी। मैंने उन लोगों से विदा ली।

सोमवार को दस बजे लाइसीयम के बाक्स आफिस में जाकर वहाँ के कर्मचारी से पूछा—"आगामी शनिवार के लिए दोपहर के खेल की अपर सकल की तीन टिकटें मिल सकेंगी क्या?"

कर्मचारी बोला—"नहीं जनाब, अभी अगले दो शनिवारों की टिकटें नहीं दे सकता। सब टिकटें बिक चुकी हैं।

"तीसरे शनिवार की?"

"हाँ, उस दिन की दे सकता हूँ।"—यह कहकर उसने उस तारीख का प्लान निकाला। मैंने देखा कि उस तारीख की भी अपर सकल की कई टिकटें बिक चुकी हैं। उन सीटों के नम्बर नीली पेंसिल से काटे हुए हैं।

प्लान को हाथ में लेकर, खाली सीटों में से चुनकर, एक दूसरे से मिली हुई तीन सीटें मैंने पसंद की और उनके नम्बर उस कर्मचारी को बतला दिये। उन नम्बरों की तीन टिकटें खरीदकर, बारह शिलिंग देकर चला आया।

चतुर्थ परिच्छेद

तीन महीने बीत गये हैं। इस बीच और भी कई बार मैगी के साथ जाकर उसकी माँ से मिल आया हूँ। एक दिन मैगी को जू गार्डन ले गया था। वहाँ Indian Rajah नाम के हाथी पर और बालकों के साथ मैगी भी बैठी थी। हाथी पर चढ़कर उसकी खुशी की सीमा न रही।

लेकिन अभी तक उसके भाई की कोई खबर नहीं आई। एक दिन मिसेज विलफोर्ड के अनुरोध से इंडिया आफिस में जाकर मैंने खबर ली तो मालूम पड़ा कि जिस रेजीमेंट में फ्रांक है वह इस समय [illegible] के युद्ध में लगी हुई है। जब से यह सुना है तब से मिसेज विलफोर्ड अत्यन्त चिंतित है।

एक दिन सुबह मैगी का लिखा हुआ पोस्टकार्ड मिला। उसमें लिखा था—

प्रिय मिस्टर गुप्त,

मेरी मा बहुत बीमार हैं। आज एक सप्ताह से मैं स्कूल भी नहीं गई। आप अगर कृपा करके एक दिन आयें तो मैं [illegible]।

—मैगी

मैं जिस परिवार में रहता था, उससे मैंने पहले भी मैगी और उसकी माँ की बात कही थी। आज सुबह भोजन के समय टेबल पर इसी बात का मैंने उल्लेख किया।

गृहिणी मुझसे बोली—"तुम जब जाओ, तो साथ में कुछ [illegible] लेते जाना। लड़की एक सप्ताह से स्कूल नहीं गई है, [illegible] नहीं मिला होगा। वे लोग [illegible]।"

नाश्ते के बाद मैं कुछ [illegible] उनके घर पहुँचकर मैंने [illegible] खाला।

उसका चेहरा अत्यन्त मुरझाया हुआ था। आँखें बैठ गई थीं। वह मुझे देखते ही बोली—"Oh, thank you Mr, Gupta It is so kind—"

मैंने पूछा—"मैगी, तुम्हारी माँ कैसी हैं ?"

मैगी बोली—"माँ इस समय सो रही हैं। वे बहुत बीमार हैं। डाक्टर ने कहा है कि फ्रांस के समाचार न मिलने से दुश्चिंता के मारे बीमारी इतनी बढ गई है। शायद वे नहीं बचेंगी।"

मैं मैगी को सान्त्वना देने लगा। अपने रूमाल से उसकी आँखें पोंछ दीं।

मैगी कुछ स्वस्थ होकर बोली—"आपसे एक भिक्षा मांगती हूँ।"

मैंने कहा—"क्या मैगी ?"

"बैठक मे आओ तो बताऊँ।"

हमारे पैरों की आहट से कहीं बीमार वृद्धा जाग न जाय, इसी लिए हम लोग सावधानी से बैठक में आये। कमरे के बीच में खड़े होकर मैंने स्नेह से पूछा—"क्या है मैगी ?"

मैगी मेरे मुह की तरफ आकुल नेत्रों से कुछ देर तक देखती रही। मैं प्रतीक्षा करता रहा। अन्त मे मैगी कुछ न कहकर, दोनों हाथों से मुह ढककर चुपचाप रोने लगी।

मैं बडी मुसीबत मे फँस गया। इस लडकी को मैं क्या कहकर सान्त्वना दूँ ?—इसका भाई सीमाप्रांत की लडाई में है, जीवित है या मर गया, यह भगवान् ही जाने। इस पृथ्वी पर एक मात्र सबल माँ है। उस माँ के चले जाने पर इसकी क्या दशा होगी ? यह यौवनोन्मुखी बालिका, इस लंदन शहर मे कहाँ खडी होगी ?

मैंने जोर के साथ मैगी के मुह पर से उसके हाथों के आवरण को हटा दिया। मैंने कहा—"मैगी, क्या कहना चाहती हो ? मेरे द्वारा तुम्हारा कुछ उपकार हो सके, तो उसमे मैं मुह नहीं मोड़ूगा।"

मैगी बोली—"मिस्टर गुप्त, मैं जो आपसे प्रस्ताव करूँगी, वह सुन कर आप क्या सोचेंगे यह नहीं जानती। वह अगर अत्यन्त गर्हित हो तो आप मुझे क्षमा कीजियेगा।"

"क्या है? कैसा प्रस्ताव है?"

"कल दिन भर माँ यही कहती रही कि मिस्टर गुप्त आकर अगर उसी स्फटिक की तरफ कुछ देर तक देखें, तो शायद फाक की कोई खबर बता सकें। वे तो हिन्दू हैं!—मैंने इसीलिए आपको आने के लिए पत्र लिखा था।"

"तुम्हारी इच्छा हो तो वह अँगूठी ले आओ—मैं फिर कोशिश करके देखूँगा।"

मैगी ने आकुल स्वर में कहा—"लेकिन इस बार भी निष्फल हुए तो?"

मैं मैगी के मन का भाव समझ गया। जानकर चुप रह गया।

मैगी बोली "मिस्टर गुप्त, मैंने पुस्तक में पढ़ा है, हिन्दू जाति बड़ी ही सत्यपरायण है। आप अगर स्फटिक देखने के बाद माँ से सिर्फ यह कह दें कि फाक अच्छा है, जीवित है, तो क्या यह बिलकुल झूठ होगा? इससे क्या अन्याय होगा?"

यह कहते कहते बालिका की आँखों से झर-झर आँसू गिरने लगे।

मैं कुछ देर तक सोचता रहा। मैं मन ही मन सोचने लगा कि मैं धर्मात्मा नहीं हूँ—इस जीवन में मैंने अनेक पाप किये हैं। आज यह पाप भी करूँगा। यही मेरा सबसे छोटा पाप होगा।

प्रकट में मैंने कहा—"मैगी, तुम चुप हो जाओ, रोओ मत। कहाँ है वह अँगूठी, दे दो तो एक बार अच्छी तरह देखूँ। अगर कुछ दिखाई नहीं दिया तो तुम जो कहती हो वही करूँगा। वह अगर अन्याय हो तो भगवान् मुझे क्षमा करें।"

मैगी ने मुझे अँगूठी लाकर दे दी। मैंने उसे हाथ में लेकर उससे कहा—"जाओ, देखो कि तुम्हारी माँ जाग गई हैं या नहीं।"

करीब पन्द्रह मिनट बाद मैगी लौट आई। बोली—"माँ जाग गई हैं। आपके आने की खबर उन्हें दे दी है।"

"मैं इस समय उनसे मिल सकता हूँ क्या?"

"आइए।"

मैं वृद्धा की रोगशय्या के निकट आया। मेरे हाथ में उस समय भी वह अँगूठी थी। उन्हें सुप्रभातम् कहकर मैंने कहा—"मिसेज क्लिफोड, आपका बेटा अच्छा है, वह जीवित है।"

यह सुनते ही वृद्धा ने अपने तकिये पर से थोड़ा सा सिर उठाया। वे बोली—"आपने क्या यह स्फटिक में देखा है?"

मैंने निस्संकोच होकर कहा—"हाँ, मिसेज क्लिफोड, मैंने यह स्फटिक में ही देखा है।"

वृद्धा का सिर फिर तकिये से लग गया। उसकी दोनों आँखों से आनन्दाश्रु बहने लगे। वे अस्फुट स्वर में बार बार कहने लगीं—"God bless you—God bless you"

पंचम परिच्छेद

मिसेज क्लिफोड उस बार तो अच्छी हो गई।

मेरे देश लौटने का समय नजदीक आ गया। पहले तो इच्छा हुई कि लेबथ जाकर मैगी और उसकी माँ से मिल आऊं। लेकिन वे इस समय शोक सतप्त थे। सीमाप्रांत की लड़ाई में फ्रांक मारा गया है। कोई महीना भर हुआ होगा, काले बोर्डर की चिट्ठी में मैगी ने यह समाचार मुझे लिखा था। मैंने हिसाब लगाकर देखा कि जिस समय मैंने मिसेज क्लिफोड से कहा था कि उनका बेटा अच्छा है जीवित है—उससे पहले ही फ्रांक की मृत्यु हो गई थी। इन्हीं सब कारणों से

मिसेज विलफाड के सामने जाने मे मुझे शर्म आने लगी। इसीलिए मैंने एक पत्र लिखकर मैगी और उसकी मा से विदा ली।

अत म लदन मे मेरी अंतिम रात का प्रभात हुआ। मैं अब देश की तरफ यात्रा करने वाला था। परिवार के सब लोगो के साथ नाश्ता करने बैठा था कि इसी समय बाहर के दरवाजे पर आवाज हुई।

कुछ देर बाद दासी आकर बोली—"Please Mr Gupta मिस विलफोड आपसे मिलने आई हैं।"

मेरा नाश्ता उस समय तक समाप्त नही हुआ था। मैं समझ गया कि मैगी मुझसे विदा लेने आई है। कही उसे काम पर जाने म देर न हो जाय इसलिए मैं उसी समय गृहिणी से अनुमति लेकर टेबल पर से उठ खडा हुआ। मैंने हाल म जाकर देखा कि काले भेष म मैगी खडी है।

पास ही पारिवारिक लाइब्रेरी थी, उसमे मैगी को ले जाकर मैंने बिठा दिया।

मैगी बोली—"आप आज जा रहे हैं ?"

"हा मैगी, आज ही मेरे जाने का दिन है।'

"देश पहुँचने मे आपको कितने दिन लगेंगे ?"

"दो सप्ताह से कुछ ज्यादा लगेगा।"

"आप वहा कहा रहेंगे ?"

"मैं पजाब सिविल सर्विस मे हूँ। मुझे किस जगह रहना पडेगा, यह वहाँ जाये बिना नही बता सकता।"

"वहा से सीमाप्रात क्या बहुत दूर है ?"

"नही, ज्यादा दूर नही है।'

"डेरागाजीखाँ के पास फोर्ट मनरो मे फ्राक की कब्र है।"—यह कहते कहते उसकी आँखें छलछला आईं।

मैंने कहा—"मैं जब उस तरफ जाऊँगा तब जरूर तुम्हारे भाई की कब्र पर जाकर तुम्हें लिखूगा।"

मैगी बोली—"लेकिन आपको तकलीफ और असुविधा होगी।"

"असुविधा कैसी ? मैं जहाँ रहूँगा वहाँ से डेरागाजीखाँ तो ज्यादा दूर नही है। मैं एक बार जरूर सुविधानुसार जाकर तुम्हे बाद मे लिखूगा।"

मैगी का चेहरा कृतज्ञता मे चमक उठा। उसने मुझे धन्यवाद दिया—उसका गला रुँध गया था। उसने अपनी जेब मे से एक शिलिंग निकालकर मेरे सामने टेबल पर रखकर कहा—"आप जब जावें तो मेहरबानी करके एक शिलिंग के कुछ फूल खरीदकर मेरे भाई की कब्र पर चढा दें।"

भावो के आवेग मे मैंने आँखें झुका ली।

मैं सोचने लगा कि बालिका की यह बहुत कष्ट से उपार्जित शिलिंग लौटा दू। कह दू कि हमारे देश म सब जगह फूल बहुत मिलते हैं, पैसे देकर खरीदना नही पडता।

लेकिन फिर सोचने लगा—"इस त्याग के सुख से बालिका को क्यो वंचित करूँ ? यह जो बडी मेहनत से कमाई हुई शिलिंग है, इसके द्वारा बालिका जो सुख सुविधा खरीद सकती, प्रेम के नाम पर वह उसे त्याग करने के लिए उद्यत हुई है। त्याग का वह सुख महा अमूल्य है—इस सुख से इसका विरह तप्त हृदय कुछ शीतल होगा। उससे वंचित करने म क्या लाभ है ? यह सोचकर मैंने वह शिलिंग उठा ली।

मैंने कहा—"मैगी, मैं इस शिलिंग के फूल खरीदकर तुम्हारे भाई की कब्र पर चढा दूगा।"

मैगी उठ खडी हुई। बोली—"मैं आपको क्या कहकर धन्यवाद दू ? मेरे काम पर जाने का समय हो गया है। Good bye पत्र देते रहना।"

मैंने उठकर मैगी का हाथ अपने हाथ म ले लिया। मैंने कहा—
'Good bye Maggie – God bless you'' यह कहकर उसके हाथ
को अपने होठा के पास लाकर उसका चुबन ले लिया।

मैगी चली गई।

आंखो के दो बूद आंसू रूमाल से पोछकर, ट्रक पटा वगैरह सजाने
के लिए मैं ऊपर चल दिया।

रसमयी का विनोद

प्रथम परिच्छेद

क्षेत्रमोहन बाबू का अठारह साल का दाम्पत्य जीवन स्त्री के साथ युद्ध, विग्रह और संधि करते-करते ही बीता है। ऐसी रणरंगिनी स्त्री बंगाल देश में प्राय दिखाई नहीं देती।

क्षेत्रमोहन की उम्र इस समय चालीस साल की है। उनकी पत्नी रसमयी की उम्र तीस साल की है। 'रसमयी'!—यह नाम जिसने रखा है बलिहारी है उसकी प्रतिभा की! रस की कमी नहीं है—यहाँ रौद्र रस है!

क्षेत्रमोहन एक बँगलानवीस मुख्तार हैं। हुगली में रहकर अच्छी तरह चार पैसे कमाते हैं। घर उनका हुगली में नहीं है—जिले के किसी गँवई गाँव में है। पर कई साल से हुगली में अपना मकान बनवाकर रह रहे हैं।

दुःख की बात यह है कि अब तक क्षेत्रमोहन के कोई संतान वगैरह नहीं हुई—स्त्री की जो उम्र है उसे देखते हुए होने की आशा भी नहीं है। बहुत दिनों से उनकी मौसी बुआएँ वगैरह फिर से ब्याह करने के लिए उनसे अनुरोध कर रही हैं। क्षेत्रमोहन की आंतरिक इच्छा भी यही है। लेकिन रसमयी के डर से अब तक इस बारे में कोई चेष्टा करने का साहस नहीं करते।

इसी बीच एक सामान्य सी घटना को लेकर रसमयी ने भयानक विप्लव खड़ा करके क्षेत्रमोहन को दो दिन के लिए घर से बाहर कर दिया। अंत में खुद अपने मैके हालिशहर चली गईं। क्षेत्रमोहन तब हिम्मत करके घर लौट आए और प्रतिज्ञा कर ली कि

अब रसमयी का मुह नही देखेंगे—कही और ब्याह करेगे । इस घर मे अब रसमयी को घुसने नही देगे—यही सब समाप्त है।

द्वितीय परिच्छेद

हालिशहर गाव हुगली के ही दूसर किनारे पर है। बीच म गगा बहती है। चौधरी पाडे म रसमयी का मायका है। बहुत दिन हुए उसके पिता माता का अवसान हो गया है। इस समय उस घर मे रसमयी की विधवा दीदी विनोदिनी और उसके छाटे भाई नवीन और सुबोध रहते हैं। नवीन काचडापाडा के कारखाने म काम करता है, सुबोध स्कूल छोडकर इस समय घर मे ही बैठा है—अभी तक कोई काम नही मिला।

महीने भर स ज्यादा हुआ रसमयी हालिशहर म ही है। पहले ऐसा होने पर दो चार दिन या ज्यादा से ज्यादा एक सप्ताह के बाद दात म तिनका दबाकर क्षेत्रमोहन आ उपस्थित होते एव कितनी मनुहारे करके स्त्री को घर लौटा ले जाते थे, कि तु इस बार इस नियम का व्यतिक्रम देखकर रसमयी कुछ चिंतित हो पडी है।

मुहल्ले का एक लडका राज नाव से गगा पार होकर हुगली ब्राच स्कूल मे पढने जाता था। उसने गाव मे अफवाह फैला दी कि क्षेत्र मोहन बाबू का विवाह है। दिन ठीक हो गया है।

यह सुनकर रसमयी की दीदी विनोदिनी एक दिन शाम का उस लडके को घर बुला लाई। उसे सदेश और रसगुल्ला खाने को दकर बोली—"बटा, सुना है हमारा क्षेत्तर फिर ब्याह कर रहा है ? यह क्या सच है ?"

लडका बोला—"हाँ सच तो है ही। हमारी क्लास म सुरश नाम का एक लडका पढता है, चूचडा मे उसके मामा का घर है उसी की ममेरी बहन के साथ ब्याह पक्का हुआ है।"

"ठीक मालूम है ?"

"ठीक मालूम है। सुरेश ने ही तो मुझसे कहा है। दिन तक पक्का हो गया है।"

"उसके मामा का क्या नाम है ?"

"नाम हरिश्चन्द्र चाटुज्जे। जज की अदालत मे काम करते हैं।"

"उनका मकान तुम जानते हो ?"

"हाँ जानता हूँ। सुरेश के साथ कई बार गया हूँ।"

"लडकी कितनी बडी है ?"

"यही मेरी उम्र की होगी।" लडके की उम्र तेरह साल की थी।

"देखने मे कैसी है ?"

"बहुत सुन्दर।"

विनोद कुछ देर तक सोचती रही। अन्त मे बोली—"अच्छा कल एक बार हम दोनो बहनो को वहाँ ले चलोगे बेटा ?"

'क्यो ?"

"उनसे एक प्रार्थना करनी है। ब्याह हो गया तो मेरी बहन को भी सुख नहीं मिलेगा—उनकी लडकी भी कुएँ मे जा पडेगी। कल एक बार हमे ले चलो।"

"कब ?"

"यही खा पी चुकने के बाद।"

"मेरे स्कूल का नागा जो होगा।"

"एक दिन के लिए मास्टर से छुट्टी ले लो। मैं तुम्हे एक रुपया दूँगी—पतग-डोर लेकर उडाना।"

लडका व्यग्रतापूर्वक राजी हो गया।

तृतीय परिच्छेद

दूसरे दिन ग्यारह बजे के समय दोनो बहनो को साथ लेकर लडका चूचडा की तरफ रवाना हुआ। गङ्गा पार करके भाडे पर घोडागाडी

करके, माधवीतला के हरीश बाबू के घर जा पहुँचा। दरवाजे की खिडकी के सामने गाडी ठहरी।

रसमयी बोली—"यही मकान है ?"

"हा।"

"अच्छा तुम गाडी म वैठे रहो। मैं चटपट उनसे मिल आती हूँ।"—यह कहकर दोनो ने नीचे उतरकर घर म प्रवेश किया।

उस पार की स्त्रियो मे उस समय कोई तो स्नान कर रही थी, कोई खाने वैठी थी, कोई भोजन करके आगन मे बैठी बाल सुखा रही थी। सहमा भले घर की दो अपरिचित महिलाओ को घर मे आते देखकर एक ने विस्मय के साथ पूछा—"तुम लोग कौन हो ?"

विनोदिनी बोली—"हम लोग हालिशहर से आप लोगो से मिलने आई हैं।'

स्त्री ने सदिग्ध भाव से कहा—"आओ, बैठो।"

दोनो बरामदे मे बैठ गई और बोली—"घर की मालकिन कौन है ?"

एक प्रौढा की तरफ सबने इशारा करके कहा—"य हैं।"

घर की मालकिन बोली—'तुम लोग क्या आई हो बेटी ?"

विनोदिनी बोली—"सुना है तुम्हारी लडकी का ब्याह है।"

गृहिणी बोली—"हा—मेरी छोटी लडकी का ब्याह है।"

"कब ?"

"यही माघ का बीसवा दिन तय हुआ है।"

"पात्र कौन है ?"

"क्षेत्रमोहन चक्रवर्ती—हुगली में मुख्तार हैं।'

"सौत के ऊपर लडकी द रही हो ?"

गृहिणी का विस्मय प्रत्येक बात पर बढता जा रहा था। उन्होन पूछा—"तुम पहचानती हो क्या ?"

विनोदिनी बोली—"पहचानती हूँ—खूब पहचानती हूँ। हमारे गाव म ही तो ब्याह हुआ है।"

गृहिणी बोली—"है—सौत है—किंतु उसने तो स्त्री का परित्याग कर दिया है।'

रसमयी अब तक चुपचाप बैठी सुन रही थी। उसका क्रोध क्रमश बढना जा रहा था। यह बात सुनकर उसके हाथ पैर कापने लगे—दोनो आँखें लाल हो गईं।

विनोदिनी ने पूछा— 'क्यो परित्याग किया है इस बारे म कुछ सुना है क्या ?

' सुना है वह चुडैल बडी शैतान है।"

यह सुनते ही रसमयी तडाक से उछलकर खडी हो गई। बरामदे के कोने म एक झाड़ू पडी थी। मुहूत भर म उसे दोनो हाथो से पकड कर गृहिणी को सडासड मारना शुरू कर दिया। साथ ही साथ कहने लगी— क्या ? क्या ? मरने को और कोई जगह नही मिली ? कोई जगह नही मिली, मेरे स्वामी के सिवा लडकी के लिए कोई दूसरा पात्र नही मिला ? क्या ?—'

इस अभावनीय घटना से घर के लोग क्षण भर के लिए हतबुद्धि हो गए। इसके बाद बडा गोल माल शुरू हुआ। छोटी उम्र की लडकियाँ रानी हुई कोई खाट के नीचे कोई सदूक की आड म छिप गइ। घर की नौकरानी बैठी बरतन माँज रही थी, वह बरतन पटककर—"अरे खून कर डाला रे, खून कर डाला रे, सिपाही, ओ सिपाही, ओ पहर वाल —कहती हुई अध श्वास स भागकर रास्त पर जा खडी हुई।

घर की और स्त्रिया ने आकर रसमयी को पकड लिया। रसमयी तब गृहिणी को छोडकर उन पर मुक्के तमाचे बरसाने लगी और थूक फेंकने लगी। किसी के कपडे फाड डाले, किसी के बाल नोच डाले, किसी को नोच लिया, किसी को दाँतो से काट लिया। हाँफती हाँफती

कहने लगी--"लडकी कहा गई ? उसे एक बार बाहर निकालो न ! दोनो ग्राँखें निकाल डालू। नाक काट लूँ। दाँत तोड दूँ।"

विनोदिनी अब तक चुपचाप खडी थी। अत मे सदर दरवाजे पर लोगो का हो हल्ला सुनाई दिया। तब वह बोली--"रसमयी--ठहर-ठहर, माफ कर, बहुत हो गया। चल, घर चल।"

नौकरानी भागती हुई ग्राइ ग्रौर घर के भीतर ग्राकर बोली--"ग्ररे जाने मत देना, थाने मे खबर कर ग्राई हूँ, दारोगा ग्रा रहा है।"

पुलिस का नाम सुनकर रसमयी बोली--"चल दीदी, चल !"

"जायगी कहा चुड़ैल--दारोगा का ग्राने दे, तब जाना।"--यह कहती हुई दो तीन स्त्रिया रसमयी को पकडने के लिए ग्रागे बढी।

रसमयी एक छलाँग म रसोई के कोने म से साग बनाने की छुरी लेकर सिर पर जार स घुमाकर बोली--"मुझे खून चढ गया है--सबका खून करके फासी चढूगी।'

यह देखकर सब स्त्रियाँ "हाय दैया" करती हुई कमरे म घुस गई ग्रौर कमरे का दरवाजा बन्द कर लिया। "पहरेदार--ग्रो पहरेदार--ग्रासामी भाग रहा है--" चिल्लाती हुई नौकरानी रास्ते पर निकल पडी।

रसमयी तब दीदी के साथ दरवाजे की खिडकी से बाहर निकल कर गाडी पर चढकर बोली--"पार घाट चलो !"

चतुथ परिच्छेद

कहने की जरूरत नही कि हरिश्चन्द्र बाबू ने क्षेत्रमोहन को कन्यादान नही दिया। उनकी गृहिणी बोली--"वह खूनी ग्रौरत है, ब्याह कर दिया तो मेरी लडकी का खून कर दगी। तुम कही ग्रौर चेष्टा करो।"

दूसरे दिन कचहरी मे हरीश बाबू के मुह से क्षेत्रमोहन ने सब बातें सुनी। गुस्से के मारे उनका सारा शरीर जलने लगा।

कचहरी से घर लौटकर, हाथ मुह धोकर, घर के भीतर बैठे क्षेत्र बाबू हुक्का पी रहे थे। इसी समय सहसा आंधी की तरह रसमयी ने प्रवेश किया। कुछ दर तक निवाक दष्टि से क्षेत्रमोहन की तरफ देखती रही—वह दृष्टि ऐसी थी जिस दृष्टि से पुराने जमाने म ऋषि मुनि लोगा को भस्म कर देते थे।

क्षेत्र बाबू बोले—"कैसे आइ ?'

रसमयी न आश्चयजनक सयम के साथ जवाव दिया—"एक श्राद्ध का जुगाड करन के लिए।"—उसके दोनो होठ गुस्से के मारे कापन लगे।

हुक्का पीते पीते क्षेत्रमोहन बाबू वोले—"किसका श्राद्ध ?"

हरीश चाटुज्जे की लडकी और लडकी की माँ का।"

"तब दो श्राद्ध कहो। साथ ही-साथ अपना भी कर डाला तो क्या बुराई है ?"

"वह अभी नही होगा। सुना है, इस बुडापे म शादी कर रहे हो ?"

हुक्का नीचे रखकर कुछ उत्तेजना के साथ क्षेत्रमोहन बाले—"कर तो रहा हूँ। क्या न करूँ ? तुम्हारे डर से न करूँ ?"

रसमयी चिल्लाकर हाथ हिलाकर बोली—"करो न, करके एक बार मजा तो देखो।"

'क्या करोगी तुम ?"

"ज्यादा कुछ नही। छुरे से उस लडकी की नाक काट लूगी। और छाती पर एक दस मन का पत्थर धर दूगी।"

'और तुम्हारे नाक-कान कोई काट डाले तो ?

"आओ ! काटो ! तुम्ही क्यो नही काटते !" —यह कहकर रसमयी ने अपनी कमर पर दोनो हाथ रखे और झुककर अपना मुह क्षेत्रमोहन के सामने बहुत पास कर दिया।

स्त्री का यह विनय देखकर क्षेत्रमोहन फिर हुक्का उठाकर अपने ध्यान मे पीने लगे। झुके रहने से जब थकावट महसूस होने लगी तो रसमयी ने अपना मुह हटा लिया और फिर से सीधी खडी हो गई। बोली—"तो छुरी तेज करके रखू ! सबध पक्का हो जाने पर खबर देना—चुपचाप शुभ काम मत कर डालना !"

क्षेत्रमोहन बोले—"तुम जब तक नही मरोगी तब तक ब्याह नही करूँगा। कब मर रही हो ?"

यह सुनकर रसमयी विद्रूप के स्वर म हा हा करके हस पडी। बोली—"मैं कब मरूँगी यह पूछ रहे हो ? रस्सी बामनी अभी नही मर रही है। उसे अभी बडी देर है—काफी समय है। तुम्हारी ब्याह करने की उम्र जब बीत जायगी—बूढे जजर हो जाओगे—चल फिर नहा सकोगे—जब कोई तुम्ह लडकी देने के लिए राजी नही होगा—तब मैं मरूँगी।"

दाम्पत्य रसालाप जब यहा तक पहुँचा था तभी बाहर एक गाडी के रुकने का शब्द सुनाई दिया। रसमयी बोली—"तो यही बात पक्की रही। अच्छा तो अब चलू। दीदी उस मुहल्ले म अपनी जेठानी के घर आइ थी—मैंने सोचा, चलो उसके साथ चलकर तुमसे मन की दो बातें कह आऊँ।" यह कहकर रसमयी वहा से चल दी।

पचम परिच्छेद

उक्त कथोपकथन के बाद छ महीने बीत गए हैं। रसमयी का गर्व फलीभूत नही हुआ। अब वह मृत्युशय्या पर पडी है।

खबर पाकर क्षेत्रमोहन बाबू हालिशहर पहुँचे। चिकित्सादि में कोइ त्रुटि नही हुई।

लेकिन रसमयी बच नही सकी।

गगा-तीर पर ले जाकर क्षेत्रमोहन ने स्त्री के मुह मे आग दी ससार की माया आश्चयजनक है—जिसने इतना कष्ट दिया था उस लिए भी क्षेत्रमोहन बाबू झर झर आसू बहाने लगे।

और भी छ महीने बीत गए। क्षेत्रमोहन के सहचारी बन्धु बा धव ने नाना स्थानो पर पत्नी का अन्वेषण करना शुरू किया। अ त हुगली के निकटवर्ती एक गाव मे एक सुयोग्य पत्नी का पता लगा क्षेत्रमोहन खुद जाकर देख आए। लडकी ऊँची पूरी है—देखन मे अच्छी है। इसके अलावा लडकी के पिता एक बडे जमीदार के नाय हैं—उस तरफ के मुकदमे भी इस सूत्र से क्षेत्रमोहन के ही हाथ आयेंगे। कन्या के पिता रजनीकात घोषाल अग्रेजी लिखे पढे व्यक्ति हैं।

विवाह की बातचीत पक्की हो गई है। वर के चाचा गाव से आ गए हैं—कल आशीर्वाद है। सुबह आफिस मे बैठे हुए दो चार मुवक्किलो से मुख्तार बाबू बातचीत कर रहे थे—चाचाजी 'बगवासी' पत्रिका लिये कमरे के कोन मे बठे हुक्का पी रहे थे। इसी समय डाकिया आय और क्षेत्रमोहन बाबू के हाथ म एक पत्र दे दिया।

लिफाफे के ऊपर हस्ताक्षर पर नजर डालते ही क्षेत्रमोहन का सि चकराने लगा। दो चार बार आँख रगडकर बार-बार लिफाफे का सर नामा देखने लगे। पास लाकर, दूर ले जाकर, तरह-तरह से देखा।

अत मे काँपते हुए हाथो से पत्र खोला। पत्र पढकर उनका मु विवर्ण हो गया। अपने मुवक्किलो से बाले—"आज जल्दी कचहर जाना है—वही पर बाकी बातचीत होगी।"

मुवक्किलो के चले जाने पर चाचाजी बोले—"चिट्ठी आई है क्य क्षेत्तर ?"

तडित् स्वर मे क्षेत्रमोहन बोले—"जी हाँ।"

"कहा की चिट्ठी है ?"

"यही तो सोच रहा हूँ।"

क्षेत्रमोहन के मुह की भगिमा और कठस्वर मे विकृति देखकर चाचा जी उठकर पास आये। उस समय क्षेत्रमोहन पत्र को दूसरी वार पढ रहे थे। उनकी सास बन्द होने लगी, आखें ऊपर चढ गईं।

चाचाजी ने जल्दी जल्दी कहा—"क्या हुआ ? क्या बात है ? कोई बुरी खबर तो नही है ?"

क्षेत्रमोहन बाबू ने चुपचाप चिट्ठी चाचाजी के हाथ म रख दी। उन्होंने पत्र लेकर चश्मा तलाश करके आखो पर लगाया। साधारण पतले चिटठी के कागज पर बगनी रग की मेजटा स्याही से लिखा हुआ पत्र था—ऊपर स्थान का नाम नही था, तारीख नही थी। पत्र नीचे लिखे अनुसार था—

श्री श्री दुगा
सहाय

प्रणामपूवक निवेदन है—

कि तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। मन मे सोच रखा है कि रसमयी मर गइ है, शायद चली गई है। अब विवाह कर लू। म मर गई हूँ पर यही सोचकर यह मत समझ लेना कि तुम्ह छुटकारा मिल गया है। घर के सामने जो बड का पेड है आजकल मैं उसी पर रहती हूँ। तुम क्या करते हो, कहाँ जाते हो, सब-कुछ मैं वहीं बैठी हुई देखती रहती हूँ। रात को पेड पर से उतरकर कभी कभी मैं तुम्हारे शयन घर मे आती हूँ। तुम्हारी खाट के चारो तरफ घूमती रहती हूँ। कभी कभी इच्छा होती है कि तुम्हारा गला दबाकर तुम्हें अपना साथी बना लू। मुझे यहाँ बडा अकेलापन लगता है। मेरा चेहरा अब बहुत खराब हो गया है। मेरे शरीर पर मास और चमडा नही है। सिर्फ हड्डियाँ हैं। वे भी सफेद नही हैं। गगा तीर पर मुझे जलाया था इसीसे हड्डियाँ

काली हो गई हैं। खर, अपने रूप की वर्णना अपने मुह से करना शोभा नहीं देता। विवाह मत करना, करोगे तो तुम्हारे भाग्य में बडी दुर्गति लिखी हुई है।

—रसमयी

चिट्ठी पढकर चाचाजी का चेहरा भी काला स्याह पड गया। डरते डरते उन्होंने पूछा—"यह किसके हाथ की लिखावट है पहचानते हो?'

'खूब पहचानता हूँ। उसीके हाथ की लिखावट है।"

"और किसी ने जालसाजी तो नहीं की है?"

"भगवान् जाने।'

चाचाजी पास रखी कुर्सी पर बैठ गए। थोडी देर सडक के शहतीरों की तरफ देखते रहे फिर बोले—"जयराम सीताराम—रामराघव रावणारि राम राम राम।'

चाचाजी का यह हाल देखकर क्षेत्रमोहन को और भी डर लगने लगा। वे बोले—'अच्छा चाचाजी—भूत कभी चिट्ठी लिखते हैं क्या?"

चाचाजी कहने लगे—"भूत मत कहो—उपदेवता कहो। जय राघव रामचन्द्र।'

दोनों ही निर्वाक थे। अन्त में चाचाजी बोले—"देखो किसी की बदमाशी तो नहीं है! ऐसा भी कहीं होता है? अनेक प्रकार की भूतों के उपद्रव की कहानियाँ सुनी हैं—लेकिन—ऐसी तो कभी नहीं सुनी। अच्छा—बहूजी की लिखी हुई पहले की कोई चिट्ठी है क्या? लिखावट मिलाकर तो देखें?

क्षेत्रमोहन बोले—"पुरानी चिट्ठियाँ मेरे पास हैं।"—कहकर भीतर से चार-पाँच चिट्ठियाँ ले आये।

चाचाजी ने चश्मे का काँच धोती से अच्छी तरह पोंछ लिया। बाद मे पत्र लेकर बडी सावधानी से हस्ताक्षर मिलाने लगे। अन्त में उन्हें टेबल

पर पटककर एक लम्बी सास लेकर बोले—"एक ही हाथ की लिखा-वट मालूम पडती है।" लिफाफे को उलट-पुलटकर देखने लगे। एक पैसे का घर वाला साधारण सफेद लिफाफा था। उस पर एक दो पैसे की टिकट लगी हुई थी। क्षेत्रमोहन के हाथ मे लिफाफा देकर बोले—"कहा की छाप है, देखो तो ?"

क्षेत्रमोहन बंगलानवीस मुख्तार थे, पर अग्रेजी अक्षर भी पढ लेते थे। छाप देखकर बोले –"हुगली की छाप है। कल की तारीख है।"

चाचाजी चुप बैठे रहे। बीच बीच मे अस्फुट स्वर मे गुनगुनाने लग—"जयराम—श्रीराम—सीताराम।"

कचहरी जाने का समय हो गया यह जानकर मुख्तार बाबू स्नान करके भोजन करने बठे—लेकिन कुछ खा नही सके। रसोईघर के बरामदे मे जहा बठकर वे भोजन कर रहे थे, वहा से वड के पेड का ऊपरी हिस्सा दिखाई दे रहा था। वे खाते जाते थे और बीच बीच म उस पेड की तरफ देखते जाते थे। एक बार पड की डाल खड खड करके हिल उठी। किसी के हँसने का स्वर भी सुनाई दिया। क्षेत्रमोहन बाबू फिर कुछ खा नही सके। उठ बैठे। मुँह धोकर बाहर आये और वड के पड की तरफ देखते रहे। दो तीन गिलहरिया डाला पर एक दूसर का पीछा कर रही थी। कुछ कौवे ऊँची शाखा पर बैठे जातीय सगीत गा रहे थे। इसके सिवा उन्ह और कुछ नही दिखाई दिया।

छठा परिच्छेद

उसी दिन शाम को क्षेत्रमोहन के सोने के कमरे मे बैठे चाचा भतीजे बातचीत कर रह थे। दिन मे चाचा जी ने दरवाजे के बाहर और भीतर दीवालो पर सब जगह रामनाम लिख डाला। अब दोना ही एक बिछौने पर सोयेंग। तकिये के नीचे एक 'कृत्तिवासी रामायण' रखी रहेगी। कमरे म सारी रात बत्ती जलती रहगी इसका भी बदोबस्त कर लिया है।

क्षेत्रमोहन बोले—"अच्छा तो चाचाजी, क्या किया जाय ? विवाह बन्द कर दिया जाय ?"

चाचाजी बोले—"मुझे तो इसकी जरूरत नजर नही आती।"

"अगर कोई उपद्रव या अत्याचार हुआ तो ?"

चाचाजी थोडी देर तक सोचते रहे। अत म बोले—"डरने का कोई कारण नजर नही आता।"

"उसने यह जो कहा है कि—इच्छा करती है कि तुम्हारा गला दवा दू ?"

"नही—यह नही कर सकेगी। हजार हो उसके पवि ही तो हो!"

"और यह जो लिखा है कि—ब्याह मत करना, करोगे तो तुम्हारी बुरी दुगति होगी।'

"बुरी दुगति होगी इसका मतलब यह भी तो हो सकता है कि मैं तुम्हारी बडी दुगति करूँगी। इसका मतलब यह मालूम पडता है कि ज्यादा उम्र मे विवाह करने पर समस्त सासारिक अशाति पैदा होती है, वही तुम्हार जीवन मे घटेगी।"

क्षेत्रमोहन बाबू चुप रहे। मन म डर भी काफी है—पर विवाह करने का लोभ सवरण करना भी उनके लिए असाध्य है।

दूसरे दिन आशीर्वाद की रस्म हो गई। लेकिन क्षेत्रमोहन को भूत का लिखा पत्र मिला है इस बात क चारो तरफ फलने म भी देर नही लगी। अन्त मे नायब रजनी बाबू के काना तक यह बात पहुँची। यह पहले ही बता चुके हैं कि वे अग्रेजी पढे लिखे व्यक्ति हैं—यह सुन-कर व हो हो करक हँस पडे। बोले—"भूत! इस बीसवी शताब्दी म भूतो पर विश्वास ?'

विवाह का दिन फाल्गुन की अष्टमी स्थिर हुआ। अब सिर्फ पाँच दिन बाकी हैं। दोनो तरफ से सब आयोजन हो रहे हैं। शाम को बैठा

मे क्षेत्र बाबू कई मित्र दोस्तो के साथ बैठे थे। इनमें एक सरकारी वकील भी थे जिनका नाम मनोहर बाबू है। उनकी उम्र चालीस पार कर गई है। आँखो पर सोने के फ्रेम का चश्मा है। सिर पर घन बाल हैं—मुह बडी बडी मूछ दाढी से ढँका है। हाथ के नाखून बडे बडे हैं—साराश यह कि वे थियोसोफिस्ट हैं। क्षेत्र बाबू को भूत का पत्र मिला है, यह समाचार मिलने के बाद से मनोहर बाबू ने उनके साथ घनिष्ठता स्थापित कर ली है। दूसरे नये जमाने के युवक हैं जिनका नाम सुरेन्द्रनाथ है। ये एल ए फेल मुख्तार हैं। इन्होने बहुत से अग्रेजी उपन्यास पढे हैं।

सुरेन्द्रनाथ बोले—"क्षेत्र बाबू, एक बात मेरे खयाल म आ रही है। मैंने अनेक उपन्यास पढे हैं। मान लो एक दुघटना हो गई है, जैसे रेल की टक्कर या नाव का डूबना या ऐसा ही और कुछ। सबने यही समझ रखा है कि अमुक व्यक्ति मर गया है, मृत्यु की चश्मदीद गवाहिया का भी अभाव नही है। लेकिन पुस्तक समाप्त होने पर मालूम पडा कि वह जीवित है। इसीलिए मुझे लगता है कि या तो आपकी पत्नी अब भी जीवित हैं या यह चिट्ठी जाली है। लेकिन क्या आपका पक्का विश्वास है कि यह चिट्ठी उन्होकी लिखी हुई है—जाली नही है। तब तो आपकी पत्नी जीवित है इस बात पर विश्वास करने के सिवा और कोई उपाय नही है। क्योकि इस बीसवी शताब्दी मे भूत के अस्तित्व पर किसी तरह भी विश्वास नही किया जा सकता।"

थियोसाफिस्ट वकील बाबू यह सुनकर बोले—"क्यो महाशय—बीसवी शताब्दी मे भूत के अस्तित्व पर किसी भी तरह विश्वास क्यों नही कर सकते ?"

नये मुख्तार बाबू बोले—"कारण यह कि भूत को मैंने कभी देखा नही है।'

काली हो गई हैं। खर, अपने रूप की वर्णना अपने मुह से करना शोभा नही देता। विवाह मत करना, क्योंकि तो तुम्हारे भाग्य म बडी दुर्गति लिखी हुई है।

—रसमयी

चिट्ठी पढकर चाचाजी का चेहरा भी काला स्याह पड गया। डरते डरते उन्होने पूछा—"यह किसके हाथ की लिखावट है पहचानते हो?"

'खूब पहचानता हूँ। उसीके हाथ की लिखावट है।"

"और किसी ने जालसाजी तो नही की है?'

"भगवान् जाने।"

चाचाजी पास रखी कुर्सी पर बैठ गए। थोडी देर सडक के शहतीरो की तरफ देखते रहे फिर बोले—'जयराम सीताराम—राम राघव रावणारि राम राम राम।'

चाचाजी का यह हाल देखकर क्षेत्रमोहन को और भी डर लगने लगा। वे बोले—"अच्छा चाचाजी—भूत कभी चिट्ठी लिखते हैं क्या?"

चाचाजी कहने लगे—'भूत मत कहो—उपदेवता कहो। जय राघव रामचन्द्र।"

दोनो ही निर्वाक् थे। अन्त मे चाचाजी बोले—"देखो किसी की बदमाशी तो नही है! ऐसा भी कही होता है? अनेक प्रकार की भूतो के उपद्रव की कहानिया सुनी हैं—लेकिन—ऐसी तो कभी नही सुनी। अच्छा—बहूजी की लिखी हुई पहले की कोई चिट्ठी है क्या? लिखावट मिलाकर तो देख?'

क्षेत्रमोहन बोले—'पुरानी चिट्ठियाँ मेरे पास हैं।'—कहकर भीतर से चार-पाँच चिट्ठिया ले आये।

चाचाजी ने चश्मे का काच धोती से अच्छी तरह पोछ लिया। बाद मे पत्र लेकर बडी सावधानी से हस्ताक्षर मिलाने लगे। अन्त मे उन्हे टेबल

पर पटककर एक लम्बी साँस लेकर बोले—"एक ही हाथ की लिखा वट मालूम पड़ती है।" लिफाफे को उलट पुलटकर देखने लगे। एक पैसे का घर वाला साधारण सफेद लिफाफा था। उस पर एक दो पैस की टिकट लगी हुई थी। क्षेत्रमोहन के हाथ में लिफाफा देकर बोले—"कहा की छाप है, देखो ता?"

क्षेत्रमोहन बँगलानवीस मुख्तार थे, पर अग्रेजी अक्षर भी पढ लेते थे। छाप देखकर बोले —"हुगली की छाप है। कल की तारीख है।"

चाचाजी चुप बैठे रहे। बीच बीच में अस्फुट स्वर में गुनगुनान लग—"जयराम—श्रीराम—सीताराम।"

कचहरी जाने का समय हो गया यह जानकर मुख्तार बाबू स्नान करके भोजन करने बैठे—लेकिन कुछ खा नही सके। रसोईघर के बरामदे में जहा बैठकर वे भाजन कर रहे थे, वहाँ से बड़ के पेड़ का ऊपरी हिस्सा दिखाई दे रहा था। वे खाते जाते थे और बीच बीच म उस पेड़ की तरफ देखते जाते थे। एक बार पेड़ की डाल खड़ खड़ करके हिल उठी। किसी के हँसने का स्वर भी सुनाई दिया। क्षेत्रमोहन बाबू फिर कुछ खा नही सके। उठ बठे। मुह धोकर बाहर आये और बड़ क पेड़ की तरफ देखते रहे। दो तीन गिलहरिया डालो पर एक दूसर का पीछा कर रही थी। कुछ कौवे ऊँची शाखा पर बैठे जातीय सगीत गा रहे थे। इसके सिवा उन्ह और कुछ नही दिखाई दिया।

छठा परिच्छेद

उसी दिन शाम का क्षेत्रमोहन के सोने के कमरे मे बठे चाचा भतीने बातचीत कर रह थ। दिन मे चाचा जी ने दरवाजे के बाहर और भातर दीवालो पर सब जगह रामनाम लिख डाला। अब दोनो ही एक बिछौने पर सोयगे। तकिय के नीचे एक 'कृत्तिवासी रामायण' रखी रहेगी। कमरे म सारी रात बत्ती जलती रहेगी इसका भी बदोबस्त कर लिया है।

क्षेत्रमोहन बोले—"अच्छा तो चाचाजी, क्या किया जाय ? विवाह बन्द कर दिया जाय ?"

चाचाजी बोले—"मुझे तो इसकी जरूरत नजर नही आती।"

"अगर कोई उपद्रव या अत्याचार हुआ तो ?"

चाचाजी थोडी देर तक सोचते रहे। अत मे बोले—"डरने का कोई कारण नजर नही आता।

"उसने यह जो कहा है कि—इच्छा करती है कि तुम्हारा गला दबा दू ?'

"नही—यह नही कर सकेगी। हजार हो उसके पति ही तो हो!"

"और यह जो लिखा है कि—ब्याह मत करना, करोगे तो तुम्हारी बुरी दुगति होगी।'

'बुरी दुगति होगी इसका मतलब यह भी तो हो सकता है कि मैं तुम्हारी बडी दुगति करूँगी। इसका मतलब यह मालूम पडता है कि ज्यादा उम्र मे विवाह करने पर समस्त सासारिक अशाति पैदा होती है, वही तुम्हारे जीवन मे घटेगी।"

क्षेत्रमोहन बाबू चुप रहे। मन मे डर भी काफी है—पर विवाह करने का लोभ सवरण करना भी उनके लिए असाध्य है।

दूसरे दिन आशीर्वाद की रस्म हो गई। लेकिन क्षेत्रमोहन का भूत का लिखा पत्र मिला है इस बात के चारो तरफ फैलने मे भी देर नही लगी। अन्त मे नायब रजनी बाबू के कानो तक यह बात पहुँची। यह पहले ही बता चुके हैं कि वे अग्रेजी पढे लिखे व्यक्ति हैं—यह सुनकर वे हो हो करके हँस पडे। बोले—"भूत ! इस बीसवी शताब्दी मे भूतो पर विश्वास ?

विवाह का दिन फाल्गुन की अष्टमी स्थिर हुआ। अब सिर्फ पाँच दिन बाकी हैं। दोनो तरफ से सब आयोजन हो रहे हैं। शाम को बैठक

मे क्षेत्र बाबू कई मित्र दोस्तों के साथ बैठे थे। इनमें एक सरकारी वकील भी थे जिनका नाम मनोहर बाबू है। उनकी उम्र चालीस पार कर गई है। आँखों पर सोने के फ्रेम का चश्मा है। सिर पर घन बाल हैं—मुँह बड़ी-बड़ी मूंछ दाढ़ी से ढँका है। हाथ के नाखून बड़े बड़े हैं—साराश यह कि व थियोसोफिस्ट हैं। क्षेत्र बाबू को भूत का पत्र मिला है यह समाचार मिलने के बाद से मनोहर बाबू ने उनके साथ घनिष्ठता स्थापित कर ली है। दूसरे नये जमाने के युवक हैं जिनका नाम सुरेन्द्रनाथ है। य एल ए फेल मुख्तार हैं। इन्होन बहुत स अग्रजी उपन्यास पढ़े हैं।

सुरेन्द्रनाथ बोले—"क्षेत्र बाबू, एक बात मेरे खयाल म आ रही है। मैंने अनेक उपन्यास पढ़े हैं। मान लो एक दुर्घटना हो गई है, जैसे रेल की टक्कर या नाव का डूबना या ऐसा ही घोर युद्ध। सबने यही समझ रखा है कि प्रमुख व्यक्ति मर गया है, मृत्यु की चश्मदीद गवाहियों का भी अभाव नही है। लेकिन पुस्तक समाप्त होन पर मालूम पड़ा कि वह जीवित है। इसीलिए मुझे लगता है कि या तो आपकी पत्नी अब भी जीवित हैं या यह चिट्ठी जाली है। लेकिन क्या आपका पक्का विश्वास है कि यह चिट्ठी उन्होंने लिखी हुई है—जाली नही है। तब तो आपकी पत्नी जीवित है इस बात पर विश्वास करने के सिवा और कोई उपाय नहीं है। क्योकि इस बीसवी शताब्दी मे भूत के अस्तित्व पर किसी तरह भी विश्वास नहीं किया जा सकता।"

थियोसोफिस्ट वकील बाबू यह सुनकर बोले—"क्यो महाशय—बीसवीं शताब्दी म भूत के अस्तित्व पर किसी भी तरह विश्वास क्या नही कर सकते ?"

नए मुख्तार बाबू बोले—"कारण यह कि भूत को मैंने कभी देखा नही है।'

यह सुनकर मनोहर बाबू विज्ञ की तरह हँसकर बोले—"सम्राट सप्तम एडवर्ड को कभी देखा है ?"

"नही, नही देखा ।"

"व हैं इस बात पर विश्वास करते हैं ?"

"हा करता हूँ । इसका कारण यह कि मेरे न देखने पर भी हजारों लोगों ने उन्हे देखा है । उनके दस-बीस चित्र भी देखे हैं । लेकिन भूत मैंने खुद देखा है, यह बात आज तक किसी को कहते नही सुना । सभी यह कहते हैं कि, खूब विश्वस्त व्यक्ति के मुह से सुना है कि उन्होने स्वय भूत देखा है ।'

मनोहर बाबू अपनी घनी दाढी मे लम्बे नाखूनो की उँगलिया चलाते हुए बोले—"आप कहते हैं कि हजारो लोगो ने सम्राट को देखा है । इसी तरह हजारो लोगो ने अशरीरी आत्मा का भी प्रत्यक्ष देखा है । इसी प्रकार दस बीस भूतो के चित्र भी मैं आपको दिखा सकता हूँ । अगर देखना चाह तो एक दिन मरे घर आइए । मेरी एक पुस्तक म केटी किंग का चित्र है । प्रथम चार्ल्स के समय मे केटी किंग नाम की एक लडकी थी । सोलह साल की उम्र म उसकी मृत्यु हो गइ । गत शताब्दी के बीच म अमरीका और यूरोप के नाना स्थानो पर केटी किंग स्थूल शरीर धारण करके आविर्भूत हुई थी । उसकी नाडी परीक्षा की गई है, उसके शरीर म छुरी भोककर देखा गया है, ठीक मनुष्य की तरह रक्त निकला है, उसके फोटो तक लिय गए हैं, फोटो पर से बनाया हुआ एक चित्र मेरी पुस्तक मे है—आओगे तो दिखाऊँगा ।"

सुरेन्द्र बाबू मृदु मृदु मुस्कुराते हुए बोले—"आप भी खूब हैं । इन सब बातो पर विश्वास करते हैं ? भूत वादियो की कितनी बदमाशियाँ पकडी गई हैं जिसकी सीमा नही । केटी किंग के शरीर मे छुरी भोकने पर रक्त निकला था, इसी बात को आपने विश्वास करने का प्रमाण समझकर उल्लेख किया है । मुझे तो ठीक इससे उल्टा मालूम पडता

है। छुरी भोंकने पर रक्त नही निकलता—पर एक शरीरी मनुष्य सामने खड़ा है ऐसा लगता—तभी तो विश्वास होता कि यह वास्तविक मनुष्य नही है। यहा भी देखो, भूत घर के सामने ही बड के पेड़ पर रहता है। जब चिट्ठी लिख सकता है तो अनायास मूर्त होकर अपना वक्तव्य भी दे सकता है। लेकिन ऐसा न करके लिफाफा, कागज, स्याही, कलम आदि जमा करने का कष्ट उसने स्वीकार किया है। इतना ही नही—चिट्ठी टेबल पर रख जाता तो भी काम हो जाता, पर नही, एक मील दूर पोस्ट आफिस म उसे छोड़ने गया। फिर दो पैसे खर्च करके टिकट खरीदने गया। जनाब, भूतो की दुनिया मे पैसा अगर वास्तव मे इतना सस्ता हो तो चलो हम लोग भी वही चलकर प्रक्टिस शुरू करें।"

मनोहर बाबू जरा विरक्ति के साथ बोले—"जनाब यह हँसी-मजाक की बात नही है। ये सब गम्भीर बातें हैं। काफी सोच विचार से आलोचना किये बिना इस बारे म मतामत देना उचित नही। भूतो की दुनिया से डाक से चिट्ठी यह पहली बार ही नही आई है। हिमालय से महात्मा लोग भी बीच बीच मे डाक से चिट्ठी भेजा करते हैं। कुटुबी लाल नाम के एक महात्मा ने इस प्रकार की अनेक चिट्ठिया हमारी मेडम ब्लेवेट्स्की के नाम लिखी थी। व भी इच्छा करते ही साक्षात आविर्भूत होकर वक्तव्य देकर जा सकते थे या चिट्ठी उठाकर टेबल पर डाल सकते थे—लेकिन नही, वे डाक से ही चिट्ठिया भेजते थे।"

यह सुनकर शिक्षित मुरनार बाबू मृदु-मृदु हसने लगे। बोले—"कुटुबीलाल की चिट्ठिया तो कभी की जाली साबित हो चुकी हैं। डाक्टर हजसन नाम का एक वैज्ञानिक खुद भारतवर्ष आकर ... सारे मे अनुसधान करके प्रमाणित कर गया है कि मेडम ... दामोदर नाम के व्यक्ति ने य तमाम जाली चिट्ठियाँ ...

यह सुनकर थियोसोफिस्ट बाबू ने भौंहे सिकोडकर विरक्ति के स्वर मे कहा --"उन सब ईर्ष्यालु लेखको की पुस्तकें मत पढो। मेरे पास आना तो मैं तुम्हे अच्छी अच्छी पुस्तकें पढने को दूँगा। उन्हें पढकर तुम्हारा सारा अविश्वास दूर हो जायगा। मेडम ब्लेवेटस्की कितनी बडी हस्ती हैं यह उनकी लिखी आइसेस अनवेल्ड (Ices unveiled) पुस्तक पढने पर अच्छी तरह समझ जायँगे।'

सुरेन्द्र बाबू मुस्कुराकर बोले—"यह पुस्तक तो नही पढी, पर एडमंड गैरट की लिखी हुई—'आइसेस वेरी मच अनवेल्ड' (Ices very much unveiled)—'आर दि स्टोरी आव दि ग्रेट महात्मा होक्स' पुस्तक पढी है। लायब्रेरी मे है। देखना चाहे तो लाकर दे सकता हूँ।"

यह सुनकर मनोहर बाबू गुस्से के मारे लाल हो गए। बोले—"आपने सिर्फ एक यह बात सीख ली है। बुरा न कहा जा सके ऐसी कोई अच्छी चीज नही है। सब कुचक्री बदमाश लोगो ने झूठ मूठ को मेडम के ऊपर दोष लगाया है।'

इसी समय बाहर से आवाज आई—"बाबू—चिट्ठी आई है।"

दूसरे ही क्षण डाकिये ने भीतर आकर क्षेत्र बाबू के हाथ मे एक पत्र रख दिया। पत्र हाथ मे लेते ही क्षेत्रमोहन बाबू की आँखें स्थिर हो गईं। बोले—' लो देखो, फिर वही।'

चिट्ठी खोलकर उन्होने पढी और उसे सबके सामने टेबल पर पटक दिया। थियोसोफिस्ट महाशय ने बडे आग्रह के साथ उसे लेकर पढा। अन्त मे उसे नवीन मुख्तार के हाथ मे दे दिया।

पत्र इस प्रकार था—

श्री श्री दुर्गा
सहाय

प्रणामपूर्वक निवेदन है—

तुम्हारा इतना साहस ! आशीर्वाद तक गायब हो गया है। तुमने मन मे सोचा है कि मैंने तुम्हे जो पत्र लिखा था वह कोरी आवाज है। रस्मी बामनी ऐसी स्त्री नही है। मेरे मना करने पर भी ब्याह करोगे। अब भी सावधान हो जाओ। यह दुमति छोड दो। नही तो एक दिन रात को जब तुम भरी नीद मे सो रह होगे, मैं बड के पेड पर से उतरकर तुम्हारी छाती पर एक दस मन का पत्थर रख दूँगी। फिर नीद कभी नही खुलेगी।

—रसमयी

एक एक करके सबने पत्र पढा। पत्र पढकर सब स्तंभित हुए बैठे रह। शिक्षित मुख्तार बाबू का मुह भी उतर गया। फिर भी वे अपने मन से सशय को दूर करके बोले—"अच्छा क्षेत्र बाबू एक बार फिर अच्छी तरह लिखावट की परीक्षा करके देखो। आपकी स्त्री के हाथ का लिखा हुआ है न ? या कही पर काई सदहजनक फक है ?"

क्षेत्र बाबू बोले—"काई सदेह नही है। सिफ हाथ की लिखावट मे मेल होने पर भी मैं सदेह करता। वह जहा जहा लिखने की जो गलतियाँ हमेशा करती थी, इस चिट्ठी मे भी वे हैं। वह हमेशा श्री श्री एक साथ और दुगा कुछ फासले स लिखती थी। इन दोनो चिट्ठियो मे भी यही बात है। इसके अलावा चिट्ठियो मे सब वे ही शब्द हैं जिनका वह जीवित दशा म हमेशा व्यवहार करती थी।"

सब लोग निस्तब्ध हुए बैठे रह। थोडी देर बाद सुरेंद्र बाबू गला साफ करके बोले—"उनकी मृत्यु के समय आप हाजिर थे ?"

क्षेत्र बाबू बोले—"था।"

'साथ ही साथ घाट पर गये थे ?"

"गया था।"

"चिता पर उनकी दह रखने के बाद आपने उनका मुँह देखा था ?"

"देखा ही नही बल्कि मैंने अपने हाथ से मुह मे आग दी है। ओहो, तुम जो सोचते हो सो बात नही है। कोई गलती नही हुई है।"

नय मुख्तार बाबू तब सिर नीचा करके बैठे रहे।

एक व्यक्ति बोला—"There are more things in heaven and earth, Horatio, than are dreamt of in your philosophy" (होरेशियो, स्वर्ग और मर्त्य म ऐसी अनेक चीज हैं जिनके बारे मे तुम्हारा दर्शन शास्त्र ख्वाब में भी नही जान सकता।)

एक दूसरे व्यक्ति ने कहा—"यह तो ठीक है, यह तो ठीक है। मान लो हमारे देश म, सिर्फ हमारा देश ही क्यो, सभी देशों मे आदिकाल स जो एक विश्वास प्रचलित है कि भूत नाम की चीज है, उसकी क्या कोई बुनियाद नही है ?"

सरकारी वकील बाबू बोले—"सिर्फ अंधविश्वास की बात नही है। गत पचास वर्षों मे यूरोप और अमरीका मे भूतो का अस्तित्व निस्संशय प्रमाणित हो चुका है। किसी समय महान् वैज्ञानिक टिंडाल ने भी भूतो को हँसकर उडा दिया था। लेकिन अब शिक्षित समाज का वह भाव नही रहा। विख्यात संपादक स्टेड साहब ने अपने एक ग्रंथ म लिखा है—"Of all the vulgar superstitions of the half-educated, none dies harder than the absurd delusion that there are no such things as ghosts" (अर्ध शिक्षित लोगो के मन मे जितने बुरे कुसंस्कार हैं, उनम से भूत नही है यह अद्भुत भ्रम ही सबसे प्रबल है।" यह कहकर विजयी वीर की तरह उन्होने सुरेन्द्र बाबू की तरफ कटाक्ष किया।

शाम हो गई थी। उस दिन तो सभा भग हो गई। बड के पेड के नीचे से निकलने म सुरेन्द्र बाबू की दम भी कांपने लगा।

सप्तम परिच्छेद

चाचाजी कहीं घूमने गये थे। शाम को घर लौटकर दूसरे पत्र की
त सुनकर बोले—'देखो क्षेत्तर,—बात धीरे-धीरे बढती जा रही
। ब्याह को इस समय बन्द रखो तो ही ठीक है। मेरी राय है कि
ल पूरा होते ही गया जाकर एक पिंडदान कर आओ तो सब ठीक
जायगा। साल पूरा होने म तो अब ज्यादा देर नही है—महीना-
र ही रहा है। इसके बाद निर्विघ्न काम पूरा करेंगे।"

क्षेत्र बाबू बोले—'ठीक है—यही ठीक है।"

कन्या के बाप से कह सुनकर ब्याह का दिन आगे सरका दिया
ा। भेजे हुए निमन्त्रण-पत्र वापस मगवा लिये गए। सबने जान
ाया कि गया जाकर श्राद्ध पूरा करके क्षेत्र बाबू ब्याह करेंगे।

क्षेत्र बाबू के हाथ में इसी बीच एक बडा जालसाजी का मुकदमा
ाया। मुकदमा कोर्ट के सुपुर्द हो गया। उसके समाप्त न होने तक
त्र बाबू गया नही जा सके। फरियादी पक्ष के गवाहो को दिन भर
ालीम देनी पडती थी।

मुकदमे के एक दिन पहले शाम को कचहरी से लौटने के समय
समयी का तीसरा पत्र मिला। उसमे और बातो के साथ यह भी
लिखा था—

"सुना है गया म मेरा पिंडदान देने जा रहे हो। शायद तुमने सोचा
है कि पिंड देने पर मेरा उद्धार हो जायगा तब तुम मुक्त होकर ब्याह
कर सकोगे। अगर तुम गया गये तो म चोर का भेष धारण करके रेल-
गाडी म घुसकर तुम्हारी छाती मे छुरा भोक दूगी।"

क्षेत्र बाबू फिर घर नही जा सके। कचहरी की पोशाक मे ही मनो-
हर बाबू के घर जाकर उन्हे पत्र दिखाया।

मनोहर बाबू पत्र पढकर बोले—"यह तो बडी मुसीबत है। विवाह
करने की आशा का तुम्हे परित्याग करना होगा।"

क्षेत्र बाबू बोले—"अच्छा, क्या अशरीरी आत्मा मनुष्य की छाती म छुरा भोक सकती है ? आपकी थियोसोफी क्या कहती है ?"

मनोहर बाबू एक मोटी सी पुस्तक आलमारी से निकालकर एक जगह से खोलकर बोले—"इस बारे म थियोसोफी शास्त्र का मत यह है कि मुक्त आत्माए साधारणत अशरीरी होती हैं। लेकिन कभी कभी वे अपने आपको मेटिरियलाइज अर्थात जड देह म परिणत कर लती हैं। उनकी ऐसी क्षमता है कि वायु, पेड, पौधा से, जमीन से—यहाँ तक कि आस पास के लोगा की मनुष्य देह से आवश्यक पदार्थ लेकर अपनी दह चलाती हैं। इसलिए ऐसी अवस्था म छाती म छुरा भोक दना जरा भी असम्भव नही है। और यह भी तो सोचो कि जो हाथ कलम लेकर चिट्ठी लिख सकता है वह हाथ छुरा क्यो नही पकड सकेगा ?'

क्षेत्र बाबू कुछ देर तक चिंता करते रहे। अन्त मे बोले—"देखो ये पत्र जाली हैं या नही इसकी एक बार अच्छी तरह परीक्षा करनी चाहिए। मैं सोचता हूँ कि यह जो कलकत्ता से हाथ की लिखावट की परीक्षा करने वाला वैज्ञानिक हमारे मुकदमे म साक्षी देने आ रहा है, उसके द्वारा इन चिट्ठियो की परीक्षा कराई जाय तो कैसा रह ?"

थियोसोफिस्ट बाबू क्षेत्र मोहन के इस सदेह करन पर मन ही मन नाराज हुए। प्रकट मे बोले—"आपकी इच्छा हो तो परीक्षा करवा सकते हैं।

दूसरे दिन सेसन कोट मे जालसाजी के मुकदमे का विचार शुरू हुआ। इसलिए परीक्षक सोफ्ट मोर साहब ने गवाही दी। शाम को कचहरी उठने पर क्षेत्रमोहन ने डाक बँगले पर जाकर सोफ्टमोर साहब को भूत के तीनो पत्र दे दिये। साहब बोले—'कल सुबह परीक्षा करके बताऊँगा।"

दूसरे दिन सुबह सरकारी वकील मनोहर बाबू को साथ लेकर क्षेत्र-मोहन बाबू फिर डाक बँगले गये। साहब बोले—"परीक्षा के लिए दिये गए तीनो पत्र और असली पत्र सभी एक ही हाथ के लिखे हुए हैं।"

यह सुनकर क्षेत्रबाबू का मुह छोटा हो गया। मनोहर बाबू बोले—'साहब, मेहरबानी करके एक सर्टिफिकेट लिख दीजिये।'

साहब ने सोचा कि जरूर जरूर इन पत्रो को लेकर कोई मुकदमा खडा होगा। फिर साक्षी देने शायद आना पडे और फीस मिले। इस लिए उन्होने खुशी से सर्टिफिकेट लिख दिया।

घर जाते जाते मनोहर बाबू क्षेत्र बाबू से बोले—"इन चिट्ठिया की नकल और साहब का सर्टिफिकेट अगर अपने 'थियोसोफिकल रिव्यू' नामक मासिक पत्र म छपने भेजें तो क्या इसम आपको आपत्ति है?—हम लोग जिसे स्पिरिट राइटिंग कहते हैं उसका यह अकाट्य प्रमाण होगा।"

क्षेत्र बाबू बोले—"इसमे मुझे कोई आपत्ति नही है।"

'थियोसोफिकल रिव्यू' के अगले अक म सर्टिफिकेट के साथ चिट्ठियो की नकल प्रकाशित हुई। जगह जगह से बडे-बडे थियोसोफिस्टो ने क्षेत्र बाबू को पत्र लिखना शुरू किया। कई तो हुगली तक आये और पत्रा को अपनी आखो से देखकर विस्मय विमूढ हो गए।

अष्टम परिच्छेद

थियोसोफिस्ट जगत् मे क्षेत्र बाबू की ख्याति की सीमा नहीं रही, लेकिन इससे उन्हें जरा भी सान्त्वना नही मिली। पत्रा के जाली साबित होने पर वे विवाह करके सुखी हो सकते थे। डर के मारे गया जाकर पिंडदान भी नही कर सके। शायद उनके भाग्य मे दूसरा व्याह नही लिखा है।

चैत आ गया—वसन्त की हवा चल रही है। होली के कारण कचहरी बन्द है। क्षेत्रमोहन अपने घर मे बैठे अपने भाग्य के बारे मे

सोच रहे थे, इसी समय किसी ने आकर खबर दी कि हालिशहर म उनकी ससुराल में बडी आफत आई है। होली म आतिशबाजी जलाते समय एक बम फट जाने के कारण उनका छोटा साला सुबोध जख्मी हो गया है। उसे हुगली के अस्पताल म लाया गया है।

यह सुनकर क्षेत्र बाबू रुक नही सके—गाडी करके अस्पताल की तरफ भाग। वहाँ जाकर देखा कि लडके की अवस्था सकटापन्न है—बिछौने के नीचे फश पर बैठी विधवा विनोदिनी रो रही है। क्षेत्र मोहन को देखकर वह और जोर से रोने लगी।

दिन भर दवा दारू और चिकित्सा चलती रही। शाम को डाक्टर बोले कि अब कोई डर की बात नही है।

क्षेत्रमोहन अपनी साली से बोले--"शाम हो गई है, अब घर चलो।

विनोदिनी बोली--"मैं सुबोध को अकेला छोडकर घर नहा जा सकूगी।

"दिन भर से कुछ नही खाया है—नहाना धोना तक नही हुआ है।'

"न सही। मैं नही जाऊँगी।"

यह देखकर अस्पताल के डाक्टर बोले—"आपका घर जाना ही होगा। यहा रात को नहीं रह सकते। कल सुबह फिर आ जाना। अब काई डर की बात नही है। जो डर था वह दूर हो गया है। हम लोग सेवा सुश्रूषा के लिए हैं—आप चिन्ता न करें—आप घर जायँ।'

बहुत समझाने पर विनोदिनी राजी हो गई। क्षेत्रमोहन से बोली, तुम मुझे हालिशहर ले चलो। रात वहीं रहना। कल सुबह मुझे फिर यहा पहुँचा देना।'

क्षेत्रमोहन ने ऐसा ही किया। वे रात भर हालिशहर म रहे।

सुबह उठकर अपने हाथ मे एक चिलम तम्बाकू तैयार करके क्षेत्र-मोहन हुक्का पी रहे थे कि इसी समय घर के बाहर बडा शोर हुआ। चटपट हुक्का रखकर उन्होने बाहर आकर देखा कि लाल पगडी से सारा मकान घिरा हुआ है। घोड पर स्वय पुलिस के सुपरिण्टेडेण्ट साहब दरवाजे पर खडे हैं। साथ मे कई दारोगा और हेड कास्टेबल भी हैं।

पुलिस के साहब से क्षेत्रमोहन का परिचय था। उन्होने झुककर साहब को सलाम किया।

साहब चुरुट पीते पीते बोले—"हल्लो मुख्तार, तुम यहा क्या करना है ?'

क्षेत्र बाबू बोले—"हुजूर यह मेरी ससुराल है।

'यहा टुमारा ससुराल है। ठीक, हम टुमारा ससुराल सर्च करगा।'

"क्या हुजूर ?"

'यहाँ बम तयार होता है कि नही देखेगा। यह दखो सर्च वारट।" यह कहकर साहब न सर्च वारट क्षेत्रमोहन के हाथ मे रख दिया।

क्षेत्र बाबू ने उसे उलट पुलटकर देखा और फिर साहब को लौटा दिया। बोल—"हुजूर मालिक हैं, जो चाह कर सकते हैं।"

'औरतो को अलग कर दो।'

पुलिस ने मकान म प्रवश किया। स्त्रियो मे सिफ विनोदिनी थी। उसन पुलिस के डर से कही छिपने की जरूरत नही समझी। सुमरिनी हाथ म लिय आँगन म तुलसी चौरे के पास बैठी रही।

खानातलाशी शुरू हुई। बदूक, बारूद, डिनामाइट, बम, वतमान रणनीति, युगातर, गीता, देश की आवाज, रिव्यू आव रिव्यूज आदि म स कुछ भी घर मे नही मिला। सिफ हिन्दू सत्कममाला, गुप्त प्रेस का पचाग, काशीदासी महाभारत और एक फटा पुराना उपन्यास निकला।

देश के किसी बडे या छोटे नेता का कोई चित्र भी नहीं मिला। सिर्फ कुछ कालीघाट के पट और एक आर्ट स्टूडियो की गणेश की फोटो मिली। जमींदार के कुछ पुराने दस्तावेज और एक धूलि धूसरित चिट्ठिया की फाइल निकली। विनोदिनी की पेटी मे से एक चिट्ठियो का बडल और कुछ ठिकाना लिखे हुए लिफाफे निकले।

सब चीजो को आगन म इकट्ठा किया गया। एक दारोगा कागज पत्रो की फहरिस्त तयार करने लगा। क्षेत्रमोहन भी वही बैठे थे। उन्होने देखा कि सफेद लिफाफा पर उसीका नाम लिखा है और सर नामे की लिखावट रसमयी की है। पुलिस की अनुमति लेकर लिफाफे और चिट्ठियाँ क्षेत्र बाबू देखने लगे। कोई बीसेक चिट्ठिया होगी, सभी बगनी रग की मजटा स्याही से लिखी हुइ थी, रसमयी क हस्ताक्षर थे। कुछ चिट्ठियो को खोलकर क्षेत्र बाबू ने पढा भी। नाना अवस्थाओ की कल्पना करके अनुमान से चिट्ठिया लिखी गई थी। किसी किसी में बड के पेड का भी उल्लेख था। एक म लिखा था—"गया जाकर पिंड दान कर आये हो, इससे यह मत समझ लेना कि मैं तुम्हारा अनिष्ट नही कर सकती। अभी भी रस्सी बामनी तुम्हारी गदन तोड सकती है।' एक मे लिखा था—"सुना है कि ब्याह का दिन तय हो गया है, अब भी सावधान हो जाओ।" एक मे लिखा है—"कल तुम्हारा ब्याह है। इतना मना किया, जरा भी नही माना। अच्छा देखना, सुहागघर म आग लगाकर तुम्हे और तुम्हारी बहू को जला दूगी।'

सारी बाते दिन के प्रकाश की तरह क्षेत्रमोहन के सामने स्पष्ट हो गई।

विनोदिनी तुलसी-चौर के नीचे बैठी सब कुछ देख रही थी। क्षेत्र मोहन ने पूछा— 'दीदी यह सब क्या है ?'

विनोदिनी कुछ बोली नही, अपने ध्यान म मग्न माला जपती रही।

——

मातृहीन

प्रथम परिच्छेद

जिस दिन यह सवाद प्रकाशित हुआ कि मैं सिविल सर्विस मे दूसरी बार असफल हुआ हूँ, उस दिन मेरा मन क्षुण्ण न हुआ हो यह नही कह सकता। पर परीक्षा म पास होने वाले लोगो की तालिका मे शरत्कुमार मित्र का नाम नही छपेगा इस बारे म मुझे पक्का विश्वास था। कारण यह कि साल भर आमोद प्रमाद आदि गुरुतर कार्यों म अत्य त प्रवृत्त रहने के कारण अभ्यास करने का समय जरा भी नही मिला। पास नही हो सकूगा मेरी यह धारणा परीक्षा से पहले ही हो चुकी थी और परीक्षा-पत्र लिखकर आने के बाद इस मत को परिवर्तित करने का मुझे कोई प्रयोजन नजर नही आया।

फेल होकर अवनत मस्तक लिये अपने बेजवाटर के निवासस्थान पर लौट आया। वह नवम्बर का महीना था। दिन भर सूय के दशन नही होते थे। बीच बीच मे टिप टिप बारिश शुरू हो जाती थी। भीतर और बाहर के अधकार के मारे मेरी छाती पिसी जा रही थी। मेरे निवासस्थान के पास ही 'दि आर्टीजियन' नाम की एक दूकान थी, वहा दिल के अँधेरे की दवा मिलती थी। लैंड लेडी को बुलाकर मैं इस दवा की एक बोतल ले आया। सोडावाटर के अनुपान के साथ उसकी कुछ मात्रा सेवन करते ही मेरे दिल से सघाधकार दूर हो गया, उसकी जगह नवोदित सूय का अपार प्रकाश अनुभव करने लगा। मुझे लगा कि—"अच्छा हुआ जो मै फेल हो गया। नही तो बैरिस्टरी की परीक्षा देने का इरादा नही होता। साल भर परिश्रम करो तो ही सब परीक्षा पास कर सकूगा—टन तो मेरा कम्पलीट ही है।"

बैरिस्टरी म विपुल अर्थोपाजन की सम्भावना मेरे भाग्य मे लिखी है, भाग्य के लेख को कौन मिटा सकता है ? मेरे पिता ने बैरिस्टरी करके खूब रुपया कमाया था, मैं भी बाप का यशस्वी बेटा होऊँगा, यह साफ दिखाइ दे रहा है। मेरे साथ परीक्षा दकर जो लोग पास हो गए थे उनके लिए मन म दु ख भी हुआ। मैंने सोचा—"बचारे ! जीवन भर मेहनत करने पर भी महीने मे दो तीन हजार से ज्यादा रुपया नही कमा सकेंगे। और दस साल बाद मैं हाइकोट का प्रसिद्ध बरिस्टर, मुवक्किलो की आखो का तारा मि० शरत् मित्र ?" दस साल बीत गये हैं—लेकिन मुवक्किलो को उक्त दुलभ रत्न का सधान मिला हो ऐसा तो कोई लक्षण दिखाई नही दता।

इसे जाने दो—मेरी वतमान अवस्था इस कहानी का विषय नही है। उस जमाने मे विलायत मे क्या घटना घटी थी उसीका वणन करने के लिए इस समय लेखनी उठाई है। आशा और आनन्द से उत्फुल्ल होकर शाम के बाद साज सज्जा करके थियेटर चला गया। मेरे साथ कोई नही था। शेक्सपियर लिखित एक एतिहासिक नाटक का अभिनय हो रहा था। अभिनय देखकर मैं बहुत ही मुग्ध हो गया। बारह बजे घर लौटकर पूर्वोक्त दवा की दो एक मात्रा लेकर मैं सोने की तयारी करने लगा। शेक्सपियर के नाटक के कवित्व और सौन्दय के बारे मे मन ही मन विचार करते करते मात्रा बढा दी। तब मन मे यह भाव उठा कि यह कैसा आक्षेप है कि बगाल मे एक भी शेक्सपियर नही है। मैं इच्छा करूँ तो क्या शेक्सपियर नही हो सकता। क्यो नही हो सकता ? जब देश मे था तब 'विश्वदपण' मासिक मे कभी कभी मेरी कविता प्रकाशित होती थी। तभी मित्रों ने भविष्यवाणी की थी कि समय आने पर मैं एक उत्कृष्ट कवि होऊँगा। मेरे भीतर प्रतिभा की चिंगारी है—यह बात मुझे स्पष्ट दिखाई देने लगी। मैं ही बगाल का भावी शेक्सपियर हूँ, इसमे जरा भी सदह नही

रहा। कल ही एक ऐतिहासिक नाटक लिख डालूगा "रचगा मधुचक्र गोडजन जिस आनन्द से करेंगे पान, सुधा अगाध"—ये शब्द धीरे-धीरे गुनगुनाते गुनगुनाते जीभ जड सी हो गई। तब उठकर मैं ज्यो त्यो करके सोने के कमरे म गया।

द्वितीय परिच्छेद

दूसरे दिन नौ बजे उठकर मैंने देखा कि बर्फ गिर रही है। चटपट नाश्ता करके बडे उत्साह के साथ उसी बर्फ मे घर से बाहर निकल पडा। बस मे बैठकर ब्रिटिश म्यूजियम पहुँचा। एक शिलिंग मे एक चमकदार जिल्दबधी कापी खरीदकर म्यूजियम के पाठागार म पहुँचा। इसी कापी को बगाल के शेक्सपियर की सबसे पहली नाट्य रचना को अपने वक्ष पर धारण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था।

ब्रिटिश म्यूजियम के इस पाठागार को ससार का आठवाँ आश्चय कहे तो अत्युक्ति नही है। सब जमाना की, सब जातियो की सारी विद्याएँ यहा पुजीभूत हैं। इस विशाल पाठागार का तलप्रदेश वृत्ताकार है। केंद्रस्थल का कुछ स्थान कमचारियो के बैठने के लिये है। उस जगह के चारो ओर वृत्ताकार मे सजी हुई तीन कतारो मे पुस्तकें रखने की आलमारियाँ हैं—उनम हजारो खण्डो मे विभाजित ग्र थो की तालिकाएँ रखी हैं। ये तालिकाएँ वर्णक्रमानुसार, ग्रथकार के नाम के अनुसार और विषयक्रमानुसार हैं। इसके बाद ग्रथव्यास के आकार के बहुत से टेबुल हैं, प्रत्येक टेबुल बहुत से पाठको के बैठने के लिए हिसाब से विभक्त और सख्याकित हैं।

पाठागार ८ बजे से रात के ८ बजे तक खुला रहता है। मैंने भीतर प्रवेश करके देखा कि ज्यादा पाठक नही आये थे। मैं कुर्सी पर बैठ गया और तालिका से खोजकर राजपूत इतिहास के दो ग्र थो का नाम लिखकर दे दिया। दस मिनट के बाद एक नौकर ने आकर दोनो पुस्तकें दे दी।

मैं तब उस इतिहास ग्रथ को खोलकर अपने नाटक का विषय निर्वाचित करने म प्रवृत्त हो गया। नायक के तौर पर एक राजा का होना जरूरी है, जिसन थोडी सी सेना लेकर दो एक मशहूर लडाइयो म विजय प्राप्त की हो। वह लडाई देश के लिए हो या निजी सपत्ति की रक्षा के लिए हो, इसस कुछ फर्क नही पडता। युद्ध के समय मैं उसके द्वारा देशभक्ति की सुन्दर वक्तृता दिलवा दूँगा। इसकी कोई चिंता नही है। राजा की अपेक्षा राजकुमार हो तो और भी अच्छा है, क्योकि राजा प्राय अविवाहित नही होते। राजा का किसी क प्रेम मे आसक्त करने का सुयोग कम है। नायक जिस ललना का प्रणयाकाक्षी है उसका नाम भी मधुर होना चाहिए, कठोर होना ठीक नही है। नाम अगर मधुर हो तो वह सगीतकुशल या अश्वारोहण म दक्ष न भी हो तो कोई क्षति नहीं है। मैं उसकी सारी अक्षमता दूर करन का भार ले सकता हूँ। घट भर से ज्यादा इस प्रकार निष्फल अनुसधान करने के बाद मैंने देखा कि एक वृद्धा शुभ्रकेशी अग्रेज महिला धीर मथर गति से पाठागार मे प्रवेश कर रही है। उसके हाथ मे काले चमडे का एक केस है, इस प्रकार के केस म चित्रकार चित्रकारी करने का सामान रखते हैं। मैं जहा बठा था वृद्धा भी उसी तरफ आने लगी। मेरे पास आकर, मेरे चेहरे की तरफ देखकर वह स्तभित हो उठी और क्षण भर खडी रही। मैंने देखा कि वह|दूसर ही क्षण फिर आत्मसवरण करके, मृदु मद गति से मुझे छोडकर मेरी जगह से चार पाँच आसन के फासले पर बठ गई।

मैंने सोचा कि वृद्धा की नजर कमजोर है, मुझे पहले कोई परिचित व्यक्ति समझकर भ्रम मे पड गई होगी। यह तुच्छ घटना मेरे मन म ज्यादा देर नही ठहर सकी। मैं फिर नायक के शिकार म लग गया। इस प्रकार और भी कुछ क्षण बीत गए। मन के मुताबिक नायक का सधान न मिलने पर और भी दो एक पुस्तको की खोज करने के लिए

उठा। उस महिला के निकट से जाते जाते मैंने देखा कि उसके सामने दो तीन भारतीय चित्रो की पुस्तकें खुली हैं और वह कागज पर पेंसिल से एक जगल का दृश्य आँक रही है। और भी थोडी देर बाद वहाँ से गुजरते हुए मैंने देखा कि जगल मे एक बाघ पजा फैलाये बैठा है, हाथी पर बठा एक सैनिक भेषधारी अग्रेज उसकी तरफ बदूक स निशाना लगा रहा है।

अत मे एक बज गया, लच का समय हो गया। पुस्तक को अपनी जगह रखकर मैं बाहर निकल आया। पास ही वियना रेस्टोरां नाम का होटल था, वहाँ जाकर खाने बठ गया।

दो एक मिनट के बाद मैंने दखा कि वही वृद्धा आ रही है। मेरी ही टेबल पर मेरे सामने रखी चेयर पर वह बैठ गई। मेरी तरफ दख-कर मुस्कुराती हुई बोली—'Good Afternoon, आप अभी अभी ब्रिटिश म्यूजियम के पाठागार मे थे न ?'

मैंन उसे प्रति नमस्कार करके कहा—'मैं आपकी जगह से थोडी ही दूर पर बैठा था।'

वृद्धा बोली—"मुझे क्षमा कीजियेगा, आप क्या भारतवप स आय हैं ?"

"मैं बगाली हूँ।"

"कलकत्ता के ?"

मैंने कहा—'कलकत्ता का ही समझिये।"

वृद्धा कुछ देर चुप रहकर बोली—"मेरे इन सब सवालो से आपको परेशानी तो नही हो रही है ? मैं सिर्फ बेकार कौतूहल के कारण ही आपसे ये सवाल नहीं पूछ रही हूँ।"

मैंने कहा—"इस बारे मे मुझे कोई सदेह नही है। आपको जो कुछ पूछना हो आप निस्सकोच होकर मुझसे पूछ सकती हैं।'

'अनेक धन्यवाद । पजाब या मध्य भारत म आपने भ्रमण किया है क्या ?"

"मध्य भारत मे कभी नही गया, हाँ पजाब के कुछ शहर दखे हैं । '

इसी समय परिचारक आ गया और उसके आदेश की प्रतीक्षा म खडा रहा। मुझे जरा माफ करें—" यह कहकर वृद्धा ने खाद्य-तालिका हाथ मे लेकर अपनी इच्छानुसार चीजो की फरमाइश की। इसके बाद मुझसे बोली—"मैं क्या जानना चाहती हू यह आपको समझाती हूँ। मैं कई विख्यात मासिक पत्रो के लिए चित्र आँकती हू। भारतवप ही मेरा खास विषय है। इस बार किसी पत्र के सम्पादक ने भारतीय शिकार की एक कहानी मुझे चित्र आकने के लिए भेज दी है। कहानी यह है—' पजाब का एक राजा और अग्रेज सैनिक एक साथ एक हाथी पर चढकर शिकार करने गय हैं। दूर से बाघ की गजना सुनकर राजा के मन मे बडा भय हुआ। वह हाथी पर से नीचे उतरकर भाग गया। अग्रेज सैनिक ने बाघ की आवाज का अनुसरण करके जगल मे घुसकर बाघ को गोली से मार डाला। इस कहानी के लिए सपादक एक दो चित्र चाहते हैं। एक तो राजा के भागने का चित्र, दूसरा बाघ को मारने का चित्र। दूसरा चित्र मैंने आक लिया है। लेकिन पहले के बारे मे मैं बडी समस्या मे पड गई हूँ। भारतवप के राजाओ की जो पोशाक दरबार आदि के चित्रो म देखते हैं, वही पोशाक पहनकर वे शिकार करने जाते हैं या शिकार के लिए कोई और पोशाक होती है ?'

यह कहानी सुनकर मेरा खून खौल उठा। मैंने यथासाध्य सयम के साथ कहा— 'श्रीमती जी, बाघ की गजना सुनकर राजा क्यो भाग गया ? अग्रेज सैनिक भी तो डर के मारे भाग सकता था, और राजा बाघ को गोली से मार सकता था।"

मेरी भाव भंगिमा देखकर महिला हँस पडी । बोली—"आप भूल रहे हैं, मैं इस कहानी की लेखिका नहीं हूँ। मैं तो पारिश्रमिक लेकर सिर्फ चित्र आँकूगी ।"

मैं यह सुनकर लज्जित हो गया । मैंने कहा—"मुझसे गलती हो गई है--मुझे क्षमा करें । स्वदेशवासी की निंदा सुनकर सहसा मेरी बुद्धि चकरा गई।"

वृद्धा बोली—"आपकी स्वदश भक्ति देखकर मुझे खुशी हुई । अब मेरे सवाल का जवाब दीजिय ।'

मैंने कहा—"आपके सवाल का जवाब देना मेरे लिए मुश्किल है । मैंन अपनी आँखों से जो दो चार राजा दखे हैं कि वे या तो कलकत्ता, मे राज पथ पर या रेलवे ट्रेन मे । शिकार के लिए जाते हुए राजा का देखन का कोई मौका नही मिला ।"

यह सुनकर महिला कुछ दर के लिए नीरव चि ता मे डूब गई । अ त मे बोली—"कल एक बार अच्छी तरह सचित्र पुस्तक आदि अ व पण करके दखूगी, शिकार के भेष मे किसी राजा का चित्र मिलता है कि नही ।"

फिर इधर-उधर की और बातें होन लगी । मेरे वहा रहने आदि के बारे म कई बातें उसन बड सकोच के साथ मुझसे पूछीं । अ त मे अपना एक काड मुझे देकर बोली—"मेरा घर पास ही है । अगर वक्त मिलने पर कभी आवें तो अपने आके हुए अनेक रेखाचित्र आपको दिखा सकूगी ।"

मैंने इस कृपापूण निम त्रण के लिए उन्हें अनेक धन्यवाद दिये और काड एक अपना भी उ हे दे दिया । मेरा नाम देखकर वे बोली—"मित्र ? कलकत्ता के स्वर्गीय प्रसिद्ध बैरिस्टर मित्र आपके कुछ लगते थे क्या ?"

अपने पिता की यश प्रसिद्धि का प्रमाण पाकर गव से मेरी

फूल उठी। मैंने कहा—"मैं उन्हीं का पुत्र हूँ। आपने उनका नाम कैसे जाना?"

वृद्धा बोली—"सवाद पत्रा मे देखा है। वतमान भारत के बार म एक पक्की धारणा बनाने के लिए मैं कभी कभी इडिया आफिस लायब्रेरी म जाकर कलकत्ता के सवाद पत्र करती हूँ। ओह, आज इस भोजनशाला म लोगा की कैसी भीड है! गर्मी के मारे मेरा श्वास बन्द होने को आ रहा है। अच्छा मैं चलती हूँ।"—यह कहकर वे उठ खडी हुई और चटपट चल दी।

तृतीय परिच्छेद

इसके बाद दो दिन तक महिला को मैंने ब्रिटिश म्यूजियम मे नहीं देखा। इन दो दिना मे मैंने अपने नाटक का प्लान ठीक करके रचना शुरु कर दी।

तीसरे दिन राजपूत इतिहास की अन्यान्य पुस्तका के लिए तालिका देख रहा था कि इसी समय वह वृद्धा आई और मेरे पास आकर खडा हो गई। उसके दिये हुए काड से मैंने जान लिया था कि उसका नाम मिस ववल है। उन्होने मुस्कराकर मेरा अभिवादन किया और अपना हाथ बढा दिया। हाथ मिलाकर कुशल प्रश्न पूछने के बाद वह अत्यन्त मृदु स्वर मे बोली—'आप शायद राजपूताना देख रहे हैं—? ब्रिटिश म्यूजियम के पाठागार म बातचीत करना मना है।

मैंने हडबडाकर कहा—"आप क्या यही खड चाहती हैं? यह लीजिये, आप देख लें तब मैं देख लूगा।'

आओ, दोनो एक साथ देखें। राजाओ के शिकार का क्या भेप है यह देखने के लिए आज राजपूताने का इतिहास देखूगी। आप क्या खोज रहे हैं?'

'मैं राजपूत इतिहास पर एक नाटक लिख रहा हूँ।"

"ग्राप नाटककार हैं ?"

मैंने लज्जित स्वर मे कहा—"मैं नाटककार नही हूँ। फिर भी एक नाटक लिखने की चेष्टा कर रहा हूँ।"

"ठीक ठीक—किसी ग्रौर दिन ग्रापके नाटक की कहानी सुनूँगी।"

"यह तो मेरे लिए बडी खुशी की बात है—" यह कह कर उनके लिए मैंने कई पुस्तकें चुन दी। दोनो ग्रपनी ग्रपनी जगह ग्राकर ग्रपने ग्रपने काम मे मशगूल हो गए।

मैं प्रतिदिन पाठागार मे जाकर नाटक लिखने लगा। मिस कवल राज ग्राती थी। लेकिन किसी ग्रौर दिन उन्हे वियेना रेस्टारेन्ट मे जाते नही देखा। शायद वे घर जाकर लच कर ग्राती थी।

एक दिन उनके बैठने के स्थान पर जाकर उनके कान म मैंने कहा—"ग्राज शाम को ग्रापके यहाँ चित्र देखने ग्रा सकता हूँ क्या ?"

वे ग्रत्यन्त ग्राह्लादित होकर बोली—"ठीक है, जरूर ग्राइए। ग्राज मेरे यहा ही चाय पीजियगा। मैं ग्रापको ग्रपने साथ ले जाऊँगी।"

'ग्रनेक धन्यवाद'—यह कहकर मैं ग्रपनी जगह पर ग्राकर ग्रपने काम म लग गया।

तीन बजने पर मिस कँवल ग्राकर बोली—"चलिये, चला जाय।"

मैंने पाठागार म पुस्तक लौटा दी ग्रौर नाटक की कापी लेकर मिस कँवल के साथ उनके घर की तरफ प्रस्थान किया। ब्लूम्सबरी मसन नाम की एक विशाल ग्रट्टालिका के एक काटेज मे वृद्धा रहती थी। फ्लेट के एक कमरे म उसकी चित्रशाला थी। उन्होने मुझे वहाँ ले जाकर बैठाया। बोली—"पाच मिनट के लिए माफी चाहती हूँ।

नौकरानी को चाय का बन्दोवस्त करने के लिए कह आऊँ। आप तब तक दीवाल के ये चित्र देखिये।—" यह कहकर वे चल दीं।

मैं अलस भाव से घूम फिरकर चित्र देखने लगा। अधिकांश पानी के रंग के चित्र थे। वृक्षों से वेष्टित नीली झील, नृत्यशीला पहाड़ी निर्झरिणी, सिंधु जलधौत, समुद्र तट आदि अनेक प्राकृतिक दृश्य थे। दो एक तैलचित्र भी थे। ईज़ल के ऊपर रखी एक अर्ध समाप्त नारी मूर्ति भी देखी।

कुछ देर बाद मिस केवल लौट आईं। एक एक करके चित्रों को मुझे समझाने लगीं। अन्त में बोलीं—' ये मेरे प्रिय चित्र हैं। शिल्पकला की साधना के लिए मन इन्हें आँका है। जीविका के लिए मुझे जो चित्र आँकने पड़ते हैं, जिस प्रकार पलायन करता हुआ राजा वगैरह—अब वे देखिये।"यह कहकर उन्होंने एक बड़ा पोर्टफोलियो निकाला।

मैंने पूछा—"आपने उस चित्र का क्या किया ?'

वृद्धा हँसकर बोलीं—'दरबार के वेश में ही राजा को चित्रित कर दिया। मैंने संपादक को भेज की समस्या बताई थी। वे बोले—सामाजिक पत्र के चित्र में इतनी बारीकी करने से काम नहीं चलेगा। राजा का खूब मोटा बनाकर उसको दरबार की पोशाक ही पहना दो। नहीं तो पाठक राजा को पहचान कैसे सकेंगे ? इसलिए मुझे इसी प्रकार आँकना पड़ा।

पोर्टफोलियो के चित्र मैंने देखे अधिकांश चित्र कहानी या उपन्यास के लिए बनाये गए थे। चित्र देख रहे थे कि चाय तैयार होने की खबर मिली। मिस केवल मुझे साथ लेकर अपने ड्राइंग रूम में आईं। चाय पीते पीते बातें होने लगीं। सहसा टेबल पर रखी हुई मेरी चमकदार जिल्द की कापी लेकर मिस केवल देखने लगीं। बोलीं—यही आपका नाटक है ?

मुझे लगा कि उनकी आँखें छलछला आई हैं। उनके मन को दूसरी तरफ फेरने के लिए मैंने कहा– "एक प्याला चाय और देंगी क्या ?"

वे हड़बड़ाकर बोलीं— 'माफ कीजिये, आपका प्याला खाली हो गया है। मैंने इधर ध्यान ही नहीं दिया। मेरी आतिथेयता बिलकुल अनुकरणीय नहीं है। —कहकर हँसते-हँसते उन्होंने मेरा प्याला चाय से भर दिया। बोलीं— 'आप ऐतिहासिक नाटक ही लिखेंगे या पारिवारिक नाटक लिखने की भी इच्छा है ?'

"बाद में पारिवारिक नाटक भी लिखूंगा।

मैं आपको एक पारिवारिक नाटक का प्लाट दे सकती हूँ। जीवन की वास्तविक घटना है—एक मर्मस्पर्शी प्रणय कहानी।'

मैंने आग्रह के साथ कहा—"अनेक धन्यवाद। क्या प्लाट है बताइए तो ?

'पहले यह नाटक समाप्त कर लो। इसके बाद किसी और दिन बताऊंगी।'

कहानी कहने में और दस मिनट लगे, इतने में अँधेरा और बढ़ गया। नौकरानी ने आकर गैस की बत्ती जला दी। मैंने तब मिस कँवल से विदा ली।

वे उठकर मेरे साथ साथ दरवाजे तक आईं। अन्त में बोलीं— "आपका नाटक समाप्त हो जाने पर आपको एक दिन आकर मुझे उसका अनुवाद करके सुनाना होगा यह ध्यान रहे।"

"मैं उसी सुयोग की प्रतीक्षा कर रहा हूं।" यह कहकर उन्हें अभिवादन करके मैंने विदा ली।

चतुर्थ परिच्छेद

मेरा ऐतिहासिक नाटक समाप्त हो गया है यह संवाद मैंने पाठागार में ही मिस कंवल को दे दिया। इस बीच में उनके साथ मेरी घनिष्ठता बढ़ गई। मैंने उनके निवास स्थान पर और भी दो बार चाय

उनके व्यवहार और बातचीत से मैं समझ गया कि वे मुझसे आतरिक स्नेह करती हैं।

एक दिन ब्रिटिश म्यूजियम मे वे मुझसे बोलीं--"कल मुझे कोई काम नही है। अपना नाटक आकर सुनाओ।"

"अच्छा कल कब आऊँ ?"

"कल पाठागार में आयँगे क्या ?"

"आऊँगा।"

"तब नाटक अपने साथ लेते आना। वहाँ से कल एक बजे मेरे साथ चलकर लच करना।"

"अनेक धन्यवाद। आप कल आ रही हैं क्या ?"

"नही, मैं नही आऊँगी।"

"अच्छा, मैं एक बजे आपके घर आऊँगा।'

यह दिसम्बर का महीना था। जाडे ने बडा प्रचड रूप धारण कर रखा था। प्राय प्रतिदिन बर्फ पडती थी।

दूसरे दिन सुबह उठकर मैंने देखा कि बारिश हो रही है। सुबह का नाश्ता समाप्त करने मे नौ बज गए, बारिश बद नही हुई। दस बज गए, फिर भी बद नही हुई। मेरी लैण्ड-लेडी अपना एक रोजमर्रा का मुहावरा प्रयुक्त करके बोली—"सात से पहले अगर बारिश शुरू हुई है तो ग्यारह से पहले जरूर बद होगी।'[१] लेकिन ग्यारह बजने पर, लैण्ड लेडी की भविष्यवाणी का प्रतिवाद करने के लिए ही मानो बारिश प्रबल रूप से शुरू हो गई। बारह बज गये तब भी यही हाल रहा। और दिन होता तो मैं ऐसे दिन बाहर नही निकलता। लेकिन आज एक रसिक व्यक्ति मेरी प्रथम रचना सुनने के लिए आग्रह कर

---

१ Rain before seven, clear before eleven

रहा था। ग्राज क्या मैं ठहर सकता था? एक गाडी मगवाकर गतव्य की ग्रोर चल दिया।

मुझे देखकर वे बोली—"How very sweet of you to come in this weather! ग्रापके जूते शायद भीग गए हैं?"

मैंने कहा "ज्यादा नही भीगे। मैं तो ब्रिटिश म्यूजियम म गया नही। घर से ही गाडी म ग्रा रहा हू। फिर भी चढते उतरते समय थोडे बहुत भीग गए होग।

मेरी बात पर उन्हे विश्वास नही हुग्रा। उ होने झुककर मेरे जूते देखकर कहा— ये ता काफी भीग गए हैं। खोल डालो, खोल डालो।'

एक महिला के सामने जूते खोलने का प्रस्ताव सुनकर मैं सिहर उठा। मेरा भाव दखकर वे बोली— 'Silly boy! तुम एस horrified क्या हा गए? सभी विषयो का ग्रपवाद होता है। खाल डालो नही तो बुरी तरह बीमार पड जाग्रोगे।'

मैंने ग्रपराधी की तरह कहा—'ज्यादा तो भीगे नहीं हैं। बल्कि ग्राग के पास पैर फैलाकर बठ जाऊँ तो ग्रभी सूख जायँगे।'

वे बाली—'बहुत भीग गए हैं। हा, पानी ग्रभी तक मोजा मे नही पहुँचा है, मोज भीग जाने पर सवनाश हो जायगा। जूते खालकर ग्राग के सामने रख दो। लच मे ग्रभी देर है। नौकरानी के ग्राने से पहले ही तुम्हारे जूते सूख जायँगे।'

मैं ग्रब भी ग्रानाकानी कर रहा हूँ यह दखकर वे ग्रत म बोली— "नही तो कहो मैं दूसरे कमर मे चली जाऊँ। तुम्हारे जूते जब तक सूख नहा जाते मैं नहीं ग्राऊँगी। तुम्हारी मा ग्रगर जिन्दा होती तो उनके सामने क्या तुम जते नही खोलते? मुझे ग्रपनी मा ही क्या नही समझते?'

उनकी ग्रतिम बात इतनी करुणामिश्रित थी कि उसने मेर तृमा

हीन हृदय म ऐसी सुधावृष्टि की कि मैंने और कुछ न कहकर जूते खोल डाले।

फिर हम दोनो आग के सामने बठकर नाना तरह की बातें करने लगे। अत म डेढ बज गया। मेरे जूते भी सूख गए। जूते पहनकर मैं फिर स शिष्ट व्यक्ति हो गया।

मिस कॅवल तब लच लाने के लिए दासी को आदेश द आई। थोडी दर बाद ही व मुझे अपने भोजनकक्ष म ले गई। गप शप करते-करते हम लोगा ने भोजन समाप्त किया। दामी के टेवल साफ कर डालने पर उमी कमर म बठे बठे मैंने नाटक पढना शुरू किया। बहुत से दश्या की कहानी जबानी ही कहता गया। जिन जिन दश्या म मुझे अपनी विशेष बहादुरी नजर आ रही थी व ही दश्य उ ह अनुवाद करके सुनाने लगा। सुनकर उ ह बडी खुशी हुई। बोली—'प्रथम प्रयास को दखते हुए खूब अच्छा हुआ है।' इस प्रकार चार बज गए। फिर हमने चाय पी।

इस समय भी थोडी-थोडी बारिश हो रही थी। आसमान मे अँधेरा छाया हुआ था। मैंने कहा— आपने मुझे एक पारिवारिक नाटक का प्लाट दन का वचन दिया था, आज सुनायँगी क्या ?"

'सुनाऊँगी। ड्राइग रूम मे चलो वही सुनाऊँगी। इस कमर म अँधेरा बहुत जल्दी हो जाता है।"

हम लोगो ने ड्राइग रूम म पहुँचकर दखा कि कुड की आग बुझ सी गइ है। चारो तरफ की खिडकियाँ बद थी फिर भी जाडा लग रहा था। दासी ने आकर कुड म प्रचुर परिमाण म कोयल डालकर poker स उसे खूब अच्छी तरह कुरेद दिया। अग्निदव तब फिर से नय जोश के साथ जलने लगे।

मिस कवल तब अपने ऊनी शाल से सारा शरीर अच्छी तरह ढककर कहने लगी—

"इस लदन शहर के पास ही एक शहर मे—अपने नाटक म उसे हेमरस्मिथ या रिचमड लिख सकते हैं—एक मध्यम श्रेणी का गृहस्थ रहता था। उसके एक लडका और दो लडकियाँ थीं। लडके की उम्र इक्कीस साल की है—उसका क्या नाम रखेंगे? जार्ज—नही तो फ्रेडरिक। फ्रेडरिक का दुलार का नाम फ्रेड खूब अच्छा लगेगा। दोनों लडकियो मे बडी का नाम—मान लो एलिजाबेथ या लिजि है। यही तुम्हारी नायिका है। नाम बडा पुराना सा है—तुम्हे शायद पसन्द नही आयगा। तो उसे मॉड या ग्लेडिस कह सकते हो। मॉड की उम्र तब उन्नीस की है। छोटी कैथरीन, माड की अपेक्षा दो साल छोटी है।

"लिखने-पढने म बडी लडकी की ज्यादा रुचि थी। उसने फ्रेंच, जर्मन और इटली भाषा सीख डाला थी। विक्टर ह्यूगो, गेटे और दान्ते के मूल ग्रन्थ पढ सकती थी। ग्रीक भी पढ रही थी। इस बीच कम्ब्रिज से फ्रेड ने अपनी माँ को पत्र लिखा कि वहाँ एक भारतवासी उसका सहपाठी है—मेरी इच्छा है कि छुट्टी म डेढ महीने उसे घर लाकर रखूँ। माँ ने खुश होकर सहमति दे दी। फ्रेड ने लिखा कि अमुक तारीख को मैं पहुँचूगा।

"लेकिन माड इस खबर स बडी चिंतित हो पडी। अपने माँ बाप से बोली कि भारतवासी के साथ एक घर मे कैसे रहेंगे? उन्होने बहुत समझाया, पर किसी भी तरह मॉड की शका दूर नही हुई। फ्रेड जिस दिन अपने मित्र के साथ आने वाला था, उसके पहले दिन माड भाग कर लदन मे अपनी मौसी के घर चली गई।

"दो तीन दिन बाद फ्रेड और उसके मित्र को लेकर मॉड की माँ मॉड को लेने के लिए गई। माड ने जब देखा कि भारतवासी के सिर पर पखो की टोपी नही है, वह रग नही लगाता, उसके हाथ मे धनुष-बाण नही हैं, तब वह आश्वस्त होकर घर लौट आई।

"अन्त मे माड को मालूम हुआ कि—वह—"

मैंने बीच म रोककर कहा—"नायक का नाम क्या रखू ?"

मिस केवल बोली—"वह बगाली है। बगाली का क्या नाम हो सकता है यह तो मुझसे ज्यादा तुम्ही जानते हो। जैसा भी हो एक नाम रख दो।'

मैंने सोचकर कहा—"चारुचन्द्र दत्त।"

"यही ठीक है। अत मे माड को मालूम पडा कि चारु सस्कृत बहुत अच्छी जानता है। तब उसने अपनी माँ से हठ ठानी कि मैं सस्कृत सीखूगी। चारु ने यह सुनकर कहा—"बहुत अच्छा। मुझे भी फ्रेंच सीखने की बडी इच्छा है। आप मुझे फ्रेंच सिखाना, मैं आपको सस्कृत सिखाऊँगा।"

"इस प्रकार दानों ने एक दूसरे का शिष्यत्व स्वीकार किया। तब मई का महीना था। आकाश खूब नीलवर्ण था। घर के पिछवाडे बगीचे म बटरकप, प्रिमरोज और डजी फूल खिल रहे थे। बगीचे के बीच म एक लाइलक का पेड था—वह चारो तरफ से फूलो से छा रहा था। कमरे म गर्मी रहती थी—इसीलिए सुबह और शाम को एक चीनी बेंत का टेबल और दो हल्की कुर्सिया उसी लाइलक के तले बिछाकर वे दोना एक दूसरे को पढाते थे। पेड की शाखाओ पर फूला म छिपा मेविस पक्षियो का एक जोडा दिन भर प्रणय गीत गाता था। धीरे-धीरे दोना के मन मे एक दूसरे के प्रति अनुराग उत्पन्न हुआ।

"माड के मा बाप को इस बारे मे कुछ पता नही था—लेकिन फ्रेड जानता था। वह दोनो बहनों और चारु को साथ लेकर कभी रिचमड पाक, कभी क्यू गाडन्स मे घूमने जाता था। मॉड और चारु घूमते घूमते अलग पड जाते और अनेक बार बहुत खोजने पर भी केथरीन और फ्रेड को नही मिल पाते थे। यह सब फ्रेड के कौशल से होता था इसमे सदेह नही।

"अन्त म चारु ने इरादा किया कि माड के माता पिता से

छिपी रखना ठीक नही है। तब वह मॉड के पिता के पास गया और उसने सब कुछ खोलकर कह दिया। माड के पिता से विवाह की अनुमति मागी।

"सारी बातें सुनकर मॉड के पिता गम्भीर हो गए। अत मे उन्होने माड को अपने पास बुलाया। स्नेह के साथ दोनो से बोले, "तुम दोनो अभी अल्पवयस्क हो। दुनियादारी के बारे मे अभी कुछ नही जानते। तुम दोना का यह पारस्परिक आकर्षण—यह स्थायी प्रेम है अथवा सामयिक उत्तेजना, इसकी परीक्षा होना जरूरी है। बैरिस्टर होकर देश लौटने म चारु को अभी साल भर से ज्यादा समय है। मेरी राय है कि साल भर तुम लोग आत्मपरीक्षा करो। साल भर तब तुम लोग आपस म मुलाकात या पत्र-व्यवहार मत करना। अगर साल भर बाद भी तुम लोगो के मन का भाव ऐसा ही रहे तो तुम्हारे विवाह की मैं अनुमति दे दूँगा।'

माड और चारु यह सुनकर बडे उदास हुए। फिर भी उन्होने पिता की युक्ति का सार हृदयगम किया। चारु की छुट्टियाँ समाप्त हो गइ। साल भर के लिए दोनो ने एक दूसरे से सजल नत्रा से विदा ली।

माड के पिता को उन्होने जो वचन दिया था उन्होने साल भर तक उसका सत्यतापूर्वक पालन किया। केवल फ्रेड से उन्हे एक दूसरे की खबर मिलती थी। मॉड अपने भाई को कैंब्रिज से जो पत्र लिखती थी फ्रेड व सब चारु को दिखलाता था। साल भर तक वे पत्र ही चारु का अवलम्बन थे। फिर छुट्टी में फ्रेड जब घर आया तब चारु उसे जो पत्र लिखता था फ्रेड उन्हें अपनी बहन को दिखाता था।

इस प्रकार लम्बा परीक्षा काल समाप्त हुआ। चारु फिर आया। माड के माँ बाप की सम्मति से वे विवाह-बधन म आबद्ध होने के लिए राजी हो गए। परम आनन्द के साथ दोनो दिन बिताने लगे।

जून की १६वी तारीख को चारु वार म बुलाया जाने वाला था। जुलाई महीने के प्रथम सप्ताह मे विवाह का दिन निश्चित हुआ। विवाह के बाद पन्द्रह दिन नवदम्पति इटली म सुहागरात बिताकर, ब्रिटिश देश को रवाना होंगे।

उसके मां बाप भी इस विवाह के लिए राजी हो जायेंगे इस बारे में चारु के मन मे कोई सशय नहीं था। पर अपने मां बाप के प्रति उसकी भक्ति और प्रेम काफी था। उनका आशीर्वाद न मिलने तक विवाह करने के लिए उसका मन तैयार नहीं हो रहा था। इसीलिए एक लम्बे पत्र मे सारी बातें लिखकर अनेक प्रार्थना करके उसने मां बाप से अनुमति चाही थी।

चारु ने हिसाब लगाकर देखा कि जिस दिन वार म उसे बुलाया गया है उसके दो दिन बाद भारतवर्ष से उसके पिता का जवाब आ जायगा। पत्र की प्रतीक्षा म अन्तिम सप्ताह उसने बड़े विषाद से काटा। उसे ऐसा लगा कि मां बाप के आशीर्वाद के बिना विवाह करने पर मिलन का आधा आनन्द चला जायगा।

इसी समय नौकरानी बत्ती जलाने आई। बत्ती जलाकर, अग्नि कुण्ड म फिर से प्रचुर कोयला डाला। अग्निदेव लपलपाती जीभ फैला कर नृत्य करने लगे।

मेरे मन म एक विश्वास धीरे धीरे पक्का होता जा रहा था कि हो न हो यह मॉड मिस कॅवल के सिवा और कोई नही है। मैंने उत्सुकतापूर्वक पूछा--' इसके बाद ?—क्या जवाब आया ?"

मिस कॅवल बोली—"पत्र का कोई जवाब नहीं आया। १८वीं जून का वाटरलू की लड़ाई जीतने का वार्षिकोत्सव था, पत्र के बदले उस दिन चारु के वृद्ध पिता स्वय आ गए। उन्होंने मॉड के पिता के पैर पकड़ लिए और कहा--"मुझे क्षमा करो। मेरा यह एक ही बेटा है। हम बूढ़ों का यह एक मात्र अवलबन है। देश ले जाकर प्रायश्चि

कराकर उसे जाति मे ले लूगा। वही हिन्दू धर्मानुसार उसका विवाह करूँगा। आपकी लडकी के साथ विवाह करने पर जीवन भर के लिए वह जाति बहिष्कृत हो जायगा। बश म फिर कभी समाज मे नही आ सकेगा। लडके को मैं घर मे नही रख सकूगा। मरते समय वह हमारे मुँह म पानी नही दे सकेगा। आपकी लडकी के साथ ब्याह करने पर मेरी स्त्री शोक के मारे आत्महत्या कर लेगी —मैं दु ख के मारे पागल हो जाऊँगा। कश्मीर घूमने जाने का बहाना करके मैं बम्बई से जहाज मे आया हू। रास्ते भर सिवा चिवडे के और कुछ नही खाया। मेरा धन मुझे लौटा दो'।

मॉड को भी माँ कहकर वे इसी प्रकार कहने लगे।

मॉड के पिता बोले—"लडका और लडकी दोनो बालिग हैं। जो ठीक समझेंगे वही करेंगे। मैं इसम कोई बाधा नही दे सकता। आपको भी रुकावट डालने का कोई अधिकार नही हैं। यह खयाल रखिये कि यह इडिया नही है यह ग्रेट ब्रिटेन है स्वाधीन देश है।"

माड के पिता ने तब चारु को बुलाकर पूछा। चारु ने कहा—"मैं विवाह करूँगा। पिता की सम्मति नही मिल सकी, मेरा यह परम दुर्भाग्य है। फिर भी मैं वाग्दत्ता वधू का परित्याग करके अधर्माचरण करने के लिए तैयार नही हू।"

चारु के पिता बोले—"ओ पाषाण, वाग्दत्ता वधू का परित्याग करना ही क्या अधर्म है? माँ बाप की हत्या क्या पुण्य काय है?'

चारु फिर भी अटल रहा, लेकिन मॉड हठ कर बैठी। वह बोली—"ऐसी हालत म मैं कभी चारु के साथ विवाह नही करूँगी।'

माँ-बाप, फ्रेड, कैथरीन ने उसे बहुत समझाया। लेकिन मॉड किसी भी तरह राजी नही हुई।

अन्त मे चारु ने उसे एकान्त मे बुलाकर प्रेम की दुहाई देकर कितना अनुनय विनय किया। लेकिन मॉड फिर भी राजी नही हुई।

तब चारु बोला—"तुम्हारे प्रेम को मैं जितना ऐकातिक समझता था वह अगर सच होता तो हमारी मित्रता में कोई भी बाधा तुम्हे निरस्त नही कर सकती थी। मेरा यह विश्वास करना क्या भूल हुई?'

मॉड ने इसका प्रतिवाद नही किया।

चारु बोला—"समझ गया। विच्छेद को जब टाला नही जा सकता तो तुम्हारे अचल प्रेम की साक्षी साथ ले जा सकने पर जीवन मे मुझे वहुत कुछ सात्वना मिलती। उस सात्वना से भी तुमने मुझे वचित कर दिया।"

माड ने फिर भी इसका कोई प्रतिवाद नही किया।

चारु ने तव माड के दाहिने हाथ को अपने हाथ मे ले लिया और उस पर अजस्र चुबन और लगातार अश्रुवर्षण करने लगा। इसके बाद जीवन भर के लिए विदा ले ली।

यह दुःख की कहानी सुनते सुनते मेरी आँखो मे भी पानी भर आया। मिस कॅबल चुप हो गईं। बडी कठिनाई से मैंने पूछा—"इसके बाद?"

कुछ देर तक मिस कॅबल भी कोई बात नही कह सकी। उनके गालो पर से आसुओ की बडी बडी बूदें ढुलकने लगी। यह दृश्य देखकर मैंने सिर झुका लिया।

कुछ देर बाद वृद्धा का क्षीण कठ स्वर फिर सुनाई दिया। "मॉड ने तब तो प्रतिवाद नही किया, लेकिन एक दिन प्रतिवाद करेगी। परलोक मे फिर से जब चारु के साथ मुलाकात होगी तब प्रतिवाद करेगी इस प्रतीक्षा मे है। चारु के चले जाने पर माड बहुत बीमार पड गई। उसके जीने की कोई आशा नही थी। लेकिन जो दुर्भागिनी है वह इतनी आसानी से क्यो मरेगी? देश से मँगवाकर चारु ने उसे दो जोडी सोने की चूडियाँ दी थी। वे ही चूडियाँ वह हमेशा पहने रहती

कई साल बाद सहसा एक दिन एक भारतीय सवाद पत्र मे उसने देखा कि उसका वाछित इस जगत् मे नही है। उसी दिन उसने हाथ की चूडिया खोल डाली। उसने सुना था कि हिन्दू वह विधवा होने पर हाथ मे चूडिया नही पहनती। माड के सोने के कमरे मे प्रणयी का एक तलचित्र है। उसीको दखकर इस जगत के जजर चिर मिलन की प्रतीक्षा म वह जी रही है।"

इतना कहकर मिस कॅबल चुप हो गइ। मैं आसू बहाता हुआ पहले की तरह सिर झुकाये सोचने लगा—वह कौन बैरिस्टर था। कलकत्ता के अधिकाश बैरिस्टरो को मैं जानता हूँ। किस समय की यह घटना है यह मालूम हो जाता तो लॉ लिस्ट देखकर जरूर मालूम कर सकता। इसीलिए मैने पूछा—'यह घटना किस साल की है।'

कोई जवाब नही मिला।

मैंने तब सिर ऊँचा करके देखा कि मिस कॅबल निस्पद हैं उनकी आखे खुली की खुली रह गई हैं—उनका सिर एक तरफ ढुलक पडा है।

सवनाश!—ये ता मूर्छित हो गईं।

दीवार से लगे घटे के फीते को मैंने जोर से खीचा। दासी भागती हुई आई और बोली—' कहिए, क्या चाहिए?'

'तुम्हारी मालकिन मूर्छित हो गई है,—पानी—पानी लाओ।"

दासी भागकर पानी लेने गई। मैंने सारी खिडकियाँ खोल डाली। बरफ की तरह ठडी हवा कमरे म बहने लगी। मिस कॅबल के शरीर पर से शाल उतारकर मैंने एक तरफ कर दिया। पानी आने पर मैं उनके मुह पर उसी पानी के ठडे छीटे देने लगा। दासी ने उसकी पोशाक का कुछ अश खोल डाला। उसने स्मेलिंग साल्ट लाकर उसके नासा-रध्रो के सामने रखा। मिस कॅबल ने तब धीरे धीरे सिर ऊपर उठाया। वे मृदु स्वर मे बोली—"क्या हुआ?'

दासी बोली—"मालकिन आग की गर्मी से आप मूछित हो गई थीं।"

मैंने कहा—"कमरे की सारी खिडकियाँ इस प्रकार बंद करके इतनी आग जलाना ठीक नही हुआ। अब कैसी हैं मिस कैंबल ?"

"मैं मूछित हो गई थी ? आपको तकलीफ हुई—माफ करना। अब अच्छी हू।"

मैंने कहा—"चलिये, आपका बिछौने पर सुला दू।

"चलो"—कहकर उन्होंने उठने का प्रयत्न किया। लेकिन फिर उनकी देह निश्चल हो गई। छिन्न लता की तरह वे कुर्सी पर गिर पडी।

हम दोनो पकडकर उन्हें सोने के कमरे मे ले गए। उन्हें पलंग पर सुलाकर मैंने दासी से कहा—"मैं अभी डाक्टर को बुलाकर लाता हूँ। तुम तब तक जितना हो सके इनका ऊपरी कपडा उतार दो।"—यह कहकर मैं ज्यो ही घूमा कि क्या देखता हूँ कि दीवार पर एक तैल चित्र लटका है—मेरे ही पिता की युवामूर्ति ! यह जिस फाटोग्राफ की प्रतिलिपि थी उसकी एक नकल मेरे अलबम मे रखी थी।

मैं सब समझ गया। भागकर डाक्टर को बुला लाया। उसकी दवाई और हमारी सुश्रूषा से रात का नौ बजे मिस कैंबल स्वस्थ हुई। एक प्याला गरम शोरबा पिलाकर रात भर के लिए मैंने बिदा ली।

पंचम परिच्छेद

इस घटना के बाद साल भर तक मैं विलायत मे रहा। मिस कैंबल के पास हमेशा आता जाता था। वे मुझे पुत्रवत चाहती थी। पत्रादि लिखते समय मैं उन्हें मां कहकर संबोधित करता था, लेकिन सामने नही कह पाता था—एक तरह की शर्म आती थी।

बाद मे उन्होंने मुझे बताया कि ब्रिटिश म्यूजियम के पाठागार मे मुझे देखते ही उन्होंने अनुभव किया कि मेरे पिता के चेहरे के साथ मेरा चेहरा काफी मिलता है। मुझसे ही परिचय करने के लिए उत्कंठित होकर उस दिन वे मेरे पीछे पीछे वियेना रेस्टोरॉ मे गई थी, अन्यथा बाहरी जगहो मे भोजन करना उन्हे अच्छा नही लगता।

यथासमय मैं बार मे बुलाया गया। उन्हे साथ ले चलने के लिए मैंने बहुत मनुहार की। मैंने कहा—"आप वृद्ध हो गई हैं। अब आपको हमेशा सेवा की जरूरत है। घर चलकर, माँ के रूप मे मेरी सेवा स्वीकार करो।"—लेकिन किसी भी तरह उन्हे राजी नही कर सका। वे बोली —"इस उम्र मे जन्मभूमि छोडकर और कही जाने पर मुझे शांति नही मिलेगी।'

देश लौटकर मैं प्रत्येक डाक से उन्हे पत्र लिखता था और उनके पत्र पाता था। जब मेरा विवाह हुआ तब मेरी पत्नी को आशीर्वाद-स्वरूप वे ही सोने की चारो चूडियाँ उन्होने भेज दी। मेरी पत्नी हमेशा उन्हे पहने रहती है।

इसके बाद मुन्ने का जन्म हुआ। उन्होने लिखा कि मुन्ना के जरा बडा होने पर उसे और उसकी मा का लेकर मैं एक बार विलायत आऊँ। मरने से पहले हम तीनो को एक बार देखने की उन्हे बडी साध है। यह बात उन्होने एक के बाद एक कई पत्रो मे लिखी। उस साल पूजा की छुट्टी मे हमने विलायत जाने का निश्चय किया था। उन्हे भी इसकी सूचना दे दी थी। लेकिन पत्र डेढ महीने बाद लौट आया। लिफाफे पर लदन के पोस्ट आफिस ने रबर स्टाम्प मार दी—'पाने वाला मृत, पत्र प्रेषित नही हुआ।"

मैं दूसरी बार मातृहीन हो गया।

आदरिणी

प्रथम परिच्छेद

मुहल्ले के नगेन डाक्टर और जूनियर वकील कुंजबिहारी बाबू शाम को पान चबाते चबाते, हाथ की छड़ी हिलाते हिलाते जयराम मुख्तार के यहाँ पहुँचे और कहने लगे—' मुखर्जी साहब, पीरगंज के बाबुओं के यहाँ से हमें निमंत्रण मिला है, इसी सोमवार को मझले बाबू की लड़की का ब्याह है। सुना है कि भारी धूमधाम होगी। बनारस से बाई आयेंगी, कलकत्ता से नचनिये आयेंगे। आपको निमंत्रण मिला है क्या ?'

मुख्तार साहब अपनी बैठक के बरामदे में बेंच पर बैठे हुक्का पी रहे थे। आगंतुकों के इस प्रश्न को सुनकर हुक्के को नीचे रख दिया और कुछ उत्तेजित स्वर में बोले— 'क्या ? मुझे निमंत्रण क्या नहीं मिलेगा ? जानते हो, मैं आज बीस साल से उनकी स्टेट का बंधा मुख्तार हूँ। मुझे बाद देकर वे तुम्हें निमंत्रण देंगे, तुम लोगों ने क्या यह सोचा है ?'

जयराम मुखोपाध्याय को ये अच्छी तरह जानते थे और भी सभी जानते थे। थोड़े से कारण से भी उन्हें तीव्र अभिमान हो जाता था फिर भी हृदय स्नेह और वात्सल्य से कुसुम की तरह कोमल है यह बात जिन्होंने उनके साथ थोड़े दिन भी सम्बन्ध रखा है उन्होंने अच्छी तरह जान ली है। वकील साहब चटपट बोले—' नहीं नहीं, सो बात नहीं है—यह बात नहीं है। आप नाराज हो गए मुखर्जी साहब। हम लोग क्या इस इरादे से कह रहे हैं ? इस जिले में ऐसा कौन सा बड़ा घर है जिसका आपने उपकार नहीं किया, जो आपकी खातिर न

हमारा पूछने का मतलब यह था कि आप उस दिन पीरगज जायँगे क्या ?"

मुखर्जी साहब नरम हो गए। बोले—"भाइयो, बैठो।" यह कहकर सामने रखी एक बेंच दिखा दी। दोना के बैठ जाने पर बोले—"पीरगज निमत्रण म जाना मेरे लिए जरा कठिन है। साम, मगल दो दिन कचहरी से नागा होगा। पर न जाने पर वे लोग मन म बहुत दुखी होगे। तुम लोग जा रहे हो ?'

नगेन्द्र बाबू बोले—"जाने की तो बडी इच्छा है लेकिन इतनी दूर जाना तो सरल नही है। घोडागाडी का रास्ता नही है। बैलगाडी करके जायँ तो जाते दो दिन आते दो दिन लगते हैं। पालकी से जा सकते हैं पर उसका मिलना मुश्किल है। इसीलिए हम दोना ने यह सलाह की थी कि चलकर मुखर्जी साहब स पूछें, द आर जायँग तो जरूर राजाजी के यहा से हाथी मगवा लेंगे हम दोनो भी उनके साथ उसी हाथी पर खूब मजे मे जा सकेंगे।'

मुख्तार साहब हँसकर बोले—"यह बात है ? इसके लिए चिन्ता क्या करते हो ? महाराज नरेशचन्द्र तो मेरे आज के मुवक्किल नही हैं—उनके बाप के जमाने से मै उनका मुख्तार हूँ। मैं कल सबेरे ही राजाजी के यहा चिट्ठी लिखकर भेजता हूँ, शाम तक हाथी आ जायगा।"

कुन बाबू बोले—"देखा डाक्टर मैं तो कहता ही था, इतनी चिंता क्या करते हो, मुखर्जी साहब के पास जाते ही कुछ न कुछ उपाय निकल आयगा। अच्छा तो मुखर्जी साहब आपको भी हमारे साथ जाना होगा। जाय बिना नही चलेगा।"

"जाऊँगा भाई, मैं भी जाऊँगा। पर मेरी तो बाई और नचनियो को देखने की उम्र नही है ये सब तुम लोग सुनना। म सिर पर एक पाग बाधे, एक बडा हुक्का हाथ म लेकर, लोगो का स्वागत करूँगा, किसने खाया, किसने नही खाया यही देखता रहूँगा और तुम लोग

बैठकर सुनना—"पेयाला मुझे भर दे—क्या ?" यह कहकर मुखर्जी साहब हो हो करके हसने लगे।

द्वितीय परिच्छेद

दूसरे दिन रविवार था। इस दिन सुबह भजन पूजन वगैरह मुखर्जी साहब जरा धूमधाम से करते थे। ६ बजे पूजा समाप्त करके जलपान करके बैठक में प्राकर बैठे। बहुत से मुवक्किल बैठे थे, उनके साथ बात-चीत करने लगे। सहसा वही हाथी की बात याद आ गई। उसी समय कागज कलम लेकर, चश्मा पहनकर "प्रबल प्रतापान्वित श्री श्रीमहाराज श्री नरेशचन्द्र रायचौधरी बहादुर आश्रितजन प्रतिपालक' लिखकर दो तीन दिन के लिए एक सीधे और सुबोध हाथी को भेजने की प्रार्थना की। पहले भी कई बार जरूरत पड़ने पर उन्होंने इसी प्रकार महाराज का हाथी मँगवाया था। एक नौकर को बुलवाकर पत्र ले जाने का हुक्म देकर मुख्तार साहब फिर मुवक्किलों के साथ बातचीत करने में लग गए।

श्रीयुत जयराम मुखोपाध्याय की उम्र इस समय पचास पार कर गई है। उनका कद लम्बा है—रंग जरा और साफ होता तो उन्हें गोरा कह सकते थे। मूँछें मोटी मोटी हैं—कच्ची पक्की मिली हुई हैं। सिर पर सामने की तरफ गंज है। दोनों आँखें बड़ी बड़ी हैं जो बाहर को आ रही हैं। उनके हृदय की कोमलता मानो हृदय को उद्वेलित करके दोनों आँखों से छलकी पड़ती है।

उनका मूल निवास यशोहर जिले में है। इधर जब पहले पहल मुख्तारी करने आए थे तब इस तरफ रेल नहीं आई थी। पहाड़ पार करके कुछ नाव से, कुछ बैलगाड़ी से, कुछ पैदल चलकर आना पड़ा था। साथ में केवल एक केनवास का बेग और एक पीतल [illegible] था। साथ में और कोई सबल नहीं था। सवा तीन [illegible]

मकान पर भाडे लेकर अपन ही हाथ से रांध रूँधकर मुख्तारी शुरू कर दी थी। अब उन्ही जयराम मुखोपाध्याय ने पक्के दालान की कोठी बनवा ली है, बगीचा है, ताल खरीदा है बहुत सी कम्पनियो के शेयर भी खरीद लिये हैं। जिस समय की बात कह रहा हूँ, उस समय इस जिले म अग्रेजी जानने वाले मुख्तारो का आविर्भाव हो गया था—पर जयराम मुखर्जी को कोई नही हटा सका। तब भी वे इस जिले के प्रधान मुख्तार गिने जाते थे।

मुखर्जी साहब का हृदय अत्यन्त कोमल और स्नेह परायण होने पर भी मिजाज कुछ रूखा है। जवानी मे व बडे गुस्सैल थे—अब बहुत कुछ ठडे हो गए हैं। उस जमाने मे हाकिमो के जरा भी अविचार या अत्याचार करने पर मुखर्जी साहब गुस्से क मारे चिल्लाकर अनर्थ पात कर दते थे। एक दिन इजलास मे एक डिप्टी के साथ उनकी काफी कहा सुनी हो गई थी शाम को घर आकर उन्होने देखा कि उनकी मगला गाय ने एक बछडा ब्याया है। तब दुलार से उक्त डिप्टी बाबू के नाम पर उस बछडे का नाम रख दिया। डिप्टी बाबू ने लोगो के मुह से यह बात सुनी और बहुत नाखुश हुए और एक बार एक डिप्टी के साथ मुखर्जी साहब कानूनी बहस कर रहे थ लेकिन हाकिम किसी भी तरह इनकी बात पर ध्यान नही दे रहा था। अन्त मे गुस्से के मारे जयराम बोल उठे—"मेरी पत्नी को कानून का जितना ज्ञान है, हुजूर को उतना भी नही है। उस दिन अदालत की मान हानि के लिए मुख्तार साहब पर पाँच रुपये का जुर्माना हुआ। इसके विरुद्ध हाईकोर्ट तक लडे। कुल १७०० रु० खर्च करके इस पाँच रुपये के जुर्माने को उन्होने रद्द कराया था।

मुखर्जी साहब जिस प्रकार बहुत रुपया कमाते थे उसी प्रकार उनका खर्च भी काफी था। वे खुले दिल से अन्नदान करते। अत्याचार पीडित, दुखी गरीबो के मुकदमे वे कई बार बिना फीस लिये, यहाँ तक कि अपना रुपया खर्च करके भी चलाते थे।

हर रविवार को दोपहर के समय मुहल्ले के जवान-बूढ़े सभी लोग मिलकर मुख्तार साहब की बैठक में ताश शतरंज वगैरह खेलते हैं। इस समय भी अनेक लोग आए हुए हैं—पूर्वोक्त डाक्टर और वकील भी हैं। हाथी को बाँधने के लिए बगीचे में जगह साफ की जा रही है। रात को हाथी के खाने के लिए बड़े बड़े पत्तों के समेत केले के पेड़ और अन्यान्य पेड़ों की डालियाँ काटकर रखी गई हैं—मुख्तार साहब इन सबका मुआयना कर रहे हैं। बीच-बीच में बैठक में आकर किसी ब्राह्मण के हाथ से हुक्का लेकर खड़े-खड़े दो चार कश लगाकर फिर बाहर निकल पड़ते हैं।

शाम से कुछ पहले जयराम बाबू बैठक में बैठे शतरंज का खेल देख रहे थे। इसी समय उस पत्रवाहक नौकर ने आकर कहा कि— "हाथी नहीं मिला।"

कुंज बाबू निराश होकर बोले— "हैं—नहीं मिला!"

नगेन्द्र बाबू बोले—"तब तो सब मिट्टी हो गया।"

मुख्तार साहब बोले—"क्या रे हाथी क्यों नहीं मिला? चिट्ठी का जवाब लाया है?"

नौकर बोला—"जी नहीं। दिवानजी को चिट्ठी दिखाई थी। वे चिट्ठी लेकर महाराज के पास गये। कुछ देर बाद लौटकर बोले—ब्याह के निमन्त्रण में जाना है इसके लिए हाथी की क्या जरूरत है? बैलगाड़ी से जा सकते हैं।"

यह सुनते ही जयराम क्षोभ, लज्जा और क्रोध से एकदम पागल हो गए। उनके हाथ-पैर काँपने लगे। दोनों आँखों से खून बरसने लगा चेहरे की नसें तन गई। काँपते हुए स्वर में गरदन टेढ़ी करके बार कहने लगे—"हाथी नहीं दिया! हाथी नहीं दिया!"

सम्मिलित सब लोग खेल बन्द करके हाथ बाँधकर बैठ गये।

बोला—"इसमे आप क्या कर सकते हैं मुखर्जी साहब ! दूसरे की चीज पर क्या जोर है ! एक अच्छी सी बैलगाडी लेकर रात को दस ग्यारह बजे निकल पडा, ठीक समय पहुँच जाओगे । इमामदीन शेख एक जोडी नय बैल खरीदकर लाया है—बडे तेज भागते हैं।"

जयराम ने वक्ता की तरफ देखे बिना कहा—'नही बैलगाडी पर चढकर मैं नही जाऊगा । अगर हाथी पर जा सका तभी जाऊँगा, नहा तो इस ब्याह म मैं शरीक नही होऊँगा ।"

तृतीय परिच्छेद

शहर से दा तीन कोस क घेरे म दा तीन जमीदारा के यहाँ हाथी थ । उसी रात का जयराम ने उन लागो के यहा आदमी भेज दिय —अगर कोई हाथी बेचे तो खरीदना है । आधी रात का एक न लौट कर कहा—वीरपुर के उमाचरण लाहिडी के पास एक हथिनी है—अभी बच्ची है । बेचेंगे तो लेकिन बहुत दाम मागते हैं ।

'कितने ?"

"दो हजार रुपये ।"

वहुत छोटी है ?'

'नही, सवारी ले सकती है।'

'कुछ परवा नही । यही खरीदेंगे। तुम इसी समय जाओ । कल सुवह ही हथिनी आ जाये । लाहिडी साहब को मेरा नमस्कार कहना और कहना कि हथिनी के साथ कोई विश्वस्त नौकर भेज दें जो लग हाथ रुपये लेता जायगा ।"

दूसरे दिन सात बजे हथिनी आ गई । उसका नाम आदरिणी है । लाहिडी साहब का नौकर बदस्तूर स्टाप पेपर पर रसीद लिखकर दो हजार रुपये लेकर रवाना हो गया ।

घर मे हथिनी आते ही मुहल्ले के सब बालक आकर बैठक के आगन म जमा हो गए। दो एक अशिष्ट बालक कहने लगे—"हाथी तेरे मोटे पैरो नाती।" घर के बालक इस पर बहुत नाराज हो गए और उन लोगो का अपमान करके उन्हे वहा से भगा दिया।

हथिनी जाकर अ त पुर के द्वार पर खडी हुइ। मुखर्जी साहब विधुर हैं—इसलिए उनकी बडी पुत्रवधू एक लोटे म जल लेकर डरती हुइ बाहर आई। कापते हुए हाथो से उसके चारो पैरो पर वही पानी थोडा थाडा करके ढाल दिया। महावत के सकेतानुसार आदरिणी तब घुटन टेककर वठ गई। बडी बहू ने तेल और सिन्दूर से उसका ललाट रग दिया। जोरा से शखध्वनि होने लगी। उसके फिर स खडी होने पर एक टोकरा भरकर चावल, कले और अ या य मङ्गलद्रव्य उसके सामने रखे गए। सूँड से उठा उठाकर कुछ तो उसने खाया और अधि काश छिटका दिया। इस प्रकार वरण क्रिया सपन्न होने पर राजहाणी के लिए सग्रह किय हुए वे ही कदली के तन और वृक्षो की शाखाएँ आदरिणी खाने लगी।

निमत्रण साधकर पीरगज से लौटने के दूसरे दिन शाम ही का महाराज नरेशचद से मिलने मुखर्जी साहब चल दिए। कहना न होगा कि वे हाथी पर ही बैठकर गये थे।

महाराज की दो तल्ला बैठक के नीचे बडा आगन है। आगन के दूसरे सिरे पर सिहद्वार है। बैठक म बैठे बठे सारे आगन और सिहद्वार के बाहर भी दूर तक महाराज की दृष्टि जा सकती है।

महाराज के पास पहुँचने पर मुखर्जी साहब ने उन्हें आशीर्वाद दिया और आसन ग्रहण किया। मुकदमे और जमीन जायदाद की दा चार बातें हा जाने के बाद महाराज ने पूछा—"मुखर्जी साहब, यह हाथी किसका है?"

मुखर्जी साहब ने विनयपूर्वक कहा—"जी, हुजर का ही हाथी है।"

महाराज आश्चर्य चकित होकर बोले—"मेरा हाथी ! कैसे, इस हाथी को तो मैंने कभी देखा नहीं ! कहा से आया ?"

"जी, वीरपुर के उमाचरण लाहिड़ी से खरीदा है।"

और भी आश्चर्य चकित होकर राजा ने कहा—' आपने खरीदा है ?"

"जी हाँ।'

"तब मेरा हाथी कैसे कहा ? '

इसमे विनय था या व्यग्य—यह ठीक मालूम नही पड़ा—कुछ मुस्कुराते हुए जयराम बोले—"जब हुजूर बहादुर के द्वारा ही प्रतिपालित हो रहा हूँ—मैं ही जब आपका हूँ—तब यह हाथी भी आपका ही है, और किसका है ?"

शाम को घर लौटकर, बैठक मे बैठे-बैठे, सम्मिलित बन्धु मडली के सामने मुखर्जी साहब ने इस कहानी को विस्तार पूर्वक सुनाया। हृदय से आज सारा क्षोभ और लज्जा मिट गई। कई दिन बाद उन्हे अच्छी तरह नीद आई।

चतुर्थ परिच्छेद

उपरोक्त घटना के बाद लम्बे पाँच साल बीत गए हैं—इन पाँच सालो में मुख्तार साहब की अवस्था म काफी परिवर्तन हो गया है।

नया कानून पढकर आये हुए मुख्तारो से जिले की अदालत भर गई है। पुराने जानकारो की कोई कदर नहीं है। धीरे धीरे मुखर्जी साहब की आय कम होने लगी। पहले जितना उपार्जन करते थे अब उसका आधा भी होता हैं या नहीं इसमे सदेह है। फिर भी खर्च हर साल बढ़ता ही जा रहा है। उनके तीन लड़के हैं। पहले दो मूर्ख हैं—

वशवृद्धि करने के सिवा और कोई काम करने योग्य नही हैं । छोटा लडका कलकत्ता मे पढता है—वह कभी होशियार होगा यही एक आशा है ।

व्यवसाय के प्रति मुखर्जी साहब का वैसा अनुराग नही रहा—वडे विरक्त हो गए हैं । कल क छोकरे, जि ह कल तक उ होने रास्तो पर उघडे वदन खेलते हुए देखा है, वे ही नये मुख्तार साफा वाधे (मुखोपाध्याय महाशय पगडी वाँधते थे, उस जमाने मे मुख्तार साफा नही बाधते थे) उनके विरोध म खडे होकर आँखें मुह घुमाकर फर फर अग्रेजी म हाकिम से बातें करते हैं, वे कुछ भी समझ नही पाते । पास वैठे हुए अग्रेजी जानने वाले जूनियर से पूछते हैं— य क्या कह रह ह ?" जूनियर के तजु मा करके उ ह समझाते समझाते दूसरा प्रसग उपस्थित हो जाता है, मुह की बात मुह ही मे रह जाती है—वे निष्फल क्रोध के मारे कापने लगते हैं । इसके अलावा पहले हाकिम लोग मुखर्जी साहव को जिस श्रद्धा से देखते थे, आज के नये हाकिम वैसा नही करते । इन लोगो का ऐसा विश्वास है कि जो अग्रेजी नहीं जानता वह आदमी ही नही है । इ ही सब कारणो से मुखर्जी साहब ने तय किया है कि अब काम से छुट्टी लेना ही श्रेयस्कर है । उ होने जो कुछ जमा किया है उसके सूद से किसी तरह ससार यात्रा चलायेंगे । अब साठ साल के हो गए —क्या हमेशा पिसते ही रहगे । विश्राम का समय क्या नही हुआ । वडा लडका अगर सयाना हुआ होता—दो पैसे कमाकर लाता—तो अब तक कभी की उ होने छुट्टी ले ली होती, घर बैठकर भगवान् का नाम जपते । लेकिन अब ज्यादा दिन नही चला सकेंगे । फिर भी आज कल करते करते और एक साल बीत गया ।

इसी समय सेशन कोट मे एक खून का मुकदमा पेश हुआ । इस मुकदमे के आसामी ने जयराम मुखोपाध्याय को अपना मुख्तार बनाया

था। एक नया अंग्रेज जज आया था, उसीके इजलास मे विचार होने वाला था।

तीन दिन तक मुकदमा चलता रहा। अत मे मुख्तार साहब ने उठकर—"जज साहब बहादुर और एसेसर महोदयगण"—कहकर वक्तृता शुरू कर दी। वक्तृता समाप्त होने पर एसेसरो ने मुखोपाध्याय के मुवक्किल को निर्दोष करार दिया—जज साहब ने भी उनके अभिमत को स्वीकार करके आसामी को रिहा कर दिया।

जज साहब को सलाम करके मुख्तार साहब अपने कागज पत्र बाँध रहे थे, उसी समय जज साहब ने पेशकार से पूछा—"इस वकील का नाम क्या है?"

पेशकार बोला—"इनका नाम जयराम मुखोपाध्याय है। ये वकील नही, मुख्तार हैं।

प्रसन्न होकर जज साहब जयराम की तरफ देखकर बोले—"आप मुख्तार हैं।"

जयराम बोले—"हा हुजूर, मै आपका ताबेदार हूँ।"

जज साहब ने उसी तरह कहा—"आप मुख्तार हैं, मैंने तो समझा कि आप वकील हैं। जिस दक्षता के साथ आपने मुकदमा चलाया, उसे देखते हुए मैंने सोचा कि आप यहाँ के अच्छे वकील हैं।"

यह सुनकर मुखर्जी साहब की बडी-बडी आँखो मे जल भर आया। दोनो हाथ जोडकर कपित स्वर मे बोले—"नही हुजूर, म वकील नही हूँ—मैं सिर्फ एक मुख्तार हूँ। वह भी पुराने जमाने का। मै अंग्रेजी नही जानता। आपने आज मेरी जो प्रशसा की है वह मैं जीवन के अतिम दिन तक नहीं भूल सकूगा। यह बूढा ब्राह्मण आशीवाद देता है कि हुजूर हाईकोट के जज होगे।"—यह कहकर नीचे झुककर सलाम करके मुख्तार साहब इजलास से बाहर आ गए।

इसके बाद वे कचहरी नही गये।

पचम परिच्छेद

प्रटिस छोड देने के बाद कष्ट से मुखर्जी साहब का गुजारा चलने लगा। मच को जिस प्रकार कम करने का विचार किया था, वह भी चेष्टा करने पर भी न हो सका। ब्याज से पूरा न पडने पर मूलधन पर हाथ पडने लगा। कपनी के शेयरो की सख्या कम होने लगी।

एक दिन सुबह मुख्तार साहब बैठक मे बठे अपनी अवस्था के बारे म सोच रह थ, इसी समय महावत आदरिणी को लेकर नदी मे स्नान कराने ले गया। बहुत दिनो स लोग उनसे कह रहे थे—"अब हाथी की क्या जरूरत है, उसे बेच डालो। हर महीने तीस चालीस रुपये बचेंगे। लेकिन मुखर्जी साहब यही जवाब देते कि—'इसके बदले या क्यो नहीं कहते कि तुम्हारे इन बाल बच्चो और नाती पोता को खिलाने पिलाने म काफी रुपया खच होता है—उन्हे एक-एक करके बच डालो।" ऐसी युक्ति के बाद क्या कहा जा सकता है।

हाथी को देखकर मुखर्जी साहब ने सोचा कि इसे कभी कभी भाडे पर दिया जाय तो थोडा बहुत अर्थोपाजन हो सकता है। उसी समय कागज कलम लेकर निम्नलिखित विज्ञापन का मसौदा तयार कर लिया—

हाथी भाडे पर देना है

विवाह की बरात के लिए, दूर दूर तक आने जाने के लिए निम्न हस्ताक्षरकारी की आदरिणी नाम की हथिनी भाडे पर मिल सकती है। भाडा प्रतिदिन २), हथिनी की खुराक १) और महावत की खुराक ।।) कुल ४।।) रुपये। जिन्हे जरूरत हो, नीचे के पते पर पूछें।

श्री जयराम मुखोपाध्याय (मुख्तार)
चौधरी पाडा

यह विज्ञापन छपवाकर, शहर के प्रत्येक लप पोस्ट पर, रास्ते ं किनारे के पडा के तने पर और अयान्य जाहिर स्थाना पर चिपक दिया।

विज्ञापन के फलस्वरूप लोगो ने कभी कभी हाथी भाडे पर लेन शुरू कर दिया—लेकिन इससे १५-२०) रुपये से ज्यादा आय नही हुई।

मुखर्जी साहब का जेठा पोता बीमार पड गया। उसके लिए डाक्टर खच, औपध-पथ्यादि का खच प्रतिदिन पाँच सात रुपय से कम नह लगता था। महीने भर के बाद एक लडका कुछ ठीक हुआ। बडी बहू और मझली बहू दोनो का पैर भारी था। कुछ महीने बाद ही दो जीवा के पालन पोषण की चिंता करनी होगी।

इधर जेठी पाती कल्याणी ने बारहवें वप मे कदम रखा है। देखते देखते जितनी मोटी होती जा रही है जल्दी ही ब्याह किये बिना नही चलेगा। नाना जगहो से उसका सबध आ रहा है, किंतु घर बर मन के मुताबिक नही होते। अगर घर वर ठीक मिल जाता है तो उनका दहेज सुनकर ठिठक जाते हैं। कन्या का बाप इस बारे मे बिलकुल निश्चित है। नशा भाँग पीता है ताश शतरज खेलता है और फ्लूट बजाता फिरता है। सारी मुसीबत इसी साठ साल के बूढे के माथे पर है।

अन्त मे एक जगह ब्याह पक्का हुआ। पात्र राजशाही कालज मे एल् ए मे पढता है, खाने पीने का भी जुगाड है। वे दो हजार रुपये माँगते हैं, अपना खच पाच सौ है—अढाई हजार रुपये हा तो विवाह हो जाय।

कपनी के शेयरो का बडल दिन प्रतिदिन क्षीण हो रहा है—उनम से अढाई हजार निकालना बडा मुश्किल हो गया। और सिर्फ एक ही तो नहीं है—और भी तो पातियाँ हैं। उनके वक्त क्या उपाय होगा?

मला पौष संक्रान्ति के करीब पद्रह दिन पहले शुरू होता है। पर अंत के चार पाँच दिन ही धूमधाम ज्यादा रहती है। संक्रान्ति के एक सप्ताह पहले जाना तय हो गया। महावत तो जायगा ही—मुखोपाध्याय महाशय का मझला बेटा भी साथ जायगा।

जाने के दिन बहुत सबेरे मुखोपाध्याय उठे। तारा ने पहले हथिनी भोजन कर रही थी। घर की स्त्रियाँ चावल-चानियाँ भेजन लेकर बगीचे में उसके पास गई थीं। महाशय पहले मुखोपाध्याय महाशय भी वहाँ जा पहुँचे। पहले दिन का रखा हुआ केले के पत्ते बतासे रख लिये थे, नौकर वही हँडिया लेकर आया। धान पान वगैरह मामूली साथ समाप्त होने पर मुखर्जी साहब ने अपने हाथ से वे रसगुल्ले हथिनी को खिलाये। अंत में उसके गले के नीचे हाथ फिराते फिराते रुद्ध हुए गले से बोले—

"सुन्दर जाना माँ, बामनहाट का मेला देख आयो।"—उनका गला रुँध गया वे फिर नहीं कह सके। दुःख उमड़ पड़ा और उन्होंने इना छलना का सहारा लिया।

हथिनी चली गई। मुखर्जी साहब चुप मन से बैठक के फर्श पर लौट आए। बहुत देर हो जाने पर, बहुत मान मनुहार करके बहुओं ने उन्हें स्नान कराया। स्नान करने के बाद भोजन करने बैठे, लेकिन थाली में परोसे हुए अन्य व्यञ्जन अधिकांश यों ही पड़े रहे।

छठा परिच्छेद

कल्याणी के विवाह की सारी बातें पक्की हो गई हैं। इस शुभ काम के लिए जेठ की दसमी निश्चित हुई है। वैसाख लगते ही दोनों तरफ से आशीर्वाद की रस्म अदा होगी। हथिनी की बिक्री का रुपया आते ही—गहना गढ़ने दिया जायगा।

लेकिन वैसाख की प्रतिपदा को शाम के समय झमझम करती आद रिणी घर लौट आई। उपयुक्त मोल देने वाला खरीदार न मिलने से बिक्री नहीं हुई।

आदरिणी का लौटकर आते देखकर घर मे आनन्द कोलाहल मच गया। बिक नही सकी इस बात का नकर किसी के चेहरे पर कोई खेद का चिह्न नही दिखाई दिया। मानो खोया हुआ धन मिल गया हो—सबके व्यवहार से यही झलकने लगा।

घर के लोग कहने लगे—"अरे आदर दुबली हो गई है। शायद इतने दिन वहा ठीक से खाने को नही मिला। उसे कुछ दिन अच्छी तरह खिलाना पिलाना चाहिए।"

आनन्द का प्रथम उच्छ्वास शान्त होने पर, दूसरे दिन सबके मन मे यही चिन्ता होने लगी कि—कल्याणी के विवाह का अब क्या उपाय होगा ?

पडोसी मित्र दोस्त फिर बैठक मे जमा हुए। इतने बडे मेले मे इतनी अच्छी हथिनी को खरीदने वाला क्या नही मिला, इसीकी बहस होने लगी। एक व्यक्ति बोला—"याद है मुखर्जी साहब ने कहा था—आदर, जाओ मा, मेला देख आओ—" इसीलिए बिक्री नही हुई। वे तो आजकल के मुर्गीखोर ब्राह्मण नहीं हैं। उनके मुँह से जो ब्रह्म वाक्य निकला है वह क्या निष्फल होगा। लोग कहते हैं कि—ब्रह्म वाक्य वेद वाक्य होता है।"

वामनहाट का मेला बिखरने पर वहा से और दस कोस उत्तर को रसूलगज मे एक सप्ताह के लिए एक और मेला लगता है। जो गाय भैस वगैरह वामनहाट मे नही बिक पाती—वे सब रसूलगज पहुँचती हैं। आदरिणी को वहीं भेजने का निश्चय हुआ।

आज आदरिणी फिर मेले मे जायगी। आज वृद्ध जयराम उसके पास जाकर विदा नहीं कर सका। यथा रीति आहारादि के बाद आदरिणी बाहर निकल आई। कल्याणी आकर बोली—"दादा, आदर जाते समय रो रही थी।"

मुखर्जी साहब सो रहे थे, वे उठ बैठे। बोले—"क्या कहा ? रो रही थी ?"

"हा दादा ! जाते समय उसकी आखो से टप टप आसू गिरने लगे थे।"

बूढ़े मुखर्जी साहब फिर से जमीन पर गिर पडे और दीर्घ निश्वास लेकर कहने लगे—"जान गई है। वह अतर्यामी है न ! इस घर मे अब लौटकर नही आयगी, यह जान गई है।"

नातिनी के चले जाने पर आसू-भरी आखो से वे अपने मन म कहने लगे—'जाते समय मैंने तुझे देखा तक नही—यह तेरा अनादर नही किया था ! नही मा, यह बात नही है। तू तो अतर्यामी है—तू क्या मेरे मन की बात नही जानती ? लडकी का ब्याह हो जाने दे। इसके बाद तू जिसके घर जायगी, उसके घर जाकर मैं तुझे देखने आऊँगा। तेरे लिए सदेश ले जाऊँगा—रसगुल्ला लाऊँगा। जब तक जीती रह, मन मे कोई दु ख मत लाना मा !'

सप्तम परिच्छेद

दूसरे दिन शाम को एक किसान एक पत्र लेकर आया और मुखर्जी साहब के हाथ मे वह पत्र रख दिया।

पत्र पढते ही ब्राह्मण के सिर पर मानो वज्रपात हो गया। मझले बेटे ने लिखा था—'घर से सात कोस दूर आकर कल शाम को आदरिणी बहुत बीमार हो गई। वह आगे नही चल सकती। रास्ते के पास एक ग्राम के बगीचे म सो गई है। शायद उसके पेट मे कोई पीडा है—सूड उठाकर बीच बीच मे कातर स्वर से आर्त्तनाद कर उठती है। महावत ने अपनी जानकारी के अनुसार सारी रात चिकित्सा की है—लेकिन कोई लाभ नही हुआ—शायद आदरिणी अब नहीं बचेगी। अगर मर गई तो उसकी लाश को दफनाने के लिए पास ही

कही जमीन का बन्दोबस्त करना होगा। इसलिए बडे मालिक का शीघ्र आना जरूरी है।"

घर मे जाकर आँगन मे टहलते टहलते बूढे मुखर्जी कहने लगे—"मेरे लिए गाडी का बन्दोबस्त कर दो। मैं इसी समय जाऊँगा। आदर बीमार है—पीडा के मारे वह छटपटा रही है। मुझे देखे बिना ठीक नही होगी। मैं अब देर नही कर सकता।"

उसी समय घोडागाडी का बन्दोबस्त करने लोग भागे। रात को दस बजे गाडी रवाना हुई। जेठा लडका भी साथ गया। पत्रवाहक वह किसान कोचबक्स म बैठा।

दूसरे दिन सुबह गतव्य स्थान पर पहुँचकर बूढे ने देखा कि—सब समाप्त हो गया है। आदरिणी की वह नव जलधरवर्ण विशाल देह आम के बगीचे मे पडी है—वह आज निश्चल, निस्पद है।

बूढे मुखर्जी साहब भागकर हथिनी की लाश के पास लोट पडे और उसके मुह के पास मुँह ले जाकर रोते रोते बार बार कहने लगे "नाराज होकर चली गई मा! तुझे बिक्री करने भेजा था इसलिए तू नाराज होकर चली गई।"

इस घटना के बाद सिर्फ दो महीने मुखर्जी साहब जीवित रह सके।

निषिद्ध फल

प्रथम परिच्छेद

बागबाजार के दुर्गाचरण बाबू ने वस्त्राभूषण से सुसज्जित अपनी बारह बरस की लड़की का हाथ पकड़े हुए बैठक में पदार्पण किया और बोले — राय साहब यही मेरी मझली बेटी है।"—फिर लड़की से बोले—'बेटी, इनको प्रणाम करो।'

भवानीपुर के राय बहादुर प्रफुल्लकुमार मित्र अपने मुसाहिबों के साथ गरीब दुर्गाचरण के तख्त पर बैठे फर्शी हुक्के से धूम्रपान कर रहे थे। लड़की लज्जापूर्वक उनके चरणों से मस्तक लगाकर नीची दृष्टि किये खड़ी रही।

राय बहादुर साहब की उम्र पचास साल की होगी। अच्छा खासा गोरा रंग है मोटी भारी-भरकम देह है, हास्योज्ज्वल बड़ी-बड़ी आँखें हैं, दाढ़ी और मूछ दोनों ही सफाचट हैं। चौड़ी किनारी का कीमती दुशाला ओढ़े हुए हैं। मुग्ध दृष्टि से थोड़ी देर तक लड़की की तरफ देखते रहने के बाद बोले—"वाह, लड़की तो खूब है बड़ी सुन्दर है, जीती रहो बिटिया, सुखी होओ। क्यों सुरेश, लड़की अच्छी है न?"

सुरेश नाम के मुसाहिब ने कहा—"जी हां, इसमें क्या शक है?'

रायबहादुर बोले—' बेटा, तुम्हारा नाम क्या है?"

लड़की के दोनों होठ जरा से हिले लेकिन किसी शब्द का उच्चारण नहीं हुआ। दुर्गाचरण बाबू ने उसे उत्साहित करते हुए कहा— बोलो बेटी बोलो। तब लड़की ने अधस्फुट स्वर में कहा—"नन्दरानी दासी।"

रायबहादुर बोले—'नदरानी ? खूब। नाम तो बडा सुदर है। क्या यती द्रदादा ?"

यती द्र नाम का मुसाहिब बोला—"जी हाँ, नाम खासा है।"

दुर्गाचरण बाबू बोले—"नाम नदरानी है—लेकिन घर मे सब रानी कहते हैं।"

"रानी ? हा आपकी लडकी राजरानी होने के ही लायक है। चेहरा कैसा साचे म ढला है। आख भी बडी सुदर हैं। घोषाल बाबू क्या राय है ?'

घोषाल बाबू बोले—"ऐसी लडकी तो आपकी ही पुत्रवधू होने के लायक है।"

रायबहादुर बोले—" अरे बेटी, तुम खडी क्यो हो ? बैठो, यहा बैठो ! दुर्गाचरण बाबू आप भी क्या खडे हैं। बठिये ! '

लडकी बैठने मे आनाकानी कर रही थी। तब "बैठ जाओ बटी'—कहकर दुर्गाचरण बाबू खुद भी बैठ गए। लडकी भी सिर झुकाये पिता से लगकर बैठ गई।

रायबहादुर ने पूछा—"बेटी, तुम क्या पढती हो।"

"आख्यान मजरी द्वितीय भाग, पद्य पाठ प्रथम भाग और रामायण।"

"पान लगाना जानती हो ?"

"जी हा।"

दुर्गाचरण बाबू बोले—"मेरी बडी लडकी जब से ससुराल गई है तब स घर भर के लिए पान यही लगाती है। आपने जो बीडा खाया वह इसीका लगाया हुआ है।'

रायबहादुर ने चाँदी की डिबिया मे से एक पान निकाला और गाल म मुह म डालकर चबाते चबाते बोले—"पान तो खूब है। हाँ बेटी, राँधना बाँधना भी जानती हो ?"

"जी हाँ ।"

"अच्छा ! यह भी सीख लिया । खूब खूब । आलू का साग, परवल की तरकारी, मछली का झोल, यह सब बनाना जानती हो ?"

लडकी ने जरा हँसकर कहा—"जी हा, जानती हूँ ।"

रायबहादुर ने उसके कधो को स्नेह से धीरे धीरे थपथपाते हुए कहा—"इतनी सी उम्र मे यह भी सीख लिया ? बडी सयानी लडकी है ।'

दुर्गाचरण बाबू बोले—'मैं तो इसका बाप हूँ, मैं क्या कहूं। रायसाहब अगर आप मेरी बेटी को स्वीकार करें तो खुद ही देखेंगे कि लडकी कैसी है । पिछले महीने मेरी पत्नी प्रसूति मे थी । बडी लडकी शिवपुर अपनी ससुराल मे थी । बहुत अनुरोध करने पर भी समधी जी ने उसे नही भेजा तब रानी ने ही सारे घर का काम सँभाला था । इसे अपनी पुत्रवधू के रूप मे अगर आप स्वीकार करें तो खुद ही सब कुछ जान लेंगे । '

सिर हिलाते हिलाते रायबहादुर ने मुस्कुराकर कहा—"तुम समझने हो म लूगा नही । मैं तो तुमसे छीन लूगा । ऐसी लडकी मिलने पर कोई छोडता है । क्यो सतीश ?"

सतीश बोला – "जी हा, इसमे क्या शक है ।"

रायबहादुर बोले—"अच्छा एक बात और पूछ लू, फिर बिटिया को छुट्टी दे दो ।" इतना कहकर नदरानी के कधा पर हाथ रखकर उसकी तरफ झुककर बोले—"हा बिटिया मेरे सिर के जो पके बाल हैं उन्हे चुन सकोगी ? दोपहर को, खा पीकर जब मैं सोऊँगा, तब बिछौन मे अपने इस नय बूढे बाप के पास बैठकर, एक एक करके पके बाल बीन सकोगी ? यह काम करना शायद नही सीखा, क्यो बिटिया । अरे तुम्हारे बाप के सिर पर तो सफेद बाल हैं ही नहीं ।" यह कह कर वे अट्टहास करके हँसने लगे ।

नदरानी के मुखडे पर भी जरा सी हँसी की झलक आ पडी। ऊपर नजर करके उसने रायबहादुर के सिर की तरफ देखा। उसने देखा कि वहाँ तो 'कलियुग' मे 'सुजन' की तरह बालो की सख्या बहुत ही कम है। और जो थोडे से बाल हैं वे भी दूर-दूर।

उसके मौन को ही स्वीकारोक्ति समझकर रायबहादुर बोले—"अच्छा बिटिया, इसकी परीक्षा भी बाद मे होगी। जाओ, घर के भीतर जाओ।"

बाहर नौकरानी खडी थी। नदरानी के तख्त पर से उतरते ही उसने जाकर उसका हाथ पकड लिया और भीतर ले गई।

द्वितीय परिच्छेद

फर्श पर से हुक्के को उठाकर करीब एक मिनट तक रायबहादुर साहब चुपचाप धूम्रपान करते रहे। फिर दुर्गाचरण बाबू के हाथ मे हुक्का देकर बोले—"हा भाई, तुम्हारी कब विवाह करने की मर्जी है? अरे मैं एकदम 'आप' को 'तुम' कह बैठा।"

दुर्गाचरण बाबू बोले—"तुम ही कहे। आपका 'आप' कहते देखकर बल्कि मुझको ही शर्म आती है। मै आपके सामने सब प्रकार से छोटा हूँ। उम्र म, धन मे, मान मे—"

रायबहादुर बोले—"हाँ हा—तुम उम्र म मुझसे छोटे हो यह तो स्वीकार करता हूँ। लेकिन मेरे पके बालो को देखकर मुझे बिल्कुल बुड्ढा मत समझ लेना—हा हा हा।"—इतना कहकर एक ठहाके के साथ उन्होने दुर्गाचरण बाबू की पीठ ठोक दी। साथ के मुसाहिबगण भी खूब हँसने लगे।

दुर्गाचरण बाबू हँसते हँसते बोले—"जब आपकी आज्ञा हो तभी विवाह हो सकता है। इसी फाल्गुन म हो जाय। लेकिन मैं एक साधारण आदमी हूँ—नितात गरीब—"

रायबहादुर कहने लगे—"गरीब हो तो क्या हुआ ? गरीब होने से क्या होता है । और गरीब भी किस बात में ? तुम क्या किसी से भीख मागने गये हो ? गरीब की लडकी का क्या प्यार नही होता ? वह क्या जीवन भर कुआरी रहगी ? हिन्दू शास्त्रो मे ऐसा विधान नही है । तुम शायद आजकल की दहेज प्रथा के बारे में सोचकर यह कह रहे हो ? मैं इस प्रथा का विरोधी हूँ—भयकर विरोधी—।"

दुर्गाचरण बाबू बोले—"जी हाँ, यह बात सुनकर ही तो—"

"तो क्या सिर्फ सुनी ही है ? पढी नही है ? मेरी 'सामाजिक समस्या समाधान' पुस्तक नही पढी । उसमे दान-दहेज पर एक पूरा अध्याय है । दान दहेज की मैंने खूब निन्दा की है—उसके सब दोष दिखलाये हैं—तुमने पढी नही ?"

दुर्गाचरण बाबू बोले—"पढ़ी क्यो नही । आपकी पुस्तक किसने नही पढ़ा ? आप एक विख्यात ग्रथकार हैं ।"

रायबहादुर कहने लगे—"विख्यात क्या खाक हूँ ?—हाँ बकिम है एक विख्यात ग्रथकार । वह मेरे बचपन का साथी है । प्रेसीडेंसी कॉलेज म हम दोनो एक साथ कानून पढते थे । और अब ? अब तो बकिम का बडा नाम हो गया है । उसकी एक नई पुस्तक प्रकाशित हुई है—'राजसिंह ।' तुमने पढी है । दनादन बिक रही है । इधर मेरी पुस्तक को कीडे खा रहे हैं, कोई खरीदता भी नही । यही बात मैंने उस दिन बकिम से कही थी ।'

एक ने उत्सुकतापूर्वक पूछा—"क्या बात थी ?"

रायबहादुर कहने लगे—"बकिम से मैंने कहा कि—भाई तुम्हारा जितना नाम है, तुम अब ये सब लव और लडाई की बातें छोडकर, थोडे से ऐसे उपन्यास लिखो जिससे देश का उपकार हो । मेरी बात तो कोई सुनता नहीं, तुम्हारी बात लोग सुनेंगे । यह जो दान दहेज की प्रथा समाज म फैली हुई है, इससे धीरे धीरे सर्वनाश हो जायगा ।

दहेज प्रथा के दोष दिखाकर एक उप यास लिख डालो। और एक ऐसा लेख लिखो जिसे पढकर बगालियो की विलासिता—खासकर चाय पीने की आदत कम हो। एक लेख चौथ कारबार के बारे म भी लिखो। बगालियो का चौथ कारबार क्यो फेल होता जाता है—किन उपायो से वह सफल हो सकता है, उसके वैज्ञानिक तत्व को अच्छी तरह सम झाओ। प्लॉट भी तुम्ह बना देता हू। उसम यह दर्शाओ कि कुछ बगाली युवको ने कॉलेज स निकलकर एक साथ मिलकर काम शुरू किया है, और दिन प्रतिदिन उनकी खूब उन्नति होने लगी। क्रमश उनमे से एक एक लखपति हो गया, गवनमेट से उ हे खिताब भी मिला वगैरह वगैरह। यह छोडकर तुम सिफ लव और लडाई, लव और लडाई की कहानिया लिखते हो। उन सब उप यासा के लिखने स देश का क्या उपकार होगा बताओ ?

घोषाल बाबू ने पूछा—"बकिम बाबू क्या बोले ?"

हुक्का हाथ मे लेकर रायबहादुर बोलें—"वह हँसने लगा। बोला—अच्छा तो चौथ कारबार का उप याम ही शुरू करता हू। कच्चे माल की क्या दर है, और कहा कौन-सी चीज मिलती है, रेलभाडा कितना लगता है, यह भी परिशिष्ट रूप मे छाप दूँगा!—बडा मजाक रहा। तुम्हारी जो मर्जी हो सो करो—" यह कहकर मैं गुस्सा होकर चला आया।

रायबहादुर का चेहरा अत्य त अप्रसन्न दिखाई देने लगा। पाच मिनट तक तम्बाकू पीने के बाद उनका मिजाज ठिकाने आया।

दुर्गाचरण बाबू बोले—"रुपये पैसे, दान दहेज के बारे मे मेरे प्रति अगर आप महरबानी करें, तब तो कोई मुश्किल नही है। जिस दिन आज्ञा हो उसी दिन विवाह हो सकता है। इसी आते फाल्गुन म—"

रायबहादुर बोले—'ठहरो ठहरो । एक और बात रह गई। असल बात तो भूल ही गया । विवाह के बारे मे मेरा एक और मत है। वह बात तुम्हे मजूर हो तभी मैं लडके का विवाह कर सकता हूँ।"

दुर्गाचरण बाबू कुछ शकित होकर बोले—"क्या मत है, आज्ञा कीजिये।"

रायबहादुर जरा हिलडुलकर अच्छी तरह जमकर बैठे और बोले—" 'सामाजिक समस्या समाधान' किताब मे बाल्यविवाह नाम का एक परिच्छेद है। तुमने पढा है ?"

दुर्गाचरण बाबू ने जरा घबराहट के साथ कहा—"जी हाँ—शायद क्या मालूम ठीक याद नही है।"

"उस प्रब ध म मने दिखलाया है कि बाल्यविवाह बहुत अच्छा है। हमारे समाज म जब तक सम्मिलित कुटुम्ब की प्रथा प्रचलित है तब तक बाल्यविवाह के बिना कोई निस्तार नही है। अकेला पति ही स्त्री का परिजन नही है, उसके सास ससुर,देवर जेठ, ननद देवरानी-जिठानी—इन सब के साथ उसे गृहस्थी म रहना है। इसलिये बचपन से ही बहू को परिवार म सम्मिलित हो जाना चाहिये। क्यों ठीक है ना ?"

दुर्गाचरण बाबू बोले —"जी हाँ—बिल्कुल ठीक है।"

"अच्छा मान लो, बाल्यविवाह हमारे समाज के लिए अत्य त उपयोगी है। सभी यह स्वीकार करते हैं। लेकिन इसम एक 'लेकिन' छिपा हुआ ह। वह मेरी ईजाद है। बोलो क्या कहते हो—लेकिन क्या ?'

दुर्गाचरण बाबू सिर खुजलाने लगे, कुछ बोल नहीं सके।

रायबहादुर कहने लगे—' बाल्यविवाह होगा, पर जब तक पूरी

उम्र नही हो जाती पति पत्नी की परस्पर भेंट नही हो सकती। मैंने अपनी पुस्तक मे लडकी की उम्र सोलह साल और लडके की उम्र चौबीस साल निर्दिष्ट कर दी है। इससे पहले उन्हें एकत्र होने देना ठीक नही। डाक्टरो के शास्त्र खोलकर देखो, मेरी राय ठीक है कि नही, यह अच्छी तरह समझ जाओगे।"—इतना कहकर रायबहादुर ने गर्व की हँसी हँसकर अपना मुह ऊपर उठाया।

दुर्गाचरण बाबू नीचा मुह किये कुछ देर तक सोचते रहे फिर बोले—"बात तो ठीक है। लेकिन मुश्किल यह है कि—मेरी रानी की उम्र इस समय यही समझो बारह साल की है, सावन मे बारह पूरे होकर तेरह म पैर रखेगी। तो क्या तीन चार साल तक जँवाई को अपने यहा नही बुला सकूगा ? घर की स्त्रिया तब तो—"

रायबहादुर न बीच ही मे रोककर कहा—"इसमे। जँवाई के आने जाने म क्या रुकावट है। वह तो अवश्य आ सकता है। जिस दिन कहोगे उस दिन तुम्हारे जँवाई को भेज दूगा। उसे खिलाना पिलाना, मान-मनुहार करना, घर की स्त्रिया हँसी मजाक करें—लेकिन मेरे इस नियम का पालन करना होगा।"

दुर्गाचरण बाबू—"यह तो बडी विकट समस्या है।"

रायबहादुर गर्व से फूलकर बोले—'समस्या तो है ही ! बडी विकट समस्या है ! ऐसी ऐसी विकट समस्याओ का समाधान किया है तभी तो मेरी किताब का नाम 'सामाजिक समस्या समाधान' है। इसका एक सुन्दर उपाय मैंने खोज निकाला है। हाँ वह अचानक किसी को नही सूझ सकता, पर है असल म बडा ही सरल उपाय।"

"क्या उपाय है ?"

"बहू अन्दर रहेगी, लडका बाहर के कमरे मे सोयेगा। बस, सब झगडा निबट गया। क्यो, कैसा सहज उपाय है।" कहकर रायबहादुर उच्च स्वर से अट्टहास करके हसने लगे।

दुर्गाचरण बाबू थोडी देर तक चुप बैठे रहे। अ त म बोले—"लौकिक और धार्मिक दृष्टि से यह क्या ठीक होगा ?"

कोई भी उनकी बात का विरोध करे इससे रायबहादुर साहब अत्य त रुष्ट हो जाते हैं। वे बोले—"मैंने अच्छी तरह समझ बूझकर ही लिखा है। तुम्ह पस द न हो तो अ यत्र अपनी लडकी के विवाह की चेष्टा कर सकते हो। मैं अपनी बात से नहीं टलूगा। पहाड टले तो टल जाय पर तु प्रफुल्ल मित्र की बात नहीं टलेगी।"—यह कहकर वे गम्भीर होकर बैठ गये।

रायबहादुर साहब का यह भावा तर देखकर दुर्गाचरण बाबू डर गये। अगर यह लडका हाथ से निकल गया तो बडे दुख की बात होगी। साल मे चालीस हजार रुपया जमीदारी से मुनाफा होता है, कलकत्ते म दो-तीन मकान हैं, रायबहादुर के यही एकमात्र लडका है, बी० ए० मे पढता है, बडा ही सुशील, सच्चरित्र और सु दर है—एक पैसा भी दहेज मे नहीं देना पडेगा—ऐसा सुयोग फिर कहाँ मिलेगा ? इसीलिए बडी नम्रता से, बडी मीठी मीठी बातो से दुर्गाचरण बाबू अपने भावी समधी को मनाने का यत्न करने लगे। घर मे सलाह करक जो ठीक होगा वह कल सुबह रायबहादुर साहब को कोठी पर जाकर जता दूगा।

तब रायबहादुर ने हसते हँसते अपने मुसाहिबो सहित विदा ली। उनकी बडी लँडो गाडी दोनो घोडो की टापो से दुर्गाचरण बाबू की क्षुद्र गली को कपायमान करती हुई सदर रास्ते पर आ निकली।

तृतीय परिच्छेद

फागुन के महीने मे ही शुभविवाह की क्रिया सम्पन्न हो गई। राय साहब के पुत्र का नाम श्रीमान् हेम तकुमार है।

तो क्या सुहागरात की रस्म नही हुई। बस रस्म भर हुई।

लेकिन उसके बाद जितने दिन बहू वहाँ रही, पति के साथ उसकी मुलाकात नही हो सकी। रायसाहब ने पहले से ही अपनी स्त्री और परिवार के सब लोगो म अपनी भीषण प्रतिज्ञा का प्रचार कर रखा था। गृहिणी अपने स्वामी को पहचानती थी, इसलिए उनके हुक्म को रद्द करवाने की उ होने वृथा चेष्टा नही की।

हफ्ते भर ससुराल मे रहकर रानी अपने मैके चली गई।

दुर्गाचरण बाबू ने जँवाई को यौता देकर बुलाना अक्लम दी का काम नही समझा। गृहिणी की तरफ से इस बारे मे बार बार अनुरोध होने पर उ होन कहा कि—"देखो जँवाई को सबेरे बुलाकर शाम होने से पहले बिदा कर सकता हूँ। लेकिन उनके लडके के साथ बहू की मुलाकात नही हुई इस बात पर अगर समधी जी विश्वास न करें तो मैं क्या सबूत साक्षी दूगा ? समधी जी का मिजाज तो तुम जानती ही हो।"

जेठ के महीने म गँवाई षष्ठी हुई। दुर्गाचरण बाबू को शिवपुर मे अपनी बडी लडकी की ससुराल मे रानी को भेजकर एक मातबर एलिबाइ (Alibi) साक्षी तैयार करके, इसके बाद हेम तकुमार को घर बुलाकर जँवाई पूजन की रस्म सम्पन्न करनी पडी।

असाढ़ मे रायसाहब ने बहू को अपने घर बुलाया। हेम त आज तक भीतर के कमरे मे सोता था, अब की बार बाहर के कमरे म निर्वासित हो गया। इस साल उसे इम्तहान की पढाई करनी है, लेकिन वह मेघदूत कठस्थ कर रहा है और पयार आदि विविध छ दो मे विरह की नाना प्रकार की कवितायें करके वक्त बिता रहा है।

सिफ दो बार जलपान और भोजन करने के लिये हेम तकुमार अ त पुर मे प्रवेश करता था। बहू के आने के प द्रह दिन बाद एक दिन दोनो की चार आखें हो गईं।

अब कभी कभी इस प्रकार आमना सामना होने लगा। निर्दिष्ट चार बार अन्त पुर मे प्रवेश करने के अलावा और भी दो तीन बार भीतर जाने के बहाने हेमन्त ने ढूढ निकाले।

एक दिन शाम से पहले तीसरे पहर जलपान करके लौटते समय हेमन्त ने देखा कि बहू एक तरफ घूघट मे मुह छिपाये दुबकी सी खडी है। आस पास कोई नही है। जाते समय वह बहू की साडी छूता गया।

इसके बाद अक्सर प्रतिदिन ऐसा होने लगा। फिर धीरे धीरे पत्रो का आदान प्रदान और ताबूल का आदान प्रदान और न जाने और भी कितनी चीजो का आदान प्रदान उसी क्षणिक मिलन मे सम्पन्न होने लगा।

वर्षा बीत गई और शरद का आगमन हुआ। भादो के अतिम सप्ताह मे महीने की पहली तारीख को पत्र प्रकाशित होने का नियम उन दिनो नही था। 'बगवाणी' मासिक पत्रिका मे 'चकोर की व्यथा' शीर्षक की हेमन्त की एक कविता प्रकाशित हुई थी। नीचे उसका नाम भी छपा था। न जाने कैसे उस कविता पर रायसाहब की निगाह पड गई। दूसरे ही दिन उन्होने समधी को पत्र लिखा कि—"बहू को आये बहुत दिन हो गये है। मॉं से मिलने के लिये बहू का मन छटपटा रहा है। अतएव आश्विन लगते ही कुछ दिनो के लिये उसे ले जाना।"

दुर्गाचरण बाबू आकर अपनी बेटी को घर लिवा ले गये।

चतुर्थ परिच्छेद

कार्तिक के महीने मे प्रेसीडेंसी कॉलेज खुलने के दो तीन दिन बाद क्लास मे हेमन्त को एक पत्र मिला। सिरनामे के अक्षर अपरिचित थे—ऐसा लगा कि बगाली मे लिखे हुए किसी महिला के अक्षर हैं।

पत्र देखकर हेमन्त अचम्भे मे पड गया, क्योंकि कॉलेज के पते से कभी उसकी चिट्ठी पत्री नही आती थी। टिकट पर डाकखाने की मोहर देखी तो—शिवपुर।

पास मे बैठे एक छात्र ने पूछा—"क्यो, क्या श्रीमतीजी की चिट्ठी है?"

"नही"—कहकर हेमन्त ने पत्र को कोट के सामनेवाले जेब मे छिपा लिया और अध्यापक की वक्तृता का ओर विशेष मनोयोग का बहाना करके देखता रहा।

लेकिन असल मे उसके मन मे नीचे लिखे प्रश्न उठ रहे थे—

१ शिवपुर मे मेरी बडी साली की ससुराल है, वहाँ से यह पत्र क्यो आया?

२ आज तक तो कभी आया नही, आज इसके आने का कारण क्या है?

३ क्या रानी ने अपनी बहन की मारफत मुझे चिट्ठी लिखी है?

४ अगर यही बात है तो साली की मारफत उसे चिट्ठी लिखना मुझे उचित है या नही?

५ अगर लिखू तो पिताजी के हाथ पड जाने की सभावना है या नही?

६ जैसे औरो के बाप हैं मेरे पिताजी वैसे क्यों नही हैं? इतने कठोर और निष्ठुर क्यो हैं?

इन्ही सब दुरूह बातो के बारे मे चिंता करते करते हठात् हेमन्त को प्यास लग गई। क्लास म पीछे की तरफ और दरवाजे के बिल्कुल निकट ही वह बठा था—झट से बाहर निकल आया। पानी पीने के लिय उसे दरवान के पास नही जाना पडा—क्योकि जेब मे लिफाफे के भीतर उसकी तृष्णा हरने का पदार्थ मौजूद था। बगीचे म ... कर लिफाफा खोलकर पढने लगा।

उसम लिखा था—

१७ नम्बर विनोद बोस लेन
शिवपुर, २५, कार्तिक

स्वस्तिश्री हम तकुमार,

मालूम नही हम पहचान सकोगे या नही, क्योकि सिफ एक ही दिन तुमने हमें सुहागरात को देखा था। इस बात को भी अब आठ नौ महीने हो गये। रिश्ते म मैं तुम्हारी बडी साली हूँ। तुम्हारे ससुर की बडी लडकी। ऊपर लिखे पते पर हमारी ससुराल है।

मेरी सास ने तुम्ह नही देखा—उनकी एक बार तुम्ह देखने की इच्छा है। तुम्हारे कालेज से शिवपुर ज्यादा दूर नही है—ज्यादा से ज्यादा एक घटे का फासला हागा। शिवपुर घाट पर उतरन के बाद जिससे भी हमारा पता पूछोगे वह हमारे घर का रास्ता बता देगा। हमे भी तुमसे कई जरूरी बातें करनी हैं—इसलिये जितनी जल्दी हा सके एक दिन जरूर आओ। बारह बजे से दो बजे के बीच आओ तो अच्छा रहेगा। हम अपनी सास की अनुमति से तुमको यह पत्र लिख रही हैं।

आशीर्वादिका
यामिनी

पुनश्च—कल से रानी यही पर है। अगले रविवार को पिताजी आकर उसे ले जायेंगे।

पत्र को, खासकर अतिम दो लाइनो को तीन बार पढकर हेमत क्लास मे लौट आया। अध्यापक महाशय उस समय सॉनेट का स्वरूप समझाकर बतला रहे थे कि सानेट की अतिम दो लाइनो म ही सारा माधुय रहता है।

उस दिन कॉलेज मे बाकी के घटो मे क्या पढाई हुई, यह हम त कुछ भी नही बता सकता।

रात को सोते समय लेटे लेटे वह सोचने लगा, रानी आई है, इसीलिये तो दीदी ने नही बुलाया ? या उसकी सास सचमुच मे मुझे देखने के लिये व्याकुल है ? वहा जाने पर रानी के साथ मेरी मुलाकात हो सकेगी क्या ? पर मेरे ऐसे भाग्य कहा ? पिता के वचन की रक्षा करने के लिये रामच द्रजी वन मे गये थे—वह कन्या होकर पिता के वचन का भग क्या करे ? अगर दीदी के मन का यही भाव हो तो ? —हा तो हो। वह अगर मुझसे जलपान का आग्रह करेगी तो मैं कभी नही खाऊँगा। एक पान तक नही लूगा। कभी वह सोचता कि— नही मुलाकात जरूर होगी, अवश्य होगी। सब बातें सोचकर ही दीदी बुला रही हैं। दीदी के पिताजी वचनबद्ध ह, दीदी तो वचनबद्ध है नही। शायद हमारा दुख अनुभव करके प्राण रो उठे हैं इसीलिये इस कौशल का सहारा लिया है। नही तो घर के पते से चिट्ठी न लिखकर कालेज के पते से चिट्ठी क्यो लिखती ? रानी वहा पर रविवार तक है इसी बात को खास तौर स लिखने की क्या जरूरत थी ? सभव है मुलाकात होगी।

इसी प्रकार नाना प्रकार की चिंताओ मे सबेरा हो गया। हेमन्त ने आज स्नान आदि जरा जल्दी ही समाप्त कर लिया। और दिनो की अपेक्षा आज घटे भर पहले ही कॉलेज चला गया। आज शायद ग्यारह बजे से ही लेक्चर शुरू हो जानेवाले हैं।

पौने ग्यारह बजे कॉलेज के साम्ने गाडी से उतरकर हम त ने कोचमैन से कहा—आज घर लौटने मे कुछ देर लगेगी इसलिए चार बजे से पहले गाडी लाने की जरूरत नही है।

गाडी चली गई। उसी समय दरबान के पास पुस्तकें वगैरह रखकर हेमन्त ने एक किराये की गाडी की। तब तक कलकत्ते म बिजली की ट्रामो का चलन शुरू नही हुआ था। घोडे की ट्रामे चलती थी जो बीच

बीच मे रुक जाती थी। ट्राम की सवारी का हेमन्त विश्वास नही कर सका, न जाने कब पहुँचे।

किराये की गाडी मे चाँदपाल घाट फिर वहाँ से नाव से शिवपुर। गगा पर से ही शिवपुर दिखाई पडने लगा। हेमन्त उसी तरफ व्याकुल चित्त से देखता रहा। नाव चली जा रही थी, बिल्कुल गजेन्द्र गति से। माँझी बेटे आलसियो के बादशाह थे।

शिवपुर घाट पर उतरने के बाद घर का पता लगाने म भी कुछ समय लग गया। मालूम पडा कि घर के मालिक हवडा के वकील हैं। उनका बेटा—जिसका बागबाजार म ब्याह हुआ है कलकत्ते में किसी हाउस का नायब खजान्ची है। रास्ते के लोगो से सारी बातें हेमन्त ने मालूम कर ली।

१७ नम्बर मकान के सामने पहुँचते ही हेमन्त ने घडी निकालकर देखी। उसे कॉलेज से आने मे एक घटा बीस मिनट लग गये थे।

आवाज लगाने पर एक नौकर ने आकर दरवाजा खोल दिया। परिचय पूछकर वह अन्तःपुर मे खबर देने गया। बाद मे एक नौकरानी ने आकर पूछा—"लालाजी, अच्छे तो हो ? आओ भीतर आओ—।" उसके पीछे पीछे हेमन्त दोमञ्जिले पर एक कमरे मे पहुँचा।

थोडी देर बाद ही—"कहो लालाजी पहचाना—?" कहती हुई उन्नीस या बीस वर्ष की एक गौर वर्ण हँसमुख युवती ने कमरे मे प्रवेश किया। उसकी गोद मे साल भर का एक बालक था।

हेमन्त को याद आई कि सुहागरात के दिन उसे देखा है—"यामिनी दीदी ?"—कहकर उसे प्रणाम करने के लिये आगे बढा।

यामिनी बोली—"बस बस, हो गया, मैं तुम्हें योंही आशीर्वाद दिये देती हूँ। और आशीर्वाद की जरूरत ही क्या है ? रानी के साथ जिस दिन ब्याह हुआ—उसी दिन तो तुम राजा हो गये हो—" इतना

कहकर यामिनी ने मीठी हँसी की एक लहर उठा दी। साथ ही साथ, बन्द खिडकी के बाहर बरामदे मे से कई तरुणी कठों के दबे गलें की हँसी की एक गुञ्जनध्वनि भी सुनाई दी—कौन है बाहर, भागो यहा से—" कहकर यामिनी के बाहर निकलते ही झम-झम शब्द करते हुये कई युगल चरण सीढियो से नीचे उतर गये।

यामिनी के लौट आने पर हमन्त ने पूछा—"दीदी, मुझे क्यो बुलाया है?"

"तुम्ही बताओ भला? अगर बता दोगे तो—सदेश खिलाऊँगी" कहकर यामिनी हँसने लगी।

"नही बता सकता दीदी—सदेश मेरे भाग्य मे नही हैं" कहकर बालक को लेने के लिए हमन्त ने हाथ बढाया।

बालक अपरिचित व्यक्ति की गोद मे जाने के लिये राजी नहीं हुआ। उसकी मा ने उसे बहुत समझाया—"जाओ राजा, गोद म जाओ, तुम्हारे मझले मौसा हैं, तुम्हे कितना प्यार करते हैं, कितना दुलार करते हैं, राजा भया—जाओ।' कैसा पाजी है, गोद मे नही गया सो नही गया।

घर की कुशल क्षेम पूछने के बाद यामिनी बोली—"हाँ लालाजी, कब तक यहा ठहर सकते हो?"

हमन्त न लौटने का समय पहले से ही मन मे ठीक कर रखा था। बोला—"अढाई बजे मुझे यहा से चल देना होगा, दीदी।"

कमरे म क्लाक थी, यामिनी न देखा कि साढे बारह बजे हैं। बोली—"अच्छा सास को बुला लाऊ।"

दो मिनट बाद हेमन्त ने सुना कि झम झम करते हुए पाजेबो की आवाज नजदीक आ रही है। हेमन्त सोचने लगा कि 'यामिनी दीदी के पैरो म तो कटावदार एक एक कडी थी—यह झम झम करता हुआ कौन आ रहा है? सास की चाल क्या ऐसी है?"

वह आवाज कमरे तक नहीं आई, बाहर ही रुक गई। अकेली यामिनी ने भीतर आकर हँसकर कहा—"सास को तो अभी तक फुरसत नहीं मिली—अभी तक तो उनकी पूजा समाप्त नहीं हुई। किसी और से मिलना चाहो तो कहो। क्यों कोई और चाहिये ?"

हेमन्त का चेहरा लाल हो आया। आशा और आनन्द के मारे उसकी छाती धकधक करने लगी।

यामिनी हँसती हुई बाहर से जिसे खींचकर लाई, वह कुसुम्भी रंग की साड़ी पहने हुए थी। उसे भीतर धकेलकर वह बोली—"यह लो—अपनी रानी लो लालाजी। राजा और रानी का नाटक हम लोग छिप कर नहीं देखेंगे—वह हम लोगों ने थियेटर में अच्छी तरह देख लिया है। अच्छा अब मैं जाती हूँ, निश्चिन्त होकर दो बजे तक तुम राज करो। मैं तब तक तुम्हारे लिये जलपान तैयार करती हूँ।"—इतना कहकर यामिनी किसी उत्तर की अपेक्षा किये बिना जोर की आवाज करती हुई सीढ़ियों से नीचे उतर गई।

पंचम परिच्छेद

कार्तिक बीता, अगहन आया। रानी अब भी बाप के यहाँ है। अब हेमन्त का कॉलेज जाना बन्द है लेक्चर समाप्त हो गये हैं, फाल्गुन में परीक्षा है। कुछ दिन घर में रहने के बाद हेमन्त ने कहा कि—"यहाँ शोर-गुल बहुत होता है इसलिये मेरी पढ़ाई में बड़ा हर्ज होता है। कलकत्ते में मेस में जाकर कुछ महीने रहूँ तो ठीक हो।"

बेटे की इस अध्ययन की इच्छा में पिता ने कोई बाधा नहीं दी।

हेमन्त मेस में जाकर रहने लगा। इस बीच उसका अपने ससुर कुंजलाल से भी परिचय हो गया था। कभी कभी आफिस के बाद कुञ्ज

आकर उसे शिवपुर पकडकर ले जाता था। यामिनी को अपनी बहन के प्रति प्रेम भी इस समय बहुत बढ गया था। अक्सर वह उसे बाप के घर से बुलाकर अपने पास रखती थी।

फाल्गुन म हम त की परीक्षा हो गई, रायबहादुर ने भी बहू को अपने यहाँ फिर से बुलाया।

बैसाख के अ त म बी० ए० की परीक्षा का परिणाम निकला। लेकिन हम त का नाम गजट म कही भी दिखाई नही पडा।

गरमी की छुट्टी के बाद कालेज खुलने पर रायबहादुर ने पुत्र से कहा कि—"घर म शोरगुल होने के कारण तुम्हारी पढाई लिखाई ठीक स नही हो सकेगी। इसलिये तुम कलकत्ते म मेस मे जाकर रहो ता ही ठीक है।'

पिताजी से हम त कुछ कहने का साहस नहीं कर सका। मा से जाकर बोला कि मेस मे रहना बडा कष्टदायी है, आहारादि की व्यवस्था वहा पर कितनी शोचनीय और स्वास्थ्य के लिय हानिकर है—ये सब बातें उसन विस्तारपूवक बतलाइ। गृहिणी ने डरते डरते स्वामी से ये सब बातें कही और उनसे फटकार खाकर लौट आई। हेम त को मेस म ही जाना पडा।

बाप की आज्ञा के अनुसार प्रत्येक रविवार को हम त सुबह घर आता है, जलपान करने के बाद शाम को फिर मेस मे चला जाता है। अत पुर के रास्ते मे रानी की साडी का रङ्ग तक देखने का उसे मौका नही मिलता।

दो रविवार इसी प्रकार बीत जाने पर घर की नौकरानी को घूस दकर हम त न रानी के पास एक पत्र भेजा। इस प्रकार प्रत्येक रवि-वार को नौकरानी की मारफत दोनो का पत्र व्यवहार चलने लगा।

कुछ दिन बाद पूजा आई। छुट्टी म हम त मेस छोडकर घर आया। उस बड़ी आशा थी कि कम से कम विजयादशमी के दिन प्रणाम करन

के उपलक्ष से रानी एक बार उसके पास आयेगी—लेकिन उसकी यह आशा भी विफल हो गई। हेमन्त अब बहुत ही हताश हो गया। जब भी घर आता तो चुपचाप उदास मुह बैठा रहता। कभी कभी सिर पर हाथ धरे बैठा-बैठा सोचा करता।

एक दिन रविवार को नौकरानी ने एकान्त पाकर हेमन्त से कहा कि—"दादाबाबू, बहूरानी रोज रात को रोती हैं।"

हेमन्त ने पूछा—"क्यों ? क्यों रोती हैं ?"

नौकरानी बोली—"हजार हो दादाबाबू, स्वामी स्वामी ही है। बहूरानी कहती हैं कि ऐसा भाग्य लेकर इस भू भारत पर आई कि स्वामी को एक बार आंखो से भी नही देखा।"

"तूने कैसे जाना ?"

"जिस कमरे मे बहूरानी सोती हैं, मैं भी तो उसी कमरे म फर्श पर कथा डालकर सोती हूँ।"

अगले रविवार को नौकरानी ने कहा—"दादाबाबू, एक बार आप बहूरानी से मुलाकात करो।"

हेमन्त बोला—"इसका उपाय क्या है ?"

"आप अगर एक काम करें तो ठीक हो।"

"क्या उपाय ?"

'आप जिस प्रकार रविवार का आते हैं अगर एक दिन कह कि मेरी तबियत ठीक नही है या कुछ हो गया है, और यह कहकर अगर आप यही रह जायें तो रात को सब के सो जाने पर मैं धीरे स उठकर आपके लिए दरवाजा खोल दूँगी।"

हेमन्त बैठा बैठा सोचने लगा। रानी जिस कमरे म सोती है, सीढी से ऊपर दोतल्ले पर जाने पर यही पहला कमरा है। पिताजी का कमरा वहाँ से थोडी दूर है। खूब सावधानी से जाने पर शायद सफल

होना असम्भव नही है। लेकिन बडा डर लगता है । कही पकडे गये तो—छि छि—यह बडी ही फजीहत होगी।

नौकरानी ने पूछा—"क्या कहते हो दादाबाबू ?"

"तुम्हारी बहूरानी क्या कहती ह ?"

"वे कहती हैं कि यह सब रहने दे, मुझे इससे बडा डर लगता है।"

"अच्छा, मैं सोचकर जवाब दूँगा" कहकर नौकरानी को हेमन्त ने अन्त मे रवाना कर दिया।

मेस मे लौटकर "रोमियो जुलियेट" नाटक पढते-पढते हठात् उसके मन म आया कि अगर रस्सी की सीढी मिल जाय तो बगीचे की तरफ से पिछली खिडकी से मैं भी रात को रानी के कमरे मे जा सकता हूँ। बहुत पूछ ताछ करने पर मालूम पडा कि अग्रेजी दूकान पर १५ रु० मे रस्सी की सीढी मिल सकती है। ज्यादा सोच विचार म समय बरबाद न करके वही एक सीढी हेमन्त खरीद लाया।

दूसरे रविवार को एक छोटे से हैंडबेग मे वही सीढी छिपाकर हेमत घर आया। यथासमय नौकरानी के हाथ वही सीढी और एक पत्र स्त्री के पास भिजवा दिया।

पत्र मे लिखा था—

मरे हृदय की रानी,

एक साल का विच्छेद सह लिया, अब नही सहा ,जाता। तुम्ह न देख सका तो इस बार मैं पागल हो जाऊँगा। नौकरानी ने जो उपाय बताया था वह तुम्हे पसन्द नही आया। मैंने भी बहुत सोचकर देखा वह निरापद नही है। लेकिन इस बार मैंने एक बहुत ही सुन्दर उपाय खोज निकाला है। तुम अगर हिम्मत करो तभी हमारा मिलन हो सकता है।

नौकरानी के हाथ में जो चीज भेज रहा हूँ वह रस्सी की सीढ़ी है। उसका एक सिरा तुम्हारे कमरे की जो बगीचे की तरफ खिड़की है उस खिड़की से बाँधकर अगर नीचे लटका दो तो मैं बगीचे की तरफ से इसी सीढ़ी द्वारा अनायास तुम्हारे कमरे में आ सकता हूँ। रस्सी काफी मजबूत है—टूटने का कोई डर नहीं है। अब तुम हिम्मत करो तो सब ठीक हो जाय।

कल रात को ग्यारह बजे सीढ़ी को खिड़की से खूब मजबूत बाँध कर नीचे लटका देना। ग्यारह बजे से साढ़े ग्यारह बजे के बीच मैं दीवार फाँदकर बगीचे में से तुम्हारी खिड़की तक पहुँच जाऊँगा।

इस प्रस्ताव पर अगर तुम राजी न होओ तो मुझे मर्मान्तक पीड़ा होगी। मेरी लक्ष्मी रानी, इस बात में आनाकानी मत करना कोई डर नहीं है विपद की कोई आशंका नहीं है। फिर सुबह के वक्त इसी सीढ़ी द्वारा नीचे उतरकर मैं कलकत्ते चला जाऊँगा।

तुम्हारा स्वामी, हेमन्त।

दो घण्टे बाद नौकरानी के आने पर हेमन्त ने पूछा—"क्या कहा राय है?"

नौकरानी ने कहा—"राजी हो गई हैं, लेकिन बड़ी मुश्किल से।"

"अच्छा तो कल रात को ग्यारह बजे के बाद मैं आऊँगा।"

"आना।"

"अच्छा यही ठीक रहा। ख्याल रखना।"

"ख्याल रखूँगी दादाबाबू।"

छठा परिच्छेद

कलकत्ते में इस बार जाड़ा जरा जल्दी ही शुरू हो गया है। हालाँकि अभी अगहन नहीं बीता है, फिर भी पानी के दाँत लगने तक हो गए हैं। शाम को ही शरीर को लोई कपड़े से ढकने लगती है। फिर

भी लोगा ने गरम मोजे इस्तेमाल करना शुरू कर दिया है। अखबारा में छपा है कि कोहाट पहाड पर बफ पडी है।

अँधेरी रात है। बिर्जीतल्ले की घडी मे टन् टन् करके ग्यारह बजे। भवानीपुर के जिस मुहल्ले मे रायबहादुर प्रफुल्ल मित्र का मकान है वह रसा राड से कुछ दूर पश्चिम की तरफ है। सदर दरवाजा बडे रास्ते की तरफ है, मकान के पिछवाडे के बगीचे के दोनो तरफ अपेक्षाकृत जनहीन रास्ता है। बगीचे के पश्चिम की तरफ का रास्ता तो और भी जनहीन है, क्योंकि उसकी दूसरी तरफ कई सुरकी के कारखान हैं, रात को वहा कोई नही रहता।

ग्यारह बजने के थोडी देर बाद ही कासारीपाडा के रास्ते के मोड पर एक किराये की गाडी आकर खडी हुई। काली अलवान ओढे एक व्यक्ति ने गाडी से उतरकर कोचमेन को भाडा दिया। गाडी वहा स धीरे धीरे चली गई।

कहने की जरूरत नही कि युवक और काई नही विरह ज्वराक्रात हेमन्त ही है।

हेमन्त तेजी से अपने बगीचे के पीछे के रास्ते की तरफ चल पडा। पास आने पर उसन अपनी चाल कुछ धीमी कर दी।

रास्ता जहाँ माड खाकर बगीचे की तरफ गया है वहा हेमन्त ने देखा कि एक कानस्टेबल कबल का ओवरकोट पहन एक मकान की ड्योढी पर बैठा सिगरेट पी रहा है। चोर की दाढी मे तिनका— हेमन्त कनखिया से उसकी तरफ देखता हुआ आगे बढा।

उसी मोड पर जो लालटेन जल रही थी, कुछ दूर तक बगीचे की दीवार उससे प्रकाशित हा रही थी। इसके आगे अधेरा था। हेमन्त ने सोचा कि इस अँधेरे म ही किसी सुविधाजनक स्थान पर दीवार लाँघनी होगी।

वहुत दिनो तक उसने जिमनास्टिक किया था, अब भी वह वदस्तूर फुटबाल खेलता है—उसके हाथ पैरो मे विलक्षण शक्ति है। वह दीवार फाँदने योग्य जगह ढूढने लगा।

इसी समय दूर पर किसी के पैरो का शब्द सुनाई पडा। इस कारण उसे थोडी देर रुकना पडा। पर एक जगह खडा रहना भी खतरे से खाली नही था। जिस तरफ से पैरो की आहट आ रही थी, हेमन्त उसी तरफ जाने लगा। थोडी देर बाद उसने देखा कि दूकानदार या मिस्त्री जाति का कोई व्यक्ति उसकी बगल से निकल गया है।

हेमन्त फिर लौट आया। दीवार लाघने के लिये जो जगह उसने चुनी थी उसके दूसरी तरफ बगीचे म एक बडा अमरूद का पेड था। दीवार फाँदकर उसी पेड की एक डाली पकडकर झूल जाने का उसका इरादा था।

बडी मुश्किल से हेमन्त दीवार पर चढा। चढते समय उसके घुटने छिल गये, कोहनी पर भी चोट लगी। ओ हो, कवियो ने सच कहा है कि प्रेम का पन्थ समतल नहीं है।

दीवार पर चढकर डाल पकडने के लिये हेमन्त ने हाथ बढाया। लेकिन कोई भी डाल हाथ नही लगी। एक तो अँधेरा दूसरे डालियाँ भी काली काली थी।

आखिर हेमन्त वडी मुश्किल से दीवार पर खडा हुआ। हाथ बढाया पर डाल नही पकड सका।

इसी समय किसी के पैरो की आहट सुनाई दी। वह सोचने लगा कि दीवार पर खडे रहने पर वह जरूर देख लेगा, अँधेरे म यही पर बैठ जाऊँ तो ठीक हो।—बैठते समय दीवार की सीमेंट खिसक पडी।

जो आ रहा था, वह यह शब्द सुनकर खडा हो गया। उसने सोचा शायद कोई अमरूद गिरा है। वह इसी मुहल्ले का रहनेवाला

था, उसने पहले भी यहां से अमरूद तोडकर खाये थे। अमरूद खोजते खोजते ऊपर नजर उठाते ही —"बाबा रे, चोर!" कहकर वह भाग खडा हुआ।

उसका यह काण्ड देखकर हेम त हँस पडा। लकिन दूसरे ही क्षण डर का कारण सामने आ उपस्थित हुआ। मोड पर से एक गम्भीर स्वर सुनाई पडा—"अरे कौन है? क्या है रे?"

कांपती हुई अवस्था मे वह बोला—"एक चोर है कानस्टे-बल जी।"

"कहां कहा?'

'वहां। मित्तिर बाबू की दीवार पर एक चोर बैठा है। बैठा-बठा अमरूद खा रहा है।"

यह सुनते ही "जाडीदार हो"—कहकर कान्स्टेबल ने एक जोर की आवाज लगाई।

हेमन्त न दीवार पर बैठे रहना विपदजनक समझा। इतने ही मे सुनाई दिया कि नागरा जूता की आवाज नजदीक चली आ रही है। धुन्ध आई लालटेन की तेज रोशनी भी रास्ते पर पडी।

हेमन्त न तब निरुपाय होकर बगीचे मे छलांग मारी। वहां बहुत सी टूटी फूटी इटें पडी हुई थी उनसे हेमन्त का शरीर कई जगह से छिल गया।

कान्स्टेबल भी भागता भागता आकर वही पर रुका। दीवार और पेड पर तेज रोशनी डालकर फिर लौटकर भाग खडा हुआ।

हेमन्त तब धीरे-धीरे उठकर खडा हुआ। घर की तरफ आंख उठाकर देखा कि दालान की एक खिडकी से रोशनी पड रही है। बाकी की सब खिडकियाँ बिल्कुल अधकारपूर्ण हैं।

खडे होकर हेमन्त न धोती खोल डाली। वह नीचे फुटबाल खेलने की नेकर पहने हुए था, क्योंकि धोती पहने सीढ़ी पर खटर पटर चढ़ना

असुविधाजनक था। धोती उसने अमरूद के पेड़ की एक डाल पर लटका दी ताकि सुबह लौटते समय फिर पहन ले। अलवान कमर में जिस प्रकार बँधा था उसी तरह बँधा रहा।

इस अवस्था मे हेमन्त खिडकी की तरफ बढा। कोई फूल का पौधा दबकर नष्ट न हो जाय इस डर से वह अत्यन्त सावधान होकर मेडो पर से जाने लगा।

जब उसने आधा रास्ता तय कर लिया तो इतने मे अचानक बगीचे का दरवाजा खुल गया। तीन चार आदमी हाथ मे लालटेन लिये भीतर आये और कहने लगे कि—"कहाँ, कहाँ कानस्टेबल जी ?"

कान्स्टेबल ने कहा—"अमरूद के पेड पर।" तब सब लोग धीरे धीरे अमरूद के पेड की तरफ बढने लगे।

हेमन्त एक पेड की आड मे छिप गया। कण्ठस्वर से उसने पहचान लिया कि उन्ही के घर के जमादार महावीरसिंह और दो दरबानो को लेकर कान्स्टेबल आया है।

थोडी दूर जाने के बाद महावीरसिंह बोला—"कोई तो दिखाई नहीं देता।"

कान्स्टेबल ने कहा—"भाग गया क्या ? मैंने अपनी आँखो से कूदते हुए देखा है।"

क्षण भर बाद—"वह क्या है—वह क्या है—" कहते हुए सब लोग अमरूद के पेड की तरफ बढे। कुछ देर बाद हेमन्त ने देखा कि पेड की डाल से लटकी हुई धोती पर लालटेन की रोशनी पड रही है। ऐसी विपत्ति के समय भी उसे हँसी आ गई।

"भागो—चोर पकड लिया।" कहते हुए वे लोग उसी धोती की तरफ भागे। पास पहुँचकर वे लोग बोले—"धत्तेरे की यह तो सिर्फ धोती है।" धोती नीचे उतारकर लालटेन की रोशनी मे वे लोग देखने लगे।

इसी समय दोतल्ले की एक खिडकी खुली और उसमे से रोशनी बाहर पडने लगी। रायबहादुर का कठ स्वर सुनाई दिया—"क्या है ? क्या है महावीरसिंह ?"

कान्स्टेबल वगैरह ने वही से चिल्लाकर कहा कि—"हुजूर बगीचे म चोर घुसा है।"

रायबहादुर ने चिल्लाकर कहा—'खोजो खोजो—पकडो।"

तब उन लोगो न लालटेन लेकर बगीचे मे खोजना शुरू कर दिया।

हेमन्त ने देखा कि अब आफत है, अभी व लोग यहा आ जावेंगे। अब क्या किया जाय। दीवार फादकर भाग जान के सिवाय और कोई चारा नही है। हेमन्त ने जूते खोल डाले। वे लोग जिस प्रकार बगीचे मे खोज रहे थे, वह भी पेडो की आड म छिपता हुआ दीवार की तरफ बढने लगा।

थोडी देर बाद एक व्यक्ति ने चिल्लाकर कहा कि—"वह क्या भाग रहा है।"

बगीचे मे एक नकली पहाड था। हेमन्त ने एक पत्थर उठाकर जोर से उनकी तरफ फेका।

"अरे बाप रे बाप—जान निकल गई रे"—कहकर एक व्यक्ति चिल्ला पडा।

रायबहादुर ने चिल्लाकर पूछा—"क्या हुआ ?"

इसी समय और भी दो तीन पत्थर जोर से आकर लगे। सब लोग वहा स हट गय। वे बोले—"हुजूर, पत्थर से महावीरसिंह का सिर फोड दिया है।"

"अच्छा ठहरो, मैं बन्दूक निकालता हूँ"—कहकर रायबहादुर ने जोर की आवाज के साथ खिडकी बन्द कर दी।

हेम त ने देखा कि दीवार के पास जाना अब निरापद नही है। इससे तो रानी के साने के कमरे की खिडकी नजदीक है। किसी प्रकार वह अगर उस खिडकी के पास तक पहुँच सके तो सीढी से ऊपर चढ जाये, इसके बाद बगीचे म इन लोगो की जितनी इच्छा हो खोजें, पिता जी आकर जितनी हो सके ब दूक चलायें। यह सोचकर पेडो की आड लेता हुआ धीरे-धीरे वह खिडकी की तरफ बढने लगा। अत म सीढी पकडकर ऊपर चढने लगा।

वह जब आधी दूर पहुँच गया तो दरवाजे की खिडकी से दन् से ब दूक की आवाज हुई। लालटेन हाथ मे लिये नौकर के साथ राय बहादुर ने बगीचे म प्रवेश किया। बहू की खिडकी की तरफ उनकी नजर पडते ही वे चिल्लाकर बोले--"कौन है रे, कौन है ?"

बात की बात म हेम त खिडकी तक पहुँच गया। भीतर पहुँचकर फौरन सीढी ऊपर खीचकर उसने खिडकी ब द कर दी।

रायबहादुर ने चिल्लाकर कहा--"चोर कमरे मे घुस गया है, चोर कमरे मे घुस गया है। दौडो, सब लोग भीतर चलो। पकडो।"--कहकर वे दलबल सहित मकान म भागकर आये। सब लोग आँगन मे सतक होकर खडे हो गये, और उ होने ब दूक हाथ मे लिये ऊपर जाकर बहू के कमरे का दरवाजा खटखटाया।

नौकरानी ने काँपते काँपते दरवाजा खोल दिया।

रायबहादुर ने कमरे के भीतर जाकर देखा कि फर्श पर उनकी पुत्रबधू मूछित पडी है और चोर पलग पर लोई ओढे पडा है।

दूसरे दिन रायबहादुर साहब ने— सामाजिक समस्या समाधान' पुस्तक का एक पृष्ठ खोलकर एक जगह 'चौबीस' का अक काटकर 'चौदह कर दिया। अगर कभी पुस्तक का दूसरा सस्करण हुआ तो इसी प्रकार सशोधित रूप मे छपेगी।

आमों की चोरी

दानापुर स्टेशन के करीब ही अंग्रेजी टोला म लाल टाइल से छाया हुआ एक लम्बा सा इकमंजिला पक्का मकान है । यह रेलवे गार्डों के लिए बना हुआ 'रेस्टहाउस' या विश्रामगृह है । कतार बन्द अनेक खिडकिया हैं, सामने और पीछे लम्बा बरामदा है । मकान के पीछे की तरफ देशी कवलू के छप्परयुक्त कई घर हैं जिनमे से एक बावर्चीखाना, और दूसरो म नौकरो के रहने के लिए कई कमरे हैं । सामने की तरफ थोडी सी खुली जमीन मे फूला का बगीचा है । दो बडे बडे शिरीष के पेड फूला से लदे हवा मे झूम रहे हैं । अय सब फूलो म से अधिकाश विलायती फूला के छोटे पौधे हैं, एक दो देशी फूल भी है ।

असाढ का महीना है । आसमान मे बादल छाये हुए हैं । सामने के बरामदे मे लोहे की खाट पर नेट की मशहरी मे गार्ड डिसोजा साहब सो रहे हैं । बीच बीच म हवा के झोको से मशहरी काप उठती है । रात को दो बजे मुगलसराय से २६ न० मालगाडी लेकर डिसोजा साहब दानापुर आये थे । अब दस बजे फिर १५ न० लोकल पैसेंजर लेकर उन्हें मुगलसराय लौटना है ।

८ बज गये हैं । धूप नही है, इसलिए समय का पता नही लग रहा है । बँगले का खानसामा नगे पाँव धीरे धीरे आकर साहब के बिछौने के पास खडा हो गया । लाल धारिया का कानपुरी टुइल का पायजामा सूट पहने साहब गहरी निद्रा म मग्न हैं । कोट के अधिकाश बटन खुले हैं । खानसामा ने पुकारा—"हुजूर ।" हुजूर का कोई जवाब नही ।

खानसामा ने फिर पुकारा—"आठ बज गया साहब—जागिये। अन्त मे खानसामा ने मशहरी के भीतर हाथ डालकर साहब के घुटने पकडकर हिलाया और कहा—"जागिये हुजूर। आठ बज गया।"

साहब ने तब 'ऊँ' करके आँखें खोलीं। एक जम्हाई लेकर तकिये के नीचे से अपनी बडी सरकारी वाच निकालकर देखी, आठ बजकर बारह मिनट हो गये थे।

साहब बिछौने पर उठ बठ और बोले—"गुसल ठीक करो।"

"ठीक है हुजूर"—यह कहकर खानसामा चला गया।

साहब बिछौने से उतरकर कमरे मे गये और खूटी पर टगे अपने कोट के पाकेट म से पाइप, दियासलाई और तम्बाकू की थैली निकाली। भीतर के सामने के पाकेट मे एक चिट्ठी थी, वह भी निकाल ली।

एक ईजी चेयर पर बैठकर पाइप सुलगाकर, चिट्ठी खोलकर साहब पढने लगे। चिट्ठी मुजफ्फरपुर के स्टेशन मास्टर की कन्या कुमारी वर्था केवल की थी। वर्था के साथ डिसोजा साहब पिछले अप्रल महीने से विवाह वचन म आबद्ध हैं। अक्टूबर महीने से डिसोजा साहब की एक महीने की छुट्टी ड्यू होगी—छुट्टी होते ही ब्याह और शिमला की पहाडी पर सुहागरात बितायेंगे, यह तय हुआ है।

चिट्ठी आज तीन दिन से साहब के पाकेट मे ही घूम रही है। लौटती डाक से उतर देने का अनुरोध था, लेकिन यह सम्भव नहीं हो सका—उ ह आज जवाब लिखकर पत्र डाक म डालना ही चाहिए।

पाइप खतम करके, हजामत और स्नानादि के बाद जब साहब बाहर निकले तो ९ बज गये थे। मोकामा मुगलसराय लोकल ठीक साढे नौ बजे दानापुर पहुँचेगी। उसी समय स्टेशन पर हाजिर होकर ट्रेन का चाज लेना है—इसलिये पत्र लिखने की इच्छा छोडकर साहब ने हाजरी लाने का हुक्म दिया। पत्र लिखने का समय नहीं मिल सका

इसीलिये साहब का मन कुछ अप्रसन्न था। उनके चेहरे के भाव से साफ दिखाई पड रहा था।

खाद्य पदार्थों की पहली किस्त टेबल पर आई। दो टोस्ट, मक्खन और चाय। दो उबले अडे थे—साहब ने पहल पहल अडे को ताडकर देखा तो सडा था। उसे एक तरफ सरकाकर दूसरा फोडकर मक्खन और टोस्ट के साथ खाते खाते पूछा कि—"और क्या है।" खानसामा ने जवाब दिया—"मटन चाप है, ठडा टोस्ट, करी भात है।'—इतने मे खानसामा के सहकारी ने एक ढके पात्र मे मटन चाप लाकर टवल पर रख दिया।

साहब न ३ ४ चाप प्लेट मे लेकर छुरी से काटकर खाना शुरू किया। कुछ देर चबाने के बाद बोले—"बहुत कडा है, मटन नही है।"

खानसामा बोला—"गाट मटन है हुजूर, असल मटन नही मिला।"

साहब ने दूसरा चॉप काटकर खाने की व्यर्थ चेष्टा करने के बाद गुस्सा होकर कहा—"ले जाओ। फेंक दो। कुत्ते को मत देना उसका दाँत टूट जायगा।"

खानसामा ने प्लेट उठाकर सहकारी से कहा—"टोस्ट लाओ, करी भात लाओ—जल्दी।"

गत रात का लेग आफ मटन का बचा खुचा था, उसम से दो टुकडे काटकर साहब ने खाना शुरू किया—लेकिन अच्छा नही लगा।

साहब ने तब करी भात मँगाया। मुर्गी की करी थी—बतन से धुआँ उठ रहा था। प्लेट मे लेकर खाकर दखा कि उसे चबा सकना उनके बस की बात नही है।

साहब गरज उठे। "क्या हुआ—यह क्या है। यू डेम उल्लू का बच्चा। हम तुम्हारा ऊपर रिपोट कर देंगे।—सी इफ आई डोंट—" कहकर काँटा चम्मच फेंककर साहब उठ खड़े हुये। घड़ी देखी तो नौ बजकर सत्ताईस मिनट हुये थे। हैट लेकर बाहर निकले और तेजी से स्टेशन की तरफ चल दिये।

यथासमय ट्रेन ने दानापुर छोड़ा। पाँच छह मुसाफिर डब्बे थे बाकी सब माल ढोने के वैगन थे। प्रत्येक स्टेशन पर ठहरते-ठहरते साँझ तक गाडी मुगलसराय पहुँचेगी।

दो तीन स्टेशन पार होते ही डिसोजा साहब भूख के मारे बेचैन हो उठे। ट्रेन के चार्ज लेने के समय उन्होंने देखा था कि ब्रेकवान मे नीचे से लगाकर डिब्बे की छत तक आम की टोकरियाँ लदी हुई हैं। इन दिनो दरभंगा की तरफ से चारो तरफ खूब आम चालान होता है। साहब ने सोचा कि कुछ आम निकालकर खा जायें।

यह सोचकर साहब ने ब्रेकवान का दरवाजा खोला। पके आमो की लोभनीय मीठी गध ने क्षुधार्त के नासा रध्रो मे प्रवेश किया।

सामने ही एक बडी टोकरी थी ऊपर सुतली से टाट सिला हुआ था, सिलाई की छीड मे से काले काले आम के पत्ते झाँक रहे थे। डिसोजा ने पाकेट से छुरी निकालकर सिलाई काटी और भीतर हाथ डाला। पहले तो सिर्फ पत्ते ही पत्ते थे, और नीचे हाथ डालकर डिसोजा ने एक आम निकाला। देखा कि बडा बढिया लगडा है। एक आम और निकालकर ब्रेकवान का दरवाजा बन्द करके अपनी जगह पर आकर बक्स मे से एक प्लेट निकाली। साहब ने दोनो आमो को सुराही के पानी से अच्छी तरह धोया। इसके बाद दोनो आमो को काटकर बडे मजे के साथ खाना शुरू किया।

आधा भोजन होते ही गाडी आकर कैलवार स्टेशन पर ठहरी। स्टेशन मास्टर रामतारण मित्र धोती पर फटी सी अचकन पहन कर

'गाडी पास' करने ग्राये थे। ब्रेकवान के पास ग्राकर बोले—"गुड मोनिंग मिस्टर डिसोजा, कुछ पासल वासल उतरेंगे क्या ?"

साहब ने ग्राम खाते खाते कहा—"कुछ नही।"

"वाह ग्राम तो खूब है। खासी ग्रच्छी गध ग्रा रही है, शायद पासल का ग्राम है ?"

साहब ने सिर हिलाकर कहा—"खाग्रोगे ?"

"हा न साहब!" कहते-कहते रामतारए बाबू ब्रेकवान की तरफ गये। साहब बोले—"दरवाजा खोलो। ग्ररे-ग्ररे सामनेवाली टोकरी मे से दो ले लो।"

रामतारए बाबू ने टोकरी का टाट डडे से ऊपर उठाया ग्रौर इस पाकेट मे दो ग्रौर उस पाकेट मे दो एव हाथ मे दो ग्राम लेकर बाहर निकले।

साहब ने कहा—"पान है।"

"हा है"—कहकर बाबू ने पॉकेट से डिब्बा निकालकर दो पान साहब के 'वान बुक' नाम के रजिस्टर पर रख दिये। उतरकर घटा बजाने के लिये कहा—गाडी छूट गई।

साहब हाथ धोकर ड्राइवर को हरी भडी दिखाकर दोनो पान खानेवाले थे कि उन्ह ख्याल ग्राया कि भूख ग्रभी तक मिटी नही है, मगर एक दो ग्राम ग्रौर खाये जाते तो ठीक रहता। जैसी इच्छा वैसा काम। खाने के बाद मुह हाथ धोकर पान खाते-खाते गाडी ग्रारा स्टेशन पर ग्राकर ठहरी।

ग्रारा ग्रपेक्षाकृत बडा स्टेशन है, स्टेशन मास्टर गाडी पास करने नही ग्राये, बल्कि जनरल एसिस्टेंट ग्राया। बाबू की ग्रधेड उमर है,

आखा पर चादी के फ्रेम का चश्मा है। ब्रेकवान तक आकर बोले—' हैलो मिस्टर डिसोजा, मेगो स्मेलिंग ब्युटीफुल।"

साहब ने हँसकर कहा—फाइन लैंगडाज। खाओगे!"

"दो न साहब कुछ।"

डिसोजा ने उसी टोकरी से चार आम निकालकर बाबू को दिये। ब्रेकवान बन्द करके स्टेशन के आफिस म गये। यहाँ कई मालगाडियाँ भरी जा रही थी, इसलिये देर लगनेवाली थी। स्टेशन मास्टर उस समय घर मे भोजन करने के बाद निद्रामग्न थे। उनका लडका चारु और लडकी कमला वहाँ खेल रह थे। जनरल बाबू के हाथ मे आम देखकर और वे डिसोजा साहब ने दिये हैं यह जानकर चारु और कमला ने हठ पकड ली। "साहब हम भी आम खायेंगे" यह कहकर उन्होंने साहब के घुटने पकडकर उछलना शुरू कर दिया।

साहब ने कहा—"अच्छा तुम लोग हमारे लिए पान ले आओ! हम आम देगा।'

चारु और कमला डिसोजा साहब के लिए पान लाने के लिये भाग खडे हुए। वे लोग इन्हें पानखाऊ साहब कहते थे। पहले भी कई बार साहब को पान लाकर दिये थे।

पान लेकर साहब उन्हें ब्रेकवान म ले गये और अपने हाथ से टोकरी से निकालकर आम दिये। इन्होंने भी "और दो, और दो" करके झोली और आँचल भरकर आम ले लिये और आनंद से नाचते-नाचते घर की तरफ चले गये।

इस प्रकार प्रत्येक स्टेशन पर 'दान' करते-करते एव बीच बीच म खाते खाते, ५ बजे तक टोकरी खाली हो गई। सब्लडिहार स्टेशन मास्टर से टोकरी का इतिहास कहते कहते दो आम खाते समय डिसोजा

ने देखा कि मुश्किल से कोई १५ १६ ग्राम नीचे रह होगे। स्टेशन मास्टर ने कहा—"साहब दिये सो दिये, लेकिन एक ही टोकरी से सब क्यो दिये ? इतनी टोकरिया तो पडी थी। सबमे से थोडा थोडा लेते तो ठीक था।"

साहब ने कहा—"ये ग्राम बडे मजेदार हैं। दूसरी टोकरियो के ग्राम कैसे हैं इसका कुछ पता नही।"

बाबू ने हँसकर कहा—"अच्छा, पाच जनो का सराप लेने की बजाय एक का अभिशाप ही अच्छा।"

साहब ने कहा—"टोकरी एकदम खाली हो गई। ओ कुली, लाइन से थोडे पत्थर उठाओ तो।"

कुली पत्थर उठाकर ब्रेकवान म रखने लगा। काफी पत्थर जमा हो जाने पर साहब के कह अनुसार कुली न ग्राम की टोकरी मे से ग्राम निकालकर, पत्थर भर दिये और उन पर ग्राम और ग्राम के पत्ते बिछा दिये। गाडी छूटने पर साहब ने अपने हाथ से टोकरी फिर से सी दी।

सूग्रा सुतली वगैरह गाड साहब के बाक्स म ही मौजद रहते हैं।

शाम से पहले ही ट्रेन मुगलसराय पहुँची।

काम धाम पूरा करके घर जाने से पहले डिसोजा ने केलनर क होटल मे जाकर एक प्याला चाय लाने का हुक्म देकर रोटी पर मक्खन लगाकर खाना शुरू कर दिया।

चाय पीकर घर लौट रह थे कि रास्ते मे रेलवे इस्टीटयूट के पास दो दोस्ता न उन्ह पकड लिया। कहने लगे—"चलो एक हाथ जोकर खेला जाय।

इस्टीटयूट म 'पानीय' मिलता है और उसका नगद दाम भी नहीं दना पडता। डिसोजा सहज ही राजी हो गया।

दो बाजी जोकर खेलते-खेलते और कई प्याले ह्विस्की पीते पीते रात के साढे आठ बज गये। डिसोजा ने तब कहा कि—"घर चला जाय, मुझे अब भूख लगी है।" घर मे सिर्फ डिसोजा की बूढी मा है।

बगलें मे जाकर डिसोजा ने देखा कि उनकी मा गुस्से के मारे आग हुई बैठी हैं। फर्श पर एक आम की टोकरी पडी है, आस पास आम के पत्ते फैले हुए हैं, एक जगह पर कुल १५-१६ आम और एक टोकरी पत्थर के टुकडे।

नशे के कारण डिसोजा की समझ मे कुछ नही आया।

मिसेज डिसोजा ने कहा—"अरे जान किस ट्रेन से वापस आया है?"

डिसोजा ने इसका कोई जवाब नही दिया—"यह बास्केट कहाँ से आई?"

"मुजफ्फरपुर से। आज दोपहर को तुम्हारे ससुर के हाथ का लिखा हुआ पत्र मिला था। १५० अच्छे लँगडा आम भेजे हैं, सभव है १५ नम्बर गाडी से वे यहा पहुँच जायेंगे। लिखा है कि रसीद डाक से आने मे देर लग सकती है, १८ नम्बर आने पर आदमी भेजकर टोकरी मँगवा लेना। ट्रेन आने के आधे घटे बाद ही मैं स्टेशन जाकर बास्केट ले आई। लाकर खोलकर देखती हूँ तो आम सब चोरी चले गये हैं। आम की जगह पत्थर भर दिये हैं। देखो तो सही। कैसी बुरी बात है। फिफ्टीन अप मे गार्ड कौन था खबर तो करो।"

डिसोजा ने कहा—"फिफ्टीन अप मैं ही तो ले आया हूँ।"

'तुम? तुम इतनी देर कहा थे? तुम? तब आम किसने लिये? शायद दीघा या बाँकीपुर मे—"

डिसोजा ने कहा—"नही नहीं—ओ-आ आम मैं मैंने ही खाय हैं।"

बुढिया पहले ही समझ गई थी कि बेटा प्रकृतिस्थ नहीं है। बोली—"तुमने खाये हैं, एक टोकरी आम ? असभव !"

डिसोजा ने पास की कुर्सी पर बैठकर कहा—"बडी भूख लगी थी, इसीलिए खा डाले हैं।"

माँ ने कहा—"नॉनसेंस। यह बात अब तुमसे कहने से कोई फायदा नही। कल सुबह इस बारे म बदस्तूर खोज करके सारी बात ऊपर वालो को बतानी होगी। मैं यो ही नहीं छोड़ूगी। इतन आम ! रेलव कमचारी क्या चोर हैं। कैसा अँधेर है। छि छि छि !"

❂

8608

मास्टरजी

पचास साल से कुछ पहले वधमान शहर से सोलह कोस दूर, दामोदर नद के दूसरे किनारे, न दीपुर और गोसाइगज नाम के दो गाँव पास-ही पास बढ रह थे, और दोनो गाँवों की सीमा रेखा पर एक प्राचीन विशाल वड का पेड खडा था। अब वे दोना गाँव भी नही हैं, वड का पेड भी अदृश्य हो गया है —दामोदर की बाढ इन सबको वहा कर ले गई है।

फाल्गुन का महीना है, एक पहर समय वीत गया है। गोसाइगज की मातबर प्रजा और गाँव के अभिभावक स्थानीय कायस्थ स तान श्रीयुत हीरालाल दास दत्त महाशय हाथ म हुक्का लिये पी रह थे। पडोसी श्यामापद मुखुज्जे और केनाराम मल्लिक (ये भी ऊँचे घराने के हैं) पास म बैठकर इस साल चैत मे सावजनिक अन्नपूर्णा की पूजा का किस प्रकार आयोजन किया जाय इसीके बारे मे परामश कर रहे थे। पडोस के न दीग्राम मे भी हर साल चन्दा जमा करके धूमधाम के साथ अन्नपूर्णा की पूजा होती है। इस साल यह अफवाह सुनी जा रही है कि वे लोग हर साल की तरह यात्रा तो लायेंगे ही, इसके अलावा कलकत्ता के किसी डफाली को भी वयाना दे आए हैं। डफ का सगीत इस तरफ इससे पहले कभी नही सुना गया। यह अफवाह अगर सच हो तो गोसाइगज वालो का सिफ यात्रा लाने से काम नही चल सकता, डफ वालो को भी बुलाना पडेगा। उन लोगो ने किस डफ बजानेवाले को बयाना दिया है, इसी गोपन खबर का पता लगाने के लिए गुप्तचर नियुक्त हुए हैं। उसका नाम धाम ठीक से मालूम हो जाय तो वधमान या कलकत्ता जाकर पता लगाना चाहिए कि उस डफाली

से बढकर दूसरा कौन-सा ढफाली मशहूर है, और उसी मशहूर ढफाली को गाने के लिए बयाना देना चाहिए—इसमे जितना रुपया लगे, लग जाय। क्योकि गोसाईंगज-वासियो की सबकी यही राय है। तीन पीढियो से गोसाईंगज किसी बात मे नन्दीपुर के सामने नीचे नही झुका—आज भी नही झुकेगा।

आगामी सार्वजनिक पूजा के बारे मे जब गाँव के तीन प्रधान व्यक्तियो मे उपरोक्त गम्भीर और गूढ आलोचना चल रही थी, उसी समय रामचरण मडल हाफता हाँफता वहाँ आया और हाथ की लकडी को नीचे पटककर धडाम से जमीन पर बैठ गया। उसकी भावभगी देखकर हीरु दत्त न डरते डरते पूछा—'क्यो रे मडल, यो क्यो बैठ गया। क्या हुआ है ?"

रामचरण ने दोना आँखा को कपाल पर चढाकर हाफते हाफते कहा—' क्या हुआ है यह पूछ रही हो दत्त पत्नी, क्या होना अब बाकी रहा है ? हाय हाय—कार्तिक मे जब मुझे ज्वर हुआ था, मैं तभी क्यो नही चल बसा। यही देखने के लिए क्या भगवान ने मुझे बचा रखा था ! हाय विधाता ! हाय रे मेरे फूटे भाग।'

श्यामापद और केनाराम भी घोर दुश्चिन्ता से रामचरण की तरफ देखते रह। दत्त पत्नी बोली—"क्या हुआ, क्या हुआ ? सब साफ साफ कहो न। इस समय आ कहा से रहे हो ?"

एक लम्बी साँस लेकर भारी स्वर मे रामचरण ने उत्तर दिया—"नन्दीपुर से। हाय हाय, अन्त मे नन्दीपुर के सामने मस्तक नीचा हो गया ! हाय रे हाय !"—यह कहकर रामचरण ने जोर से अपना माथा पीट लिया।

दत्त पत्नी ने पूछा—"क्यो क्या ? नन्दीपुर वाला ने ऐसा क्या किया है ?"

"बताता हूँ। बताने के लिए ही आया हूँ। इस कडी धूप मे एक कोस से भागता भागता आ रहा हूँ। गला सूख गया है, मुह से बात नही निकल रही है। एक लोटा पानी—"

दत्त पत्नी के आदेश से अविलम्ब एक घडा पानी और एक लोटा आ गया। रामचरण ने लोटा उठाकर चबूतरे के किनारे बैठकर उस पानी से हाथ पैर और मुह धोया, थोडा सा पीया भी। फिर हाथ मुह पोछते पोछते पास आकर बैठ गया और गम्भीर विषाद से सिर झुकाये बैठा रहा।

हीरु दत्त ने कहा—"अब बताओ क्या हुआ है। अब और जला जलाकर मारो मत बापू!"

रामचरण ने कहा—"क्या हुआ है? जो नही होना चाहिए वही हुआ है। बडे बडे शहरो मे जो नही होता, नन्दीपुर मे वही हुआ है। इन गँवई-गावो मे जो किसी ने कभी स्वप्न मे भी नही सोचा, वही हुआ है। उन लोगो ने इस्कूल खोली है।"

तीनो ने एक स्वर मे पूछा—"यह क्या है। इस्कूल क्या है?"

रामचरण ने कहा—" अरे मैं भी पहले क्या खाक जानता था कि इस्कूल किसे कहते हैं? आज ही सुना कि अँगरेजी पढाने की पाठशाला को इस्कूल कहते हैं।"

दत्त पत्नी ने कहा—"ओह! समझी, स्कूल खोली है।"

"हाँ हाँ वही खोली है। एक मास्टर भी आया है। अग्रेजी पाठशाला मे पढाने वाले गुरु को शायद मास्टर कहते हैं। दासु घोष के चण्डीमडप मे इस्कूल लगा है। अपनी आँखो से देखकर आ रहा हूँ, मास्टर बैठा दस बारह लडको को अँगरेजी पढा रहा है।"

हीरु दत्त एक लम्बी साँस लेकर गाल पर हाथ रखकर सोचने लगा।

थोडी देर बाद उसने पूछा—"मास्टर कहाँ से लाये हैं, इस बारे मे कुछ सुना।"

"सब खबर लेकर आया हूँ। वधमान से लाये हैं। बामन का बेटा है इन्दन चक्रवर्ती। पन्द्रह रुपया महीना, घर और खुराक। सारी खबर लेकर आ रहा हूँ।"

बाहर इसी समय एक कोलाहल सुनाई पडा। दूसरे ही क्षण देखें तो धडाधड सदर दरवाजे से लोग भीतर आ रहे हैं। रामचरण रास्ते मे आते आते नन्दीपुर के हाथा हो रह गोसाईंगज के इस अभूतपूव पराभव का सवाद प्रचारित करता आया था। सब लोग आकर चीत्कार करके नाना छन्दा मे बोलने लगे—"यह क्या सवनाश हो गया! नन्दीपुर के हाथा यह अपमान! अपना स्कूल खोलने का अब क्या उपाय किया जाय।"

हीरु दत्त उसी चबूतरे के बरामद मे खडा होकर हाथ हिलाकर कहने लगा—

"भाइयो! तुम लोगा ने क्या सोचा है, तीन पीढिया बाद आज गोसाइगज नन्दीपुर के सामने झुक जायगा? कभी नही। इस शरीर मे प्राण रहते ऐसा नही होगा। हम लोग भी स्कूल खोलेंगे। उन लोगो ने क्या स्कूल खोला है, हम उससे चौगुना अच्छा स्कूल खोलेंगे। तुम लोग शान्त हाकर घर जाओ। आज ही खा पीकर मैं निकलता हूँ। कलकत्ता जाने की रेल खुल गई है, अब कोई चिन्ता की बात नही है। मैं कलकत्ता जाकर उनसे भी अच्छा मास्टर लें आऊँगा। वे लोग १५) देकर मास्टर लाये हैं, हम २५) महीना देंगे। उन लोगो के मास्टर को पढा सके मैं ऐसा मास्टर लेकर आऊँगा। आज से एक सप्ताह के बीच अपने इस चडीमडप मे स्कूल खोलूगा, खोलूगा, खोलूगा—तीन बार कहता हूँ। अब जाओ तुम लोग घर जाओ, जाकर खाना पीना करो।"

"जय गोसाइगज की जय ! जय हीरु दत्तकी जय !" उल्लास के साथ चीत्कार करते हुए तब उस जनता ने प्रस्थान किया।

कलकत्ता से मास्टर नियुक्त करके हीरु दत्त चौथे दिन गाँव म लौट आए।

मास्टरजी का नाम ब्रजगोपाल मित्र है। उमर तीस साल की है, नाटे कद के कृशकाय व्यक्ति हैं। मिष्टभाषी। अग्रेज़ी बोलने, लिखने पढने मे भारी उस्ताद हैं। अग्रेजी के वे इतने अभ्यस्त हो गए हैं कि लोगो के साथ बातचीत करते करते बीच बीच मे अग्रेज़ी के शब्द मिलाकर बोलते हैं—अज्ञ लोगो की सुविधा के लिए उसका बँगला अनुवाद करके भी तुरत समझाते जाते हैं। कहते हैं कि पहले पिताजी के जीवित काल मे एक दिन कलकत्ता मे गगा के किनारे मास्टरजी घूम रहे थे, वहाँ एक साहब के साथ उनकी मुलाकात हुई। साहब ने उनकी अग्रेजी सुनकर लाट साहब से कहा। लाट साहब ने मास्टरजी को बुलाकर डिप्टी कलक्टर का पद देने का प्रस्ताव रखा। लेकिन वे बाप के एक मात्र बेटे थे, दुनिया की चिता नही थी। उस प्रस्ताव का उन्होने आदर के साथ प्रत्याख्यान कर दिया। आज अमाल मे पडकर यह २५) की नौकरी उन्हे स्वीकार करनी पडी है। "पुरुषस्य भाग्य"—मास्टरजी के मुह से इस प्रकार की बाते सुनकर एव उनका अग्रेज़ियाना चाल चलन देखकर गाव के लोग एकदम मोहित हो गए।

हीरु दत्त की प्रतिज्ञा के अनुसार दूसरे ही दिन स्कूल खुल गया। पद्रह सोलह लडके लेकर मास्टरजी ने अध्यापन शुरू कर दिया। कलकत्ता से (दत्त पत्नी के खर्च से) वे काफी सख्या मे स्लेट पेंसिल, और मरे साहब की स्पेलिंग बुक खरीद लाये। छात्रो का उत्साह बढाने के लिए सब उन्हे बिना मूल्य ही दी जाने लगी।

गोसाइगज के लोगो के साथ नन्दीपुर के लोगो की राह घाट पर मुलाकात होने पर, दोनो गाँव के मास्टरो के बारे मे आलोचना

होती। गोसाइगज वाले कहते—"वधमान का मास्टर वह क्या जानता है, और क्या पढाएगा।" नन्दीपुर वाले कहते—"भले ही हमारे मास्टरजी बधमान के हो, उ होने भी तो कलकत्ता मे ही लिखना पढना सीखा है, वे जब पढते थे तब क्या वधमान मे अग्रेजी स्कूल था? कलकत्ते जाकर अग्रेजी पढना पडता था।"

यथास्थान दोना गावो की सावजनिक पूजा का उत्सव शुरू हुआ। दोनो गावो वालो ने परस्पर प्रतिमा-दशन, प्रसाद भक्षण, यात्रा और डफ सगीत सुनने का निम त्रण दिया। इस उपलक्ष से दोनो मास्टरो का आमना सामना हो गया और दोनो का सभास्थल म प्रवेश हुआ, दोनो पहले से परिचित थे।

पूजा के अन्त म गोसाइगज वाले एक बात से वडे उद्विग्न हो उठे। कहते हैं नन्दीपुर के मास्टर ने कहा था—'यह अहमक उनका मास्टर होकर आया है यह तो मुझे अब तक मालूम ही नही था। यह तो महामूख है। बचपन म कलकत्ता मे हम एक ही क्लास मे पढते थे न। हम लोग जब सेकिण्ड बुक पढ रहे थे उसी समय इसने स्कूल छोड दिया। इसके बाद तो इसने अग्रजी पढी नही। वडावजार म एक महाजन के यहा बहीखाता लिखता था और तनखा सात रुपये महीना थी। गत वप भी तो कलकत्ता मे इसके साथ मेरी मुलाकात हुई थी। तब भी तो यह नौकरी करता था।"

गोसाईंगज वालो ने व्रज मास्टर से आकर पूछा—"यह क्या सुन रहे हैं?"

व्रज मास्टर यह प्रश्न सुनकर हो हो करके हँस पडे। बाले इमीको कलजुग कहते हैं। सेकिण्ड बुक पढने के समय मैंने स्कूल छोड दिया था, उसने छोड दिया था? असल बात शायद जानते नहीं हो। मास्टरजी क्लास मे रोज पाठ पूछते, लेकिन वह एक दिन भी ठीक नही बता

पाता था। मास्टरजी ने एक दिन उससे एक कोस्चेन (सवाल) पूछा, वह आसर नही दे सका। मुझसे पूछने ही मैंने जवाब दे दिया। मास्टरजी ने मुझसे कहा—'उसके कान तो मल दो!' मेरे कान मलते ही उसका मुँह गुस्से के मारे लाल हो गया। वह कहने लगा, मैं ब्राह्मण का बेटा हूँ और वह कायथ होकर भी मेरे कान पर हाथ लगाता है। इसी अपमान से उसने स्कूल छोड दिया। मैं इसके बाद पाँच छः साल उसी स्कूल मे पढकर, बिलकुल लायक होने के बाद बाहर निकला।"

इसके बाद गोसाइगज के लोग न दीपुर द्वारा किये गए इस अपवाद का प्रतिवाद करने लगे। अ त म हारान मास्टर ने कहा—"हम स्कूल मे जिस मास्टर के पास पढते थे, वे आज भी जीवित हैं। गोसाइगज से तुमम से दो मातवर व्यक्ति मेरे साथ उनके पास चलो। उनसे पूछ देखो कि किसकी बात सच है और किसकी बात झूठ?"

यह सुनकर ब्रज मास्टर हो हो करके हँस पडे—"अरे! यह कह रहा है? य सब तो झूठी बातें हैं। उन्ही मास्टर जी के पास ले जाकर प्रमाणित कर देगा? वे क्या अब जिन्दा हैं? गत वष से पहले वष वे तो हवन—स्वग चले गए। उनके श्राद्ध मे इनवाइट—निमन्त्रण खाकर आया हूँ। मुझे ठीक याद है। मुझे बहुत चाहते थे। बिलकुल सन इक्वल—पुत्रतुल्य। उनके बेटे आज भी मुझे दादा कहने मे इग्नोरेंट—अज्ञानी हैं।"

दोनो मास्टरो के परस्पर इस तीव्र अपवाद प्रयोग का यह फल हुआ कि दोनो गाव ही अपने अपने मास्टर के असाधारण पाडित्य के बारे मे सदेह करने लगे।

अत मे यह तय हुआ कि किसी आम स्थल पर दोना का विचार हो, कौन किसको परास्त कर सकता है यह देखा जाय।

सूर्यास्त से कुछ पहले ही गोसाइंगज का दल वट-वृक्ष के नीचे पहुँच गया। दरी जाजम सतरजी आदि याहकों ने इसके पहले ही आकर अपने गाँव की सीमा रेखा के पास बिछा रखी थी। दूर से टिड्डी-दल की तरह नन्दीपुरवासी लोग भी आ रहे थे। उनके साथ भी दरी जाजम आदि और ढोल नगाड़े वगैरह थे।

धीरे धीरे नन्दीपुर वाले आकर अपनी सीमा के निकट दरी जाजम बिछाकर बैठ गए। दोनो गाँव के अग्रणी लोग सामने बैठे हैं, बीच में केवल दो-तीन हाथ खाली जमीन है।

अब यह सवाल उठा कि कौन मास्टर पहले माने पूछेगा। दोनो गाँव वालो ने ही पहले पूछने का दावा किया। कोई पक्ष भी अपना दावा नही छोडना चाहता था। अत म वृद्ध लोगो ने मीमासा कर दी, हीरु दत्त एक छडी घुमाकर फेंक दें, छडी का ऊपरी सिरा जिस गाव की तरफ पडे उसी गाँव के मास्टर का पहले पूछने का अधिकार हो।

'मेरी छडी लो—मेरी छडी लो"—यह कहते हुए दोनो गाँव के अनेक लोग भागे। हाथ के पास जो छडी मिली उसीको लकर हीरु दत्त ने जोर के साथ घुमाकर ऊपर फेंक दी।

अत मे छडी आकर धरती पर पडी। सभी ने देखा कि उसका सिर नन्दीपुर की तरफ है।

नन्दीपुर यह देखकर उल्लास से चीत्कार कर उठा, गोसाइगज का मुह चूना-सा सफेद हो गया। सभी विचार फल के लिए आग्रह के साथ प्रतीक्षा करने लगें।

नन्दीपुर के हारान मास्टर तब छाती फुलाकर सामने आकर खडे हुए। व्रज मास्टर भी उठकर खडे हुए, उनकी छाती धक धक करने लगी। लकिन प्राणपण से चेष्टा करके मुँह से इस भाव को उन्होने प्रकट नही होने दिया।

हारान मास्टर ने तब कहा—"बताओ तो इसके क्या मानें हैं— Horns of a Dilemma"

सौभाग्य से ब्रज मास्टर को इस कूट प्रश्न का अर्थ मालूम था। उन्होंने छाती फुलाकर हँसते हँसते कहा—"इसका मतलब—उभय संकट—क्यों ठीक है कि नहीं ?"

"बता दिया, बता दिया—हमारे मास्टर ने बता दिया—" यह कहकर गोसाईंगंज के लोगों ने तुमुल कोलाहल आरम्भ कर दिया। दलपतियों ने बड़ी मुश्किल से उन्हें चुप किया। अब उन मास्टर के प्रश्न पूछने की बारी आई।

ब्रज मास्टर ने खड़े होकर कहा—"सुनो हारान बाबू मैं तुमसे कोई कठिन सवाल करना नहीं चाहता, बल्कि खूब सरल सा ही पूछूँगा। इस अंचल में मेरी समझ से तुम और मैं ये दो ही व्यक्ति अंग्रेजी जानने वाले हैं। एक कठिन शब्द का अर्थ पूछकर तुम्हें हटा दूँ यह मुझे ठीक नहीं जँचता। इससे शायद गोसाईंगंज वाले नाराज हों—लेकिन मैं खुद एक अंग्रेजीदाँ होकर ग्राम सभा में एक अंग्रेजीदाँ का अपमान भी नहीं कर सकता। अच्छा एक खूब सरल शब्द का अर्थ पूछता हूँ—खूब जोर से जवाब देना ताकि दोनों गाँव के सब लोग सुन सकें। अच्छा इसके माने क्या हैं बताओ तो देखूँ—तुम जरूर जानते हो—अच्छा बताओ—

I don't know

हारान मास्टर ने उच्च स्वर से कहा—"मैं नहीं जानता।

यह सुनते ही नदीपुर के सब लोगों का मुँह एकदम राख सा हो गया। उसी समय गोसाईंगंज के दल ने एक साथ खड़े होकर बड़े जोर से नृत्य और चीत्कार करना शुरू कर दिया—"हो हो, नहीं जानता—नन्दीपुर नहीं जानता—हार गया दुत्त दुत्त।"

हारान मास्टर ने विपन्न होकर सबको कुछ कहना चाहा, लेकिन

ठीक उसी समय गोसाइगञ्ज में ढोल नगाड़े रामसिगा वगैरह एक साथ गरज उठे। उनकी बात किसी के कानो तक पहुँच सके इसकी संभावना भी नहीं रही।

गोसाइगञ्ज के निवासियो मे से कुछ बलशाली लोग आनन्द से नृत्य करते आगे आये, उनमें से एक ने ब्रज मास्टर को कधा पर उठा लिया और गाँव की तरफ ले चला। सब लोग उसे घेरकर नृत्य करते करते बाजे बजाते हुए गाँव मे लौट आए।

दूसरे दिन सुना गया कि हारान मास्टर नदीपुर छोडकर चला गया है। वहा का स्कूल ब द हो गया। गोसाइगञ्ज म ब्रज मास्टर अप्रतिहत प्रभाव के साथ मास्टरी करने लगा एव गाव के सब लोगो के बालका के समान खीर मलाई खाने लगा।

मादली

प्रथम परिच्छेद

सतान प्रतिचालक भट्टाचाय

दुर्गापुर गाव म पहले हजार से ज्यादा जुलाहे रहते थे। गाव के बीच मे एक चौकोर स्थान पर सप्ताह मे दो बार हाट लगती थी। उस हाट मे देशी धोती, साडी, ओढनी वगैरह बिक्री होती थी। दूर दूरातर से पैकार आकर सारा कपडा खरीदकर ले जाते थे। दुर्गापुर का कपडा खूब बारीक और चिकना हो सो बात नही है—पोलाकी कपडा यहा बहुत कम तयार होता था। फिर भी यहा का कपडा ज्यादा दिन टिकता है ऐसी प्रसिद्धि थी। रोजमर्रा पहनने की धोती, साडी, दुर्गापुर की होने पर ही ज्यादा पसन्द की जाती थी। उस जमाने मे दुर्गापुर के जुलाहे समृद्ध और सपन्न थे। वे लोग दोल दुर्गोत्सव करते थे। अनेको के ईंट के बने पक्के मकान थे, किसी किसी के पास जमीन जायदाद भी हो गई थी। उन दिनो वे निर्बोध मूख नही समझे जाते थे। दो कलम लिखने पढने वाले जुलाहे अनक थे। लेकिन काल की क्या विचित्र लीला है। ये सब बाते अब स्वप्न के समान हो गई हैं—कहानी मात्र रह गई हैं। देश म विदेशी कपडे के भारी प्रचार के साथ ही साथ उनका व्यवसाय मिट्टी हो गया है। धीरे धीरे वे भूखो मरने लगे। आज भी दुर्गापुर मे जुलाहे हैं—पर सख्या म बहुत कम। सब अब जाति व्यवसाय नही करते, जो लोग करते हैं वे जैसे तैसे गुजरान करते हैं।

आज दुगापुर की हाट मे रायचरण बसाक धोती बेचने आया है। जेठ का महीना है—सूयदेव दिन भर पृथ्वी पर आग बरसान के बाद

अब शान्त होने का उपक्रम कर रहे हैं। एक बड के पेड की छाया मे घास पर रायचरण बैठा है। उसके सामने एक गमछा बिछा है—उसी गमछे पर सिर्फ दो जोडा नील लगाई हुई कारी काली पाड की धोती सजी हुई है। इतना कम माल लेकर इससे पहले रायचरण हाट में कभी नही आया। लेकिन आज उसके यहाँ बडी गरीबी है। घर म जो कुछ था वह सब जोड जाडकर उसने कल जमीदार का लगान दिया है।

रायचरण की उमर चालीस से ऊपर हो गई है। क्षीण देह है। सिर पर बडे बडे बाल हैं, दोनो आँखो के नीचे की दोनो हड्डियाँ अत्यन्त ऊँची उठ आई हैं—दोनो गाल गुफा से हो गए हैं। उसका मुह जो आज इतना शुष्क दिखाई दे रहा है, इसका एकमात्र कारण धूप ही नही है। आज बेचारे ने खाना नही खाया है। घर मे चावल नही थे। आगन के पेड से दो पके नारियल तोडकर उन्ह ही खाकर वह हाट म आया है। कपडा बेचकर वह चावल खरीदकर ले जायगा तब रसोई चढेगी। घर मे उसकी स्त्री और दो बालक हैं। रायचरण बडे कष्ट से गुजारा करता है।

दस कोस के घेरे म दुर्गापुर की हाट ही प्रधान है। बहुत से गावो के लोग हाट करने आये हैं। लोगो की भीड का पार नही है। सभी विक्रेताओ के पास गाहको की भीड है—केवल रायचरण टूटे गले से चिल्ला रहा है—'बाबू जी, धोती लोगे? बहुत बढिया धुली धोती है। लगे हाथ मिल रही है।" लेकिन उसकी इस पुकार पर कोई ध्यान नही दे रहा है। अन्त मे एक बूढा आया। कपडा देखा, भाव पूछा। रायचरण ने बताया—"अढाई रुपये जोडा होगा बाबू जी!" भाव सुनकर बूढे ने अत्यन्त उपेक्षा से धोती पटक दी और हीडता हुआ वहाँ स चल दिया। रायचरण ने कितना बुलाया—"बाबू जी बाबू

जी—आप क्या देंगे ?—आप क्या कहते हैं बाबू जी ?" लेकिन बूढे ने मुडकर भी नही देखा।

रायचरण उदास मुँह बैठा रहा। घर लौटने के लिए उसके प्राण छटपट करने लगे। उसकी तीन साल की लडकी पूँटूमणि और पाच साल के लडके हरिदास ने सुबह एक पैसे की मूडी लेकर उसीको आपस म बाटकर खाया था। अब भात के लिए वे कितने रो रह होगे। अपनी स्त्री के लिए भी वह दो नारियल रख आया था वे दोनो उस हतभागिनी ने खाय हैं कि नही ? ये ही बात सोचते-सोचते रायचरण की कोटरगत आखे छलछला आई।

पर हमेशा से उसकी ऐसी हालत नही है। रायचरण के पिता कृष्णदास बसाक एक सपन्न गृहस्थ थे। उनके पक्का मकान था, सौ बीघा धान की खेती की जमीन थी। घर मे अनवरत दस करघे चलते थे—वेतनभोगी नौकर उन करघो को चलाते थे। कृष्णदास के जीवन काल मे ही म चेस्टर की कृपा से अधिकाश करघे बन्द हो गए थे। कि तु फिर भी घर मे कभी रोटी की कमी नही हुई। यहा तक कि वशानुक्रम से जो पूजा पावरण होता आ रहा था, वह भी होता था। रायचरण के बालिग होन के पहले ही उसके पिता की मृत्यु हो गई। इस बात को आज पच्चीस वप हो गए हैं। अब उसका वह पक्का मकान नही है—मकान के अभाव म वह ईंटो का ढेर हुआ पडा है। उसीके पास रायचरण ने एक मिटटी की कुटिया बना ली है और उस सौ बीघा जमान मे से सिफ तीन-चार बीघा बाकी बचा है—बाकी सब भट्टाचाय महाशय ने नीलाम मे खरीद लिया है। बाग, तालाब वगैरह सब कुछ इस प्रकार भट्टाचाय के हाथा मे चला गया है। एक दिन मे या एक बार मे नही। धीरे धीरे थोडा थाडा करके। विपत्ति के समय भटटाचाय महाशय ही रायचरण के एकमात्र ब धु हैं, हाथ फैलाते ही कज दे देते थे। सूद कुछ ऊँचे दर से ही लिखा लते थे।

रायचरण जब इसके बारे मे शिकायत करता तो वे कहते—मुझे भी तो बच्चा का पट पालना है। इससे कम पर दूँ तो मेरी गृ कैसे चलेगी। लेकिन रुपया कर्ज लेने पर दो तीन साल के बाद हे रुपया की उनके नाम इकतर्फा डिग्री कैसे हो जाती थी यह बात चरण जरा भी नही समझ पाता था। पूछने पर भट्टाचाय मह कहते—"अग्रेजो का कानून-कायदा बडा सख्त है—क्या से क्या जाता है यह समझने का कोई उपाय नही है। हमने आगम निगम पुराण सभी तो पढा है—फिर भी हमारा दिमाग चक्कर खा जा है। तुम तो जुलाहे के बेटे हो, जन्म के मूरख।"

धूप धीरे-धीरे कम हो आई। हाट उठने लगी। जिन्ह दूर जाना वे और नही ठहर सकते। हलवाई की दूकान से दो एक पैसे का कु खाकर उन लोगो ने अपने अपने गाँव की ओर चलना शुरू किया हाट के चारो तरफ अनेक स्थायी दूकानें हैं। मणिहारी की दूकान, मोदी की दूकान, कपडे की दूकान। वह जो सबसे बडी कपडे की दूकान दिखाई दे रही है वह भट्टाचाय महाशय की है। वहाँ भी अब वैसा भीड नही है। केवल दो चार किसान लटट्ू मार्का और बल मार्का विलायती धोती का पोत और मूल्य का तारतम्य देखकर कौन सी लें कौन सी न लें यह किसी भी तरह ठीक नही कर पा रहे थे।

अन्त म धोती बेचने के बारे म हताश होकर रायचरण उठ खडा हुआ। उसने तय किया कि भट्टाचाय महाशय की दूकान पर दोनो जोडा धोतियाँ दे देगा। कह सुनकर आज नगद दाम माँग लेगा। भट्टाचाय जी का दूकान पर माल देना रायचरण जरा भी पसन्द नहीं करता था। बाजार मे खरीदारो से जो दाम मिलता है, वह भट्टाचाय जी नहीं देते। और वह भी नकद नही। बिकने पर दाम देते हैं। एक पुराना हिसाब चला आ रहा है। मूल्य के बारे में जितने रुपये लेते हैं रायचरण मन ही मन उसका हिसाब कर रखता था लेकिन खाता

तब रायचरण दोनो हाथ जोडकर बोला—"दादा भैया, आप ब्राह्मण हैं—देवतुल्य हैं। आपके सामने झूठ नही बोल रहा हूँ। आज मुझे बडी जरूरत है—इसीलिए नकद रुपये माँग रहा हूँ।"

"क्या जरूरत है रे ?"

'आज मेरे घर म चावल नहीं है, इसलिए दिन भर म किसी ने भोजन नही किया। बाजार से लेकर जाऊँगा तब हाडी चढेगी।"

भट्टाचार्यजी बोले—"यह तो ठीक है, लेकिन मरी तरफ भी तो तुम्ह देखना चाहिए। नकद चार रुपये मैं दूँगा—और पूजा तक यह माल अगर पडा रहा तो इतने महीना का चार रुपये के ब्याज का हिसाब लगाकर तो देखो।"

रायचरण बोला—"ब्याज की बात रहन दा राजा भैया।"

'ब्याज रहन दूँ तो कैसे चले बापू? मुझे भी तो बच्चा का पेट पालना है। अच्छा, तुम जब इतना कह रह हा तो हिसाब पेटे दो रुपय ले जाओ।"—यह कहकर भट्टाचाय महाशय ने बाक्स मे से दो रुपये निकालकर रायचरण के हाथ मे दिये। कुछ फासले पर उनका बडा बेटा मृत्युञ्जय बैठा दूकान का काम कर रहा था। उसकी तरफ घूमकर बोले—"ओ, मृत्युञ्जय लिख तो, रायचरण बसाक जुलाहा, जमा दो जाडा अस्सी नब्बे नम्बर धोती के बाबत चार रुपय, खरच दो रुपये हस्ते खुद।'—कहकर वे गम्भीरतापूवक हुक्का पीने लगे। रायचरण ने प्रणाम करके विदा ली।

मृत्युञ्जय न जमा खच के खाते मे रायचरण क नाम सत्तर अस्सी नम्बर का दो जाडा धोती के बाबत साढे तीन रुपये जमा कर लिये। जुलाहो का हिसाब लिखते समय, कथित आदेश स इस प्रकार छूट दकर लिखना ही इस दूकान का नियम था। मृत्युञ्जय पिता का उप-युक्त पुत्र है।

द्वितीय परिच्छेद

रायचरण एक रुपया भुनाकर प्रयोजनीय द्रव्यादि खरीदकर चट-पट घर आया। उस समय साझ हो रही थी। भीतर पैर रखते ही उसकी स्त्री ने आकर पूछा—"कहो, धोतियाँ बिक गईं।"

क्षीण स्वर मे रायचरण बोला—"हाट मे कोई खरीदार नही मिला। भट्टाचार्यजी की दूकान पर दे आया हूँ।"

रायचरण के हाथ की पोटली की तरफ देखकर जुलाहन बोली—"कुछ दिया या नही ?"

'दो रुपये दिये हैं। एक रुपया भुनाकर आठ आने का सौदा खरीद लाया हूँ।'

"कुल दो रुपये।"

"यही नही द रह थे। कितनी आरजू मिन्नत करके लाया हूँ।"

जुलाहन—"क्यो तो भट्टाचार्यजी की दूकान पर गये। वह ठग बदमाश है—उसे क्या अब तक पहचान नही पाए ?"

रायचरण घबराकर बोला—"छि छि, ऐसी बात मुह पर मत लाना पुट्टू की मा। ब्राह्मण की क्या निंदा करते हैं ? ब्राह्मण कलयुग के देवता हैं।'

"कलि के देवता के मुँह म आग। जो देवता होता है उसका क्या ऐसा व्यवहार होता है ? देवता क्या गरीबो का सवनाश करत हैं ?"

रायचरण जोर से बोला—'यह बात मत कहना। देख इस जनम मे हम इतना कष्ट पा रहे हैं—ब्राह्मण की निंदा करके और पाप मत बढा। नही तो नरक मे भी स्थान नही मिलेगा।"

जुलाहन जरा नरम होकर बोली—"जब हाट में नही बिके तो दोनो जोडे वापस ले आते। सारा सवस्व इस भट्टाचार्य को खिला दिया तब भी तुम्हारा मन नही भरा!

"वापस ले आता तो आज बच्चो को क्या खिलाता ?"

जुलाहन धीरे धीरे बोली—"उन्हें मैंने खिला दिया है। आज तुम्हारे हाट पर चले जाने पर पुट्टू हरिदास भूख के मारे लोटने लगे और रोने लगे। मुझसे सहा नही गया और अपने गले की मादली बेच कर पाच रुपये ले आई। चावल दाल खरीदकर उन्हे खिला दिया है।"

यह सुनकर रायचरण कांपते कापते वही बैठ गया। बोला—"हैं—? यह क्या किया! वह मादली बेच दी ?"

जुलाहन रुआसी सी होकर बोली—"मैं क्या करती बोलो ? बच्चे का पेट पकडकर रोना अगर तुम देखते! मेरी आंखो के सामने मेरे बेटे बिटिया का भूख के मारे प्राण निकल जाय—मा होकर मैं क्या यह सह सकती हूँ ? तुम्हे लौटने मे शाम हो जायगी यह जानती थी। क्या देकर उन्हे चुप करती ? घर मे और क्या था जो बिक्री करती ?" यह कहकर जुलाहन ने आखो पर आंचल डाल लिया।

रायचरण बोला—"वह क्या आज की मादली है। कितनी पीढियो से यह मादली हमारे घर मे है। उस मादली का ऐसा गुण है कि बच्चो को बीमारी सीमारी होने पर मादली धोकर वह पानी पिला देने पर वह बीमारी अच्छी हो जाती है। वही मादली तूने बेच दी। मादली के प्रभाव से हमारे ऊपर कभी कोई विपत्ति नही आई। मादली चली गई अब हमारा सर्वनाश हो जायगा—हमारे वंश मे आग देने वाला कोई नही रहेगा।"

जुलाहन बोली—"यह बात क्या मैं नहीं जानती। मैं सब जानती हूँ। मेरे फूटे भाग हैं। लेकिन देखो, एक बात कहना भूल गई। सुनार ने मादली तोडकर देखी तो उसके भीतर मुडा हुआ एक भोजपत्तर था। मुझसे बोला—"जुलाहन बहू, इसमे शायद कोई मंतर तंतर लिखा है—इसे ले जाओ। वह मैं ले आई हूँ। जो गुण है वह तो उसी मंतर

का है—सोने का तो है नही ? एक ताबे की मादली मे उसे रख लेने से क्या काम नही चलेगा ?"

रायचरण बहुत कुछ स्वस्थ होकर बोला—"यह तो नही जानता। किसी अच्छे आदमी से पूछा जाय। जो हो गया उसका तो कोई उपाय नहीं है। हरिदास पुट्टु कहाँ हैं ?"

वे खाकर सो गए हैं। तुम्हारे लिए भात रखा है। हाथ पैर धोकर खाने बैठो !"

"तूने खा लिया ?"

जुलाहन ईषत हँसकर बोली—"तुम उपासे हो तो क्या मैं खा सकती हू ? तुम खाओ—मैं बाद मे खा लूगी।"

हाथ पैर धोकर रायचरण खाने बैठा। खाने के बाद चबूतरे पर एक फटी चटाई बिछाकर बैठा और हुक्का पीने लगा। आले मे एक केरोसीन तेल का दीया अजस्र घूमोद्‌गार करता हुआ थोडा बहुत प्रकाश फैला रहा था। रात एक पहर बीत गई। सोने के लिए जाने से पूव रायचरण उठकर खडा हुआ ही था कि इसी समय आगन म एक अपरिचित व्यक्ति ने आकर आवाज दी—"व दे मातरम्।"

रायचरण इस आवाज से चौंक पडा। आगन की तरफ आँख उठाकर देखा कि आगतुक के शरीर पर स यासी के गेरुए कपडे हैं। सिर पर पगडी है। कधे पर झोली झूल रही है। शकित स्वर मे पूछा—'आप कौन हैं ?"

जवाब आया—' मैं स यासी हूँ।"

रायचरण तब हडबडाकर आगन मे आया और आगतुक को प्रणाम करके बोला—"आओ आओ। ऊपर आकर बैठो !"

कहे मुताविक स यासी चबूतरे पर आ बैठा। दीये के प्रकाश मे रायचरण ने देखा कि स यासी की उम्र बीस वष से ज्यादा नही है। गौर वण देह से लावण्य मानो झर रहा है। ऐसा कमनीय कान्तिमान

सन्यासी रायचरण ने पहले कभी नही देखा था। उसके मन म अत्यन्त भक्ति का उदय हुआ। चटपट एक पीढा बिछाकर बोला—"महाराज बैठिये!"

सन्यासी बठ गया। रायचरण ने हाथ जोडकर कहा—"किस इरादे से महाराज का आगमन हुआ?"

युवक ने अत्य त मीठे स्वर म कहा—"आज रात भर के लिए मुझे ठहरने की जगह दे सकोगे?"

रायचरण ने आग्रह के साथ कहा—"जब दया करके पापी के घर मे चरणो की धूल दी है, तो स्थान अवश्य दूँगा। पुट्ट की माँ—ओ पुट्ट की माँ—महाराज के पैर धोने के लिए एक लोटा जल ले आ तो।"

पुट्ट की मा भोजनोपरात दरवाजे के पास अँधेरे मे खडी सब-कुछ देख रही थी। यह सुनकर चटपट गई और एक लोटा पानी ले आई। रायचरण स यासी के पैर धोने लगे। जुलाहन बोली—"महाराज प्रसाद पाया कि नही?"

"आहार की बात पूछ रह हो?"

"हाँ।"

स यासी ने हँसकर कहा—"यथारीति आहार हुआ हा यह तो नही कह सकता। रास्ते मे कुछ फल मूल खाये य। हमारे सम्प्रदाय का यही कए नियम है कि क्षुधा तृषा सहन करने का अभ्यास करना होगा। इसी लिए बहुत बार मैं भोजन प्रस्तुत रहने पर भी नही खाता। आज और कुछ नही खाऊगा।"

रायचरण उनके प र पाछकर बोला—'ऐसा भी कही होता है, बाबाजी? गृहस्थ के घर साधु स यासी आकर उपवासी रह तो बडा दोष लगता है। गृहस्थ का अकल्याण होता है। बाबा हम पर दया करो!'

पूट्ट की माँ बोली—"हम लोग बड़े गरीब हैं। आपकी सेवा कर सकें, हमारे ऐसे भाग्य कहा। फिर भी घर मे चावल दाल है, आलू है। अगर दया करके प्रसाद पावें तो हम किरतारथ होंगे।"

दरिद्र गृहस्थ का ऐसा आग्रह देखकर युवक सन्यासी बोला—"अच्छा ठीक है—सब कुछ तैयारी कर दो—मैं रांधकर खा लूगा।"

यह सुनकर रायचरण ने स्त्री से कहा—"तू जा, तालाब से एक कलसी जल ले आ। मैं बुनाई वाले मकान के चबूतरे पर तब तक एक चूल्हा तैयार कर देता हूँ। यह कहकर रायचरण ने एक खुरपा खोज निकाला।

तृतीय परिच्छेद

बाबाजी की दया हुई

है, इस प्रदेश की स्त्रियाँ अब चरखे से सूत कातती है या नही, उसी सूत का अगर कपडा बुना जाय तो विलायती कपडे से सस्ते भाव पर बेचा जा सकता है कि नही, ये ही सब सवाल पूछे। जातीय व्यवसाय के प्रसग से रायचरण का मुह खुल गया। गाव के जुलाहो की पहले की सपनता एव आधुनिक दुरवस्था की बात उसने अपने प्राणो की भाषा मे व्यक्त की। बोला—"उन्हींके पुरखे गाव के प्रधान जुलाहे के नाम से प्रख्यात थे। घर मे दोल दुर्गोत्सव होता था। लेकिन आज वह एक मुट्ठी धान के लिए मोहताज है। पहले जमाने मे उसका जो ईंट का पक्का मकान था उसीका भग्न स्तूप सन्यासी को दीये के प्रकाश म दिखा दिया। रायचरण की आखो से झर झर आसू बहने लगे।

उसे रोता देखकर युवक बोला—"रोओ मत, रायचरण, रोओ मत। तुम्हारे दु ख की रात समाप्त हो गई है। स्वदेशी चीजो के प्रति क्रमश लोगो की भक्ति बढती जा रही है। जल्दी ही ऐसा दिन आयगा जब तुम पूरा कपडा बुन भी नही सकोगे। देश की कारीगरी पर, खासकर हाथकरघे के कपडे पर भगवान् की शुभ दृष्टि पड रही है। जुलाहा का रोना सुनकर भगवान् का आसन डोल उठा है। रोओ मत—चुप हो जाओ।"

रायचरण यह सुनकर अत्यत अभिभूत हो उठा। चुपचाप अपनी स्त्री के कान मे कहने लगा—'देखो, ये एक ईश्वर साक्षात्कार किये हुए हैं। ये जो कह रहे हैं, मेरा मन उस पर मुग्ध है। ये एक बडे पहुँचे हुए साधु हैं।"

जुलाहन धीरे से बोली—"मुझे भी यही लगता है। देख नही रहे हो कैसा चेहरा है, मानो राजपुत्र हो। ये कोई देवता होगे। मनुष्य का रूप धर कर आये हैं। मादली की बात इनसे पूछो ना!"

रायचरण बोला—"तू पूछ।"

लेकिन जुलाहन सहसा कुछ कह नही सकी। दोनो करीब पाच मिनट तक चुप रहे।

अत मे सन्यासी ने जब दो एक बाते कही तब जुलाहन बोली—"बाबा, आपसे मुझे कुछ कहना है।"

युवक ने स्निग्ध स्वर मे कहा—"क्या है बोलो!"

' मुझसे एक बडा अपराध हो गया है।"

"क्या हो गया है?"

जुलाहन ने तब मादली का इतिहास आद्योपात कह सुनाया। क्यो आज मादली बेचनी पडी है, यह बात उसने साफ साफ कह दी। रायचरण ने जिस अमगल की आशका की थी वह भी जताई। सब सुनकर सन्यासी बोला—"वह भोजपत्र लाओ तो, क्या मत्र लिखा है देखू।"

जुलाहन ने भोजपत्र लाकर दिया। युवक ने उसे सावधानी से खोलकर प्रकाश के सामने देखा, लेकिन उसमे कुछ लिखा हुआ नही दिखाई दिया। इधर-उधर एक दो आलता के चिह्न थे शायद किसी समय अक्षर रहे हो—लेकिन इस समय अदृश्य हैं। उसे उसने फिर से मोडकर रख दिया और बोला—"अच्छा इसे बाद मे अच्छी तरह देखूगा।"

जुलाहन—"हमने सोचा था कि भट्टाचार्यजी के पास जाकर इसका कोई विधान ले, लेकिन हमारे अहोभाग्य कि आप आ गए। बाबाजी आप ही इसका कोई विधान बता दो। हम पर कोई विपत्ति न आय ऐसा कुछ कर दो!"

सन्यासी चुपचाप अपनी रसोई का काम करता रहा। मादली बेचने के कारण इतिहास ने उसके हृदय को अभिभूत कर दिया।

थोडी देर बाद सन्यासी ने सहसा कहा—"अच्छा देखो—मगर तुम्हे बहुत-सा रुपया मिले तो क्या करोगे?'

जुलाहन ने पूछा—"कितने रुपये बाबा?"

"यही हजार या दो हजार या पाँच हजार।"

जुलाहन ने आग्रहपूर्वक पूछा—"बाबाजी, क्या आप सोना बनाना जानते हैं ?"

रायचरण ने अपनी स्त्री का हाथ दबाकर धीरे से कहा—"चुप रह। शायद बाबा की कृपा हो गई है।" बाद में प्रकट रूप से बोला—"अगर रुपया हो तो बाबाजी तीरथ धरम करें।"

"सिर्फ तीरथ धरम ? इससे क्या रुपये का सदुपयोग होता है ?"

रायचरण बोला—"मैं मूरख हूँ—मैं और क्या जानता हूँ बाबाजी ! आप उपदेश दीजिये।"

"मैं जो उपदेश दूँ वह अगर तुम कर सको तो शायद भगवान् तुम्हें पाँच हजार रुपये दे सकें। हाँ उनकी दया हो ता।"

रायचरण ने आग्रह के साथ कहा—"हाँ, बाबाजी आप जो कहेंगे वही करूँगा।"

रसोई का काम समाप्त हुआ। हँडिया उतारकर, हाथ धोकर संयासी बाबा जुलाहे और जुलाहन के सामने आकर बैठे। गंभीरता पूर्वक बोले—"अगर भगवान तुम्हें पाँच हजार रुपया दें।"

जुलाहन ने रोते रोते पूछा—"कैसे देंगे बाबाजी ?"

रायचरण ने धमकाकर कहा—"चुप रह भारजा।"

युवक ने हँसकर कहा—भगवान् क्या अपने हाथ से किसी को कुछ देते हैं ? किसी मनुष्य के हाथ भेजते हैं। रायचरण, अगर भगवान् तुम्हें पाँच हजार रुपये दें तो जान लो कि उसमें केवल एक हजार रुपये तुम्हें खाने पहनने को दिये हैं। वह तुम अपने ऊपर खर्च करना। चार हजार रुपये से तुम इस गाँव में एक हाथकरघे का कारखाना स्थापित करना। जितना हो सके करघा चलाकर इस गाँव के जुलाहों को बुलाकर उन्हें बदस्तूर महीना देकर प्रतिदिन कपड़ा बुनवाना। वह कपड़ा बिना मुनाफे के हाट में बेचना। क्या यह कर सकोगे ?"

रायचरण अत्यंत उत्साहित होकर बोला—"अच्छा बाबाजी, जरूर कर सकूगा, क्यो नही कर सकूगा ? सात पीढियो से हमारे यहाँ यही काम होता आया है । खूब कर सकूगा ।"

"मुनाफा नही कर सकोगे । कपडा तयार करने का जो खच हो उसी हिसाब से बेचना होगा ।'

"मैं—मे अगर मुनाफा लू तो वह मेरे लिए गोरक्त या ब्रह्मरक्त हो ।"

"ठीक । एक हजार रुपये—पूरे तुम्हारे । जैसे चाहा खच कर सकते हो ।"

"अच्छा ।"

"अच्छा तो तुम्हे पाच हजार रुपये मिलेंगे । कैसे मिलेंगे यह बताता हूँ । भगवान् तुम्हे यह रुपया भट्टाचायजी के हाथ से भेजेंगे ।"

जुलाहन बोली—"भट्टाचायजी देंगे—तब तो शायद वे ही गप कर जायें ।"

स यासी न हँसकर कहा—"भगवान् का रुपया हजम करना सहज नही है । किस प्रकार भट्टाचायजी रुपया देंगे, यह भी बताय देता हूँ । सहसा तुम्हारी यह जमीन लेने का वे बडा आग्रह करेंगे । भगवान् ही उन्हे यह मति दगे । भट्टाचायजी पहले तो बहुत कम देकर तुम्हारी जमीन लेना चाहगे । लेकिन तुम मत देना । धीरे धीरे वे दाम बढाते रहेंगे । तब भी तुम मत देना । अत मे जब वे पाँच हजार रुपये तक देने लगें, तब तुम देना, नकद रुपये लेकर तब देना । बाकी मत रखना ।"

"जो आज्ञा ।"

"एक बात के बारे मे सावधान कर देता हूँ । मेरे साथ तुम्हारी ये सब बातें हुई हैं यह किसी से मत कहना । अगर किसी न भी ""

बात जान ली तो सब बेकार हो जायगा। रुपया-पैसा कुछ नहीं मिलेगा। मैं यहाँ आया था यह भी जाहिर मत करना।"

रायचरण बोला—"सुन रही हो पूटू की माँ—सावधान। तुम्हारे ही पेट मे बात नही ठहरती।"

जुलाहन ने हाथ हिलाकर कहा—'मैं ऐसी औरत नही हूँ। जीभ काट डालने पर भी किसी से कुछ नही कहूँगी।"

"अच्छा जाओ, अब तुम लोग सो जाओ! मुझे जरा पूजा-पाठ करना है। इसके बाद भोग लगाकर मैं शयन करूँगा। तुम मुझे सवेरे जल्दी उठा देना, दो पहर रात रहते रहते मैं गाँव छोड़कर चला जाऊंगा।"

रायचरण हाथ जोड़कर बोला—"बाबाजी पहले भोग लगा लीजिये तब हम लोग सोने जायँगे। कुछ जरूरत हो तो ?"

"कुछ जरूरत नही है। तुम जाओ!"

'बुनाई वाले कमरे मे बाबाजी के लिए बिछौना किया हुआ है"—यह कहकर जुलाहा और जुलाहन ने प्रणाम करके विदा ली। संन्यासी ने दीया पास लाकर झोली मे से गीता निकाली और पाठ करना शुरू कर दिया।

चतुर्थ परिच्छेद

भट्टाचार्य का सपना देखना

भोर होते होते जुलाहे और जुलाहन ने आकर संन्यासी को जगा दिया।

संन्यासी चलने के लिए तैयार होकर बोला—"तुम्हारी मादली मे जो कागज था, वह बड़ी अच्छी चीज है। यह कागज कुछ दिन चढे से जुलाहन तुम भट्टाचार्यजी को जाकर दिखाना। मादली तोड़ने से कागज अशुद्ध हो गया है ना—वे शुद्ध करके एक ताँबे की या किसी

और धातु की मादली म रख देंगे। गले मे धारण करना कोई विपद्-आपद् नही आयगी" यह कहकर भोजपत्र जुलाहन को दे दिया। जुलाहा अपने लडके और लडकी को लाकर बोला—"बाबाजी, इ हे आशीर्वाद दो—माथे पर चरणो की धूल दीजिये।" उ ह आशीर्वाद देकर स यासी ने विदा ली।

कुछ दिन चढ आने पर जुलाहन भट्टाचायजी के घर गई। वे उस समय सध्या व दनादि समाप्त करके कधे पर चादर और हाथ मे छाता लेकर दूकान जाने का उपक्रम कर रहे थे।

जुलाहन ने उ ह प्रणाम करके कहा—"दादा भैया हम पर बडी विपदा आ पडी है।"

भट्टाचायजी ने सोचा कि जरूर रुपया उधार मागने आई है। मुँह बनाकर बोले—"फिर क्या हो गया ?'

जुलाहन ने तव मादली का आमूल इतिहास कहकर रायचरण की आशका की बात कही, और बोली—"पर दादा भैया यह तो सोने का गुण नही है, म तर का ही तो गुण है ? सुनार ने म तर लिखा हुआ वह भोजपत्र मुझे लौटा दिया है। इसीलिए आपसे विधान लेने आई हूँ कि भोजपत्र को किसी दूसरी मादली मे रख दें तो कैसा हो ?"

भट्टाचायजी ने पूछा—"रामकवच है या इष्टकवच ?"

'यह मैं क्या जानू दादा भैया। यह देखो ना।"—कहकर जुलाहन ने उनके हाथ म भोजपत्र रख दिया।

भट्टाचायजी ने पाकेट मे से चश्मा निकालकर आँखो पर चढाया और भोजपत्र पढने लगे। सहसा उनके चेहरे का भाव आश्चयजनक रूप से परिवर्तित हो गया। हाथ पैर काँपने लगे। वे पास के तखत पर बैठ गए।

जुलाहन ने शंकित होकर पूछा—"दादा भैया ऐसा क्यों कर रहे हैं ?"

भट्टाचायजी ने दोनों हाथों से सिर दबाकर कहा—"सहसा सिर घूमने लगा ।"

"किसी को बुलाऊं क्या ?"

"नहीं नहीं, अभी अच्छा हो जाऊँगा । ठीक हो गया है । हाँ—तुम क्या कह रही थी ? मादली कहाँ मिली थी ?"

"हमारे यहाँ बहुत दिनों से है । अपनी सास से सुना था कि सात पीढ़ियों से यह मादली हमारे घर में है । मेरी सास को उसकी सास से मिली थी, उसकी सास को उसकी सास से मिली थी । मेरी सास मरते समय मुझसे कह गई थी—इसे सावधानी से रखना, खोना मत, तुम मरते समय अपनी बहू को देकर, इसी प्रकार सावधान कर देना ।"

भट्टाचाय बोले—"हां, तब तो यह बड़ी पुरानी चीज है । मन्तर भी लिखा हुआ है, बड़ा अच्छा मन्तर है, ऐसा मन्तर आजकल कौन जानता है । और यह भोजपत्र सिर्फ दूसरी मादली में रख देने ही से तो काम नहीं चलेगा । खंडित जो हो गया है—छूआछूई जो हो गई है । इसे पूजा करके शुद्ध करना होगा । इसके लिए पोथी पत्रा देखकर कोई अच्छा दिन देखना जरूरी है । एक काम करो, इसे अभी मेरे पास रहने दो । अच्छा दिन देखकर शुद्ध करके एक तांबे की मादली में रख दूंगा ।

जुलाहन बोली—"अच्छा यही ठीक है ।"

भट्टाचायजी गला साफ करके मुंह अत्यन्त दयाद्र करके कहने लगे— और क्या कहूँ जुलाहन बहू तुम्हारी बुद्धि बड़ी हल्की है । अच्छा घर में अनाज नहीं था तो मेरे घर आकर मांगती तो क्या

तुम्हारे बच्चो के लिए दो थाल चावल नही मिलते ? मादली बेचने क्यो गई ? जुलाह की बुद्धि इसी को कहते हैं।"

जुलाहन बोली—बुद्धि होती तो ऐसी दुदशा क्यो होती दादा भैया।"

'वही तो कह रहा हूँ। अच्छा, अब दिन चढ आया है—दूकान जाऊँ।" यह कहकर भट्टाचायजी चल दिए।

दूसरे दिन सुबह भट्टाचायजी ने रायचरण को बुलाया। बोले—"तुम्हारा मकान तो बिलकुल टूटा फूटा है।"

"क्या करूँ दादा भैया पेटभर खाने को तो मिलता नही, मकान कैसे ठीक कराऊँ? गोबर मिट्टी का ही तो घर है, साल की साल ठीक न कराओ तो टिकता नही।"

"वह जो नीतू बाग नाम का उस मुहल्ले मे एक कैवत का घर था वह दूसरे गाँव मे जाकर बस गया है उसकी जमीन मैंने खरीद ली है। मालूम है न?"

"हा जानता हूँ।"

'ऊँचे चबूतरे का खूब मजबूत पुख्ता दो कमरो का मकान है, रसोईघर है गोशाला है, दो आम के पेड हैं—और भी पेड हैं—मैं कहता हूँ। तुम उसी घर मे जाकर क्यो नही रहते ? मैं तुम्हे या ही दे दूगा अगर तुम अपनी जगह मुझे द दो तो।"

सन्यासी बाबा की भविष्यवाणी तीन रात बीतते न बीतते फलने लगी। यह देखकर रायचरण आपादमस्तक रोमाचित हो उठा। आत्मसवरण करके पूछने लगा—"क्यो दादा भैया, मेरी जगह लेकर आप क्या करेंगे ?'

'मैं उस जगह एक शिवमदिर प्रतिष्ठित करूँगा ऐसा विचारा है। क्या कहते हो, दोगे ? तुम्हारा इसमे कोई नुकसान नही है, बल्कि

लाभ ही है। ऐसा अच्छा मकान, पेड वगैरह तुम्हें या हा मिल रहे हैं।"

रायचरण कुछ देर तक चुप रहकर बोला—"दादा, बाप दादे की जगह है, सात पीढ़ियों से वहीं रह रहे हैं।"

भट्टाचार्यजी मुस्कराकर बोले—"हाँ जुलाही बुद्धि है न। सात पीढ़ियों से रह रहे हो तो क्या हुआ? ऐसा अच्छा मकान मुफ्त मिल रहा है—ऐसे पेड पौधे कोई मुझे दे तो खुशी से ले लू।"

रायचरण कुछ नहीं बोला। सिर झुकाये खडा रहा।

फिर एक बार दिल लुभाने वाली मुस्कुराहट के साथ भट्टाचार्यजी बोले—" तेरे मन का भाव मैं समझ गया। तू सोच रहा है कि मेरी जगह कम-से-कम एक बीघे से तो ऊपर होगी। नीलूबाग की वह जगह दस कट्टा होगी—या नहीं इसमें भी संदेह है, ज्यादा देकर मैं कम क्या लू। यही सोच रहा है न?",

और कोई जवाब ढूंढ न पाकर रायचरण बोला—जी हाँ।"

तब भट्टाचार्यजी हो हो करके हँस कर बोले—"कौन कहता है जुलाहे मे अक्कल नहीं है? अच्छा ले तेरी जगह मे जितनी जमीन ज्यादा है उसके दो एक सौ रुपये और ले ले। क्या अब तो संतोष हुआ?'

रायचरण फिर भी कुछ नहीं बोला।

भट्टाचार्यजी बोले—"जुलाहन से सलाह लिये बिना कुछ कह नहीं सकता क्यों? अच्छा जा सलाह करके शाम को आकर मुझसे कहना। नगद दो सौ और नीलूबाग का मकान मिलेगा, अपने मकान के साथ की सारी जमीन मुझे दे देनी होगी।"

रायचरण ने प्रणाम करके विदा ली।

शाम को भट्टाचार्यजी उत्सुकता से उसकी प्रतीक्षा करते रहे,

लेकिन वह नहीं आया। सूर्यास्त के समय इसीलिए घूमते घूमते वे स्वय ही रायचरण के घर पहुँचे।

"क्यों रे रायचरण, घर में सलाह करके क्या तय किया ?"

रायचरण ने सिर झुकाकर कहा—"जी, सात पीढियो से चले आये मकान को कैसे छोड दें।"

"बस एक यह बात सीख ली है—सात पीढियो का मकान।" कहकर भट्टाचार्यजी आगन मे चारो तरफ घूमने लगे। अन्त मे बोले—"एक शिव मन्दिर की प्रतिष्ठा करने की मुझे इच्छा हुई है, इसीलिए तेरी इतनी खुशामद कर रहा हूँ। नहीं तो यह मकान लेकर मैं क्या करूँगा। अच्छा अगर दो सौ रुपया मे तेरा मन नही भरता तो कुछ और ले ले, पाच सौ रुपये और नीलूबाग का वह मकान।"

रायचरण चुप रहा। भट्टाचार्यजी उसके मुह की तरफ कुछ देर तक देखते रहे। फिर बोले—"क्या कहता है ?"

"जी, मेरा न जाने क्या मन नही हो रहा है। मुझे ऐसा लगता है कि यह पैतृक मकान बेच देने पर ठीक नही रहेगा।"

भट्टाचार्यजी ने व्यग्य के स्वर में कहा—"हूँ—ठीक नहीं रहेगा। इधर तो रात बीते सुबह उठकर क्या खाऊँगा, इसका ठिकाना नही। पाच पाच सौ रुपये देना चाहता हूँ—जितने दिन जीयेगा पाव पर पाव रखे खायगा। तेरे भाग्य मे सुख नहीं है लोग क्या करें।" —यह कहकर भट्टाचार्यजी आगन मे चारो तरफ फिर टहलने लगे। जहाँ रायचरण के पुरखो का पक्का मकान भग्न स्तूप होकर पडा था, वहा खडे होकर भट्टाचार्यजी मानो अपने आप ही से कहने लगे— "ये जो इतनी इटें जडी हैं छोटी छोटी पतली ईंटें ये सब पुराने जमाने की ईंटें हैं, बडी मजबूत होती हैं। ऐसी ईंटें तो आजकल बनती नहीं। आजकल की ईंटें तो हाथ से जमीन पर गिरते ही टूट जाती हैं। उस जमाने की ये इटें अब भी इतनी मजबूत हैं कि कुदाल मारने पर भी नहीं टूटती। इन

इटों के ही दाम पाँच सौ रुपये होंगे। इन इँटों से मन्दिर बनवाया जाय तो वह चिरस्थायी होगा। उच्च स्वर से बोले—"रायचरण मैं दाम ही बढाता जाता हूँ, दाम ही बढाता जाता हूँ—यह देखकर शायद तूने समझ लिया है कि मुझे बडी गरज है ? अच्छा, ले सुन। इन इँटों समेत अगर मुझे देगा तो हजार रुपये दूगा। बस, अब एक पैसा भी ज्यादा नही। इससे ज्यादा मेरे पास नही है। मेरे भी बाल-बच्चे हैं—हजार रुपये देने मे ही मेरी जान निकल जायगी। अगर हजार रुपये मे हो तो बोल, नही तो सिर पर महादेव हैं, मन्दिर प्रतिष्ठा मेरे द्वारा नहीं होगी।" इतना कहकर वे तीक्ष्ण दृष्टि से रायचरण की तरफ देखते रहे।

रायचरण कुछ नही बोला। तब उन्होने उस छोडकर जुलाहन को पकडा बोला—"सुन जुलाहन बहू, रायचरण तो बूढा हो गया है—उसकी तो बुद्धि सठिया गई है। तुम्हारी तो अब भी जवानी की उमर है।

'क्या तुम यह नही जानती कि यह मकान कोई सौ रुपये मे भी नही खरीदेगा—उसके लिए मैं हजार रुपये तक दे रहा हूँ। ऐसी बात नही हैं कि घर बेच डालने पर तुम लोग कहाँ खडे होगे, इसका ठिकाना नही हो। एक मकान भी दे रहा हूँ। नीलूबाग, कैवत का वही मकान देख रही हो ? हजार रुपये देना चाहता हूँ—फिर भी राजी नहीं होता। हो सके तो तुम्ही समझा-बुझाकर कहो। हजार रुपये क्या कम हैं ?—तुम्हारी जो यह चावल की हाँडी है उतने रुपये होंगे बल्कि उससे भी ज्यादा। अच्छा आज तो मैं चलता हूँ। सध्या पूजा करने का समय हो रहा है। उसे अच्छी तरह समझाकर, कल सुबह आना, इसके बाद सदर मे चलकर बदस्तूर इस्टाम कागज लिखकर पक्का कर देना—हजार रुपये लेकर मजे मे पर फैलाकर बैठना अच्छा अब चलता हूँ।'

दूसरे दिन सुबह जुलाहे या जुलाहन मे से कोई भी भट्टाचार्यजी के यहाँ हाजिर नही हुआ। तब उन्होने आदमी भेजकर उन्हे बुलवाया। उनके आने पर बोले—"क्यो, क्या सलाह हुई तुम लोगो की ?"

रायचरण बोला—"सलाह क्या होती दादा भैया, मकान नही बेच सकूगा।"

"क्यो भला!"

"बाप रे, सात पीढियो का मकान क्या बेच सकता हूँ ? मेरे बच्चो का अमगल होगा।"

"ओह! भारी पडित हो गया है रे! अमगल होगा! क्यों, अमगल क्या होगा ? क्या कोई उस मकान म कसाईखाना खोल रहा है ? शिवजी का मदिर बनवाऊँगा, दिन रात धूप धूनी जलेगी, पूजा होगी, घटे मजीरे बजेंगे, तेरी सात पीढियो का उद्धार हो जायगा, यह भी जानता है ?'

रायचरण पहले की तरह चुप रहा।

कुछ देर प्रतीक्षा करने के बाद भट्टाचायजी बोले—"अच्छा, कितना होने पर तू देगा, यही बता। तेरी ही कीमत सुनूँ।"

रायचरण कुछ नही बोला।

भट्टाचार्यजी हसते हँसते बोले—"दो हजार लेगा ?"

रायचरण पूववत् चुप रहा।

भट्टाचार्यजी तब गभीर होकर बोले—"हँसी मजाक नहीं है—सचमुच मैं दो हजार तक दूगा। असल बात तुझे खोलकर कहूँ। बाबा महादेव ने मुझे स्वप्न दिया है—उ हाने कहा है कि रायचरण जुलाहे की जगह बडी पवित्र है—इस जगह मेरा एक मदिर बनाकर तुम मेरा स्थापना करा! इसीलिए तेरी जमीन पर मेरा इतना आग्रह है। नही तो दुनिया मे शिव मदिर बनाने के लिए और जगह नहीं है क्या ? मैं अपने मकान मे भी ता कर सकता हूँ। आज सबेरे सबेरे खाना-पीना

समाप्त कर ले—फिर चल दोनो जने शहर चलें। कल दिन भी अच्छा है। कल रजिस्ट्री हाकिम के सामने एक हाथ मे तेरा कबाला लूगा, और दूसरे हाथ मे दो हजार रुपये दूँगा। क्या कहता है?"

रायचरण बोला—'जी, यह नही हो सकेगा।"

भट्टाचार्यजी एक गहरी साँस लेकर बोले—"शास्त्र मे कहा है कि भाग्य मे आगे चारा नही है—वही बात ठीक है। तेरे भाग्य मे सुख नही है—नही तो तेरी ऐसी बुद्धि क्यो होती? पुराने जमाने मे एक गरीब ब्राह्मण था। खाने को अन्न जुटता नही था, बच्चो को भी भर पेट खाना नही दे सकता था। ब्राह्मण रोज सवेरे भिक्षा माँगने निकलता—सात गाँवो से भिक्षा माँगकर शाम को घर लौटता। एक दिन इसी तरह लौट रहा था। आकाश मार्ग से शिव-पार्वती रथ पर चढे जा रहे थे। दुर्गा बोली—"नाथ इस ब्राह्मण का कष्ट देखकर मुझे बड़ा दु ख होता है। धूप हो चाहे बरसात, रोज इसी तरह सात गाँवो मे भिक्षा माँगता फिरता है, फिर भी भरपेट खाने को नही मिलता। उसे तुम कुछ धन क्या नही देते, जिससे उसका कष्ट कम हो।' महादेव हँसकर बोले—पगली! उसके भाग्य में धन है ही नही—मैं उसे दूगा कहाँ से?' दुर्गा बोली—'तुम भी क्या कहते हो। अगर तुम उसे धन दो तो क्या उसके पास धन नही होगा।' महादेव बोले—अच्छा देखना चाहती है तो देख! वह जिस रास्ते से जा रहा है, उसी रास्ते में मैं एक सोने की ईट रख देता हूँ, उसे मिलती है कि नही, यह देखना। यह कहकर महादेवजी ने थोड़ी दूरी पर एक सोने की ईंट डाल दी। चलते चलते सहसा ब्राह्मण के क्या मन मे आई कि वह मन-ही मन सोचने लगा कि मैं भीख माँगकर इतने साल से रोज इसी रास्ते से लौटता हूँ—इस रास्ते का मुझे ऐसा अभ्यास हो गया है कि मैं आँखें बन्द करके भी ठीक रास्ते से जा सकता हूँ। अच्छा देखूँ जा सकता हूँ कि नही। यह कहकर उसने

आँखें बन्द करके चलना शुरू कर दिया। जहाँ सोने की इंट पड़ी थी वहाँ से भी आँखें बन्द किये ही पार हो गया। तुझे भी यही हो गया है। दो हजार से ज्यादा मैं किसी भी तरह नही दे सकूँगा, चाहे मुझे काट डालो। अच्छा इस समय तो जा, अच्छी तरह सोचकर देखना—जो ठीक हो मुझे शाम को कहना।" जुलाहा और जुलाहिन प्रणाम करके चल दिए।

घर आकर जुलाहिन बोली—"अरे देखो, मैं कहती हूँ कि भट्टाचार्यजी दो हजार तक दे रहे हैं, इसीमे राजी हो जाओ। ज्यादा लोभ करने पर कुछ भी नही मिलेगा।"

रायचरण बोला—"सन्यासी बाबा तो कह गए हैं कि मुझे पाँच हजार मिलेंगे।"

"पाँच हजार रुपये भट्टाचार्य जी दे सकेंगे? जो मिल रहा है वहीं काफी है। हाथ मे आई हुई चीज मत छोडो!"

"ओ पगली! पाँच हजार रुपये भट्टाचार्यजी क्या मुझे दे रहे हैं? जो पाच पैसे नही दे सकता वह पाच हजार रुपये देगा? यह तो भगवान् दे रहे हैं-उसके हाथ से दे रहे हैं। सन्यासी तो कह ही गए हैं।"

जुलाहिन कुछ चिन्तित होकर बोली "सन्यासी महाराज कह गए हैं—लेकिन वे तो सचमुच के देवता नही हैं वे भी तो मनुष्य हैं। उनकी बात ही क्या वेद वाक्य है। अगर अत तक न फले तो?"

रायचरण उत्तेजित होकर बोला—"छि, छि, ऐसी बात मुह पर मत ला पुट्टू की मा। वे साधु पुरुष हैं—उनकी बात झूठी नही होती। उनकी बात मे सदेह करना भी पाप है। मुझे पाँच हजार रुपये ही मिलेंगे।"

वास्तव मे यही हुआ। भट्टाचायजी दूसरे दिन तीन हजार और

उसके अगले दिन चार हजार देने लगे। इस पर भी जब रायचरण राजी नहीं हुआ तब उन्होंने उसे फिर बुलाया—"रायचरण क्या तुझे परलोक का डर नहीं है ?"

"क्या दादा ?"

"मैं तेरी इतनी खुशामद कर रहा हूँ, इस जगह के लिए चार हजार तक दना चाहता हूँ—इस पर भी तू राजी नहीं होता। बाबा महादेव ने मुझे स्वप्न दिया है, तेरी यह जगह उन्हें बहुत प्रिय है, यहाँ मैं उनका मंदिर प्रतिष्ठित कर सका तो बाबा मुझे ऐसा वर देंगे जिससे मेरे वंश में कोई कभी कष्ट नहीं पायगा—सभी राजा की तरह सुख से रहेंगे। इसीलिए यह आकांक्षा है। तू जमीन भर दे देगा तो एक ब्राह्मण वंश का उपकार होगा। और अगर नहीं देगा, मेरा मन दुखी करेगा तो क्या तुझे ब्रह्म शाप नहीं लगेगा ?"

रायचरण कुछ देर चुप रहकर बोला—'चार हजार कह रहे हैं ?"

"नकद चार हजार।"

"और नीलूबाग का वह मकान भी ?"

"वह मकान भी।"

"अच्छा दादा जब इतना दे रहे हैं, तो देता हूँ—लेकिन एक हजार और देना होगा। दादा पाँच हजार और नीलूबाग का मकान।"

यह सुनकर भट्टाचार्य जी रायचरण की पीठ थपथपाकर बोले—"अरे बाप रे! कौन कहता है कि जुलाहे में बुद्धि नहीं है ? अच्छा मंजूर है। पाँच हजार रुपये ही दूंगा और नीलूबाग का मकान। तब आज ही चल, माँ दुर्गा का नाम लेकर चल पड़ें। सदर में चलकर कल ही लिखा-पढ़ी हो जाय।"

"जो आज्ञा।"

दूसरे दिन भट्टाचायजी ने सदर में रायचरण को नकद पाच हजार रुपये दिये और दस्तावेज रजिस्ट्री कराकर ले लिया।

पचम परिच्छेद

गाँव मे लौटकर रायचरण अपनी थोडी बहुत चीजे और करघा नीलूबाग के मकान मे उठा लाया। सन्यासी को दिये गये वचन के अनुसार करघे का कारखाना बनाने के लिये क्या किया जाय इसीके बारे मे सोचने लगा। इस प्रकार एक सप्ताह बीत गया।

एक दिन शाम के बाद चबूतरे पर बैठा रायचरण हुक्का पी रहा था, उसी समय एक भद्रवेशधारी युवक आगन मे आकर बोला—"बदे मातरम!" वह कमीज के ऊपर छीट का कोट पहने था, गले मे मैली रेशमी चादर थी, मोटी धोती पहने था और पैरो मे कानपुरी जूते थे।

रायचरण के हुक्के की गुडगुडाहट बद हो गई। अवाक होकर वह आगन्तुक की तरफ देखता रहा।

युवक बोला—"क्या पहचाना नही? पाँच हजार रुपये मिलते ही भूल गए?"

गले का स्वर पहचानकर रायचरण बोला—"कौन सन्यासी महाराज?"

युवक हँसकर बोला—"हा, उस दिन सन्यासी महाराज था—आज यग बगाली। जब जैसा तब तसा।"

रायचरण विस्मय से भौचक्का होकर बोला—"आओ आओ, ऊपर आओ। आओ बैठो!"

युवक के बैठ जाने पर रायचरण ने पूछा—"बाबा का आज ऐसा भेप क्यो?"

युवक बोला—' मेरा यही रोज का भेष है। उस बार गाँव-गाँव मे स्वदेशी मत्र का प्रचार करने निकला था—इसीलिए सन्यासी के भेष मे था।"

रायचरण ठीक समझ नहीं सका। सशय के साथ बोला— 'आज कैसे आना हुआ ?"

"आज देखने आया हूँ कि तुम भट्टाचाय जी के रुपयो से क्या कर रह हो। अभी तक तो करघा नही बैठाया। अब देर क्या कर रह हो। सामने पूजा आ रही है—बहुत सा देशी कपडा बिकेगा। भगवान् की कृपा से इस बार पूजा मे बहुत ही कम विदेशी कपडा लोग खरी देंगे। करघा चलाओ करघा। नही तो हाथकरघे की उन्नति कैसे हागी। इस वार स्वदेशी का जय जयकार है।"

रायचरण ने पूछा—"आप क्या अब सन्यासी नही हैं ?"

"मैं सन्यासी क्या होने लगा ?"

रायचरण का आश्चय क्रमश बढता जा रहा था। वह डरते डरते बोला—"अच्छा, आप अगर स यासी नही हैं तो मुझे पाच हजार रुपये कैसे दिलवा दिये। मेरी वह जगह जिसके दाम सौ रुपये भी नही हाग—उसके लिए भट्टाचाय जी ने पाँच हजार रुपये दिये—आपने कैसे उसे यह मति दी ?"

युवक हो-हो कर हँसने लगा, बोला—"मैंने मति नही दी। लोभ नाम का जो एक भूत है उसीने भट्टाचाय जी की गदन पर सवार होकर यह मति दी है।"

रायचरण सिहर उठा, बोला—"भूत।"

"डरो मत—डरो मत। रात को अँधेरे में तालाब के किनारे जो भूत घूमा करता है जो नाक से बोलता है, वह भूत नही। रूपक नही समझते? अच्छा तुम्हे स्पष्ट खोलकर कहता हूँ। सुनो। उस दिन तुम्हारी स्त्री एक सोने की मादली बेच आई थी, याद है ?"

"हाँ।"

"उसके भीतर एक भोजपत्र था—सुनार ने उसे लौटा दिया था। तुम्हारी स्त्री ने मुझे वह देखने के लिए दिया था, याद है?"

"हाँ दिया था।"

"तुम्हारा दु ख देखकर, और भट्टाचायजी ने तुम्हे किस प्रकार ठग-ठग कर तुम्हारा सवस्व छीन लिया है यह सुनकर मेरे मन मे आई कि वेट को सवक सिखाया जाय। तुम लोगो के सोने चले जाने पर, वह भोजपत्र खोलकर मैंने देखा, किसी जमाने का कोई पुराना मन्त्र आतता से लिखा हुआ था—और कुछ पढा नहीं जाता था। मैंने उस भोजपत्र पर काली स्याही से लिख दिया।—

'मेरे वश मे अगर कभी किसी को अन्न सकट आवे तो वह मेरे मकान के पूजा के कमरे मे ईशान कोण मे गड्ढा खोदकर देखे, वहा सात घडे मोहर के दवे हैं।"

'यह लिखकर वह भोजपत्र मोडकर रख दिया। सुबह के समय चले जाने से पहले जुलाहन को जो कुछ कह गया था वह तो तुमने अपने कानो से सुन ही लिया था।"

यह सुनकर बूढा रायचरण एक मिनट के लिए चुप हो रहा। अत मे बोला—"तब तो यह काम अच्छा नही हुआ बापू!"

'क्यो इसमे बुराई क्या है?"

"ब्राह्मण का धन हरण! यह तो महापाप है।"

युवक फिर हँसने लगा। बोला—"ब्राह्मण का धन आया कहाँ-स था? दुनिया के गरीब असहाय लोगो को ठगकर ही तो धन जमा किया था, यह तो तुम्हीने बताया था। वह रुपया लेने मे कोई दोष नही है।"

रायचरण बोला—"बापू, मैंने सुना है जो पाप करेगा भगवान् उसे सजा देंगे। भट्टाचायजी ने अगर दूसरे का सवनाश किया है, तो

उसका विचार करने के लिए भगवान् हैं । हम-तुम उसे सजा देने वाले कौन होते हैं ?"

युवक बोला—"भगवान् क्या अपने हाथों से कुछ करते हैं ? मनुष्य के हाथ द्वारा ही कराते हैं । जो दूसरों के ऊपर अत्याचार करता है, उत्पीडन करके धन जमा करता है उसका धन हरने मे कोई पाप नही है, बल्कि सत्काय म लगाने से पुण्य होगा । आन दमठ की यही शिक्षा वतमान युग का नया शास्त्र है ।"

"बाबाजी यद्यपि मैंने शास्त्र चरित्र नही पढे । पर एक बार बोसो के मकान मे भागवत हुई थी वहाँ मैंने सुना था कि दूसरे का धन चुराना हिन्दू के लिए पाप है—ऐसा करने पर नरक मे जाना पडता है ।"

युवक अधीर होकर बोला—'नरक ! डॅमचोर नरक ! ये सब कुसंस्कार हैं । आज मैं ज्यादा देर नही ठहर सकता । और किसी दिन आकर ये सब बातें तुम्हें अच्छी तरह समझा दूँगा । इस समय तो जल्दी से-जल्दी कारखाना शुरू करने का बदोबस्त करो ! अब ज्यादा देर मत करो ! अबकी बार जब आऊँ तो देखना चाहता हूँ कि सब करघे जोरो से चल रहे हैं । और यह भी याद है न कि ठीक हिसाब से कपडो के दाम रखोगे । एक पैसा भी मुनाफा नही लोगे । अच्छा अब चलता हूँ—" यह कहकर युवक उठ खडा हुआ ।

रायचरण भी उठ खडा हुआ । काँपते हुए गले से बोला—"बापू, मुझे माफ करना होगा । मुझसे यह काम नही होगा ।"

"क्या ? बिना मुनाफे के नही बेचोगे । मुनाफा लोगे इस करार पर तो तुम्हें रुपये दिये नहीं गये ।"

"जी, मैं यह नही कहता । कारखाना वारखाना मैं नही खोलूगा, मैं यह रुपये भट्टाचार्यजी को लौटा दूँगा ।"

युवक बोला—"हूँ लौटा दोगे !"

"जी हाँ।"

"सब रुपये।"

'सब रुपये। एक कानी कौड़ी भी मैं नहीं रखूँगा।"

रायचरण का स्वर वज्र की तरह दृढ़ था।

"खाओगे क्या ? तुम्हारे बाल बच्चे क्या खायेंगे।"

रायचरण हँसकर बोला—"खाने की क्या चिन्ता है ? जिन्होंने प्राण दिये हैं, वे ही आहार देंगे। पेड़ के पत्ते खाकर रहना पड़े वही अच्छा, पर अधर्म की कौड़ी नहीं खाऊँगा। देखो पहले जन्म में कितना पाप किया था, इसीलिए इस जन्म मे इतना कष्ट पा रहा हूँ। अगर इस जन्म में फिर ब्राह्मण का धन हरूँगा तो दूसरे जन्म मे कुत्ता या सियार होकर जन्म लेना पड़ेगा।"

क्रोध से काँपते हुए स्वर में दाँत पीसते हुए चीत्कार करके युवक बोला—"लौटा दोगे।"

"हाँ बापू, कल सुबह जाकर सारे रुपये भट्टाचार्य जी को लौटा आऊँगा।"

"मूर्ख, नराधम, देशद्रोही"—कहकर बूट से लात मारकर रायचरण को धराशायी करके युवक रात के अँधेरे मे गायब हो गया। इस नगण्य निरक्षर जुलाहे को ही निज प्रिय सन्तान समझकर भारत माता ने अपनी छाती से लगा लिया।

●

परिशिष्ट

क जीवनी

प्रभातकुमार मुखोपाध्याय का ज म बगाल मे (वतमान पश्चिम बगाल म) सन् १८७३ की तीसरी फरवरी को वधमान जिले के धात्री गाँव मे हुआ था। उनके पिता का नाम जयगोपाल मुखोपाध्याय था। उनका आदि निवास हुगली जिले मे था।

प्रभातकुमार के पिता ई० आई० रेल म सिगनलर का काम करते थे। इसी कारण उन्ह विभिन्न स्टेशना पर नौकरी के सूत्र से कभी झाझा, कभी जमालपुर कभी दिलदारनगर जाना पडता था। रेलवे स्टेशनो पर रेल कमचारी के पुत्र के रूप म बिहार के विभिन्न स्थाना म इस प्रकार बहुत घूमने फिरने से उ होने बाल्यकाल ही मे जो जानकारी प्राप्त कर ली थी उसने प्रौढ वयस मे सफल कहानीकार के रूप मे उनकी बहुत सी रचनाओ मे स्निग्ध सु दर छाया डाली है।

प्रभातकुमार ने जमालपुर मे रहकर वहाँ के स्कूल मे पठन पाठन किया था एव १८८८ मे पद्रह वप की उम्र मे उन्होने ऐंट्रेंस की परीक्षा पास की थी। इसके बाद पटना कॉलेज मे एफ० ए० और बी० ए० पढकर १८९५ मे बी० ए० पास किया।

एफ० ए० परीक्षा देने से कुछ पहले उनका हालिशहर मे विवाह हुआ था और विवाह के छह साल बाद दो पुत्रो को छोडकर उनकी स्त्री परलोकगत हो गई थी।

बी० ए० की परीक्षा देने के बाद सरकारी क्लक शिप की परीक्षा मे उत्तीण होकर उन्होने अस्थायी रूप से भारत सरकार के दफ्तर में

कुछ दिन नौकरी की। शिमला से लौटकर कलकत्ता मे डायरेक्टर जनरल आफ टेलीग्राफ के आफिस मे स्थायी रूप से नियुक्त हो गए।

लेकिन उन्हें कलर्की ज्यादा दिन नही करनी पडी। अकस्मात् विलायत जाने का अभावनीय सुयोग मिल गया। छात्रावस्था से ही प्रभातकुमार ने 'भारती' पत्रिका म लिखना शुरू कर दिया था। १८९५ से 'भारती' म उनकी रचना नियमित रूप से प्रकाशित होती थी, और वे 'भारती' के एक विशिष्ट लेखक गिने जाते थे। सरलादेवी 'भारती' की सपादिका थी। प्रभातकुमार की साहित्यिक प्रतिभा के प्रति उनकी श्रद्धा थी। टेलीग्राफ आफिस मे काम करने के समय से ही 'भारती' की सपादिका के साथ प्रभातकुमार का परिचय था। यह परिचय घनिष्ठता मे परिणत होने पर यह स्थिर हुआ कि सरलादेवी के मामा सत्येन्द्रनाथ ठाकुर के खर्च से प्रभातकुमार बैरिस्टर होने के लिए विलायत जावें और परीक्षा मे उत्तीर्ण होकर देश लौटकर यथारीति विवाह करें।

सन् १९०१ में बिना किसी से कुछ कहे वे विलायत रवाना हो गए। उसी समय उनके पिता का स्वर्गवास हुआ था। माँ अत्यत दुखी थी। माँ से कहने पर कही आपत्ति करें इस डर से विलायत जाने की बात उन्हे भी नही कही। तीन साल बाद बैरिस्टर होकर वे देश लौट आए। लेकिन नये सिर से गृहस्थी शुरू करना उनके भाग्य म नही था। कारण यह है कि उनकी माँ ने विवाह करने की सम्मति नही दी। इस अप्रत्याशित आघात के कारण उन्होने गृहस्थी की आशा का हमेशा के लिए जलाजलि द दी। विलायत से लौटकर प्रभातकुमार थोडे दिनो तक दार्जिलिंग मे रहे। वहाँ प्रैक्टिस की सुविधा नही होगी यह जानकर व रगपुर चल आये। वहाँ चार साल तक प्रैक्टिस करने के बाद उन्होने गया मे जाकर प्रक्टिस करना शुरू किया। वहाँ वे आठ साल

रहे। लेकिन बैरिस्टरी के काम मे उनका मन नही लगता था। साहित्य के पद्यवन मे उन्हें जिस आनन्द का सुराग मिला था उससे उनका सारा मन परिपूर्ण हो रहा था। इससे पहले 'भारती', 'प्रवासी', 'मानसी' और 'साहित्य' में उनकी कहानियों और उपन्यासो ने पाठक समाज की दृष्टि आकर्षित की थी। क्रम से 'षोडशी', 'देशी और विलायती', 'गल्पाजलि' और 'नवीन संन्यासी' पुस्तकाकार प्रकाशित होने के साथ-ही साथ बँगला कथा साहित्य की मण्डली में उनका स्थान सुप्रतिष्ठित हो गया। भाषा, वर्णना भगी और विषय वस्तु सभी दृष्टि से प्रभातकुमार की छोटी कहानियाँ उस जमाने के बँगला साहित्य मे अपने वैशिष्ट्य के कारण लोकप्रिय हो उठी थी। विशेषत 'देशी और विलायती' पुस्तक की कहानियो ने अपने अभिनवत्व के कारण पाठक और समालोचक सभी को चकित कर दिया था। इस प्रकार की साहित्य-चर्चा से जिस प्रकार उनकी ख्याति हुई उसी प्रकार अर्थगिरा भी होने लगा। एकान्त भाव से साहित्य साधना में आत्म नियोग करने के लिए उनका आग्रह दूर होने लगा। उनकी यह आकाक्षा अपूर्ण नही रही। थोडे ही दिनो में सुयोग भी मिल गया।

इसी समय नाटोर के महाराज जगदीन्द्रनाथ राय ने 'मानसी' और 'मर्मवाणी' नाम का मासिक पत्र प्रकाशित किया। महाराजा जगदीन्द्र-नाथ के अनुरोध से महाराज के सहयोगी के रूप मे वे 'मानसी' और 'मर्मवाणी' के सपादक हो गए। वे तब भी गया मे प्रक्टिस कर रहे थे। शुरू मे कई दिनो तक पत्रिका प्रकाशित होने से पाच सात दिन पहले कलकत्ता आ जाते थे। इसके बाद स्थायी रूप से कलकत्ता मे रहने का सुयोग महाराजा ने ही कर दिया। 'मानसी' और 'मर्मवाणी' चौदह साल तक निकलती रही। चौदह साल तक प्रभातकुमार ने अच्छी तरह पत्रिका का सचालन किया।

गया से कलकत्ता आकर प्रभातकुमार नाटोर के महाराज की चेष्टा और प्रयत्न से साथ ही साथ कलकत्ता विश्वविद्यालय के लॉ कॉलेज के अध्यापक नियुक्त हो गए। जीवन के अतिम दिन तक वे इसी पद पर अधिष्ठित रहे।

१९३२ की ५वी अप्रल को प्रभातकुमार की मृत्यु हुई।

प्रभातकुमार स्वल्पभाषी, शिष्टाचार सपन्न, निरहकार और बडे ही मीठे स्वभाव के व्यक्ति थे। आतरिकता और सहृदयता उनका स्वभाव सिद्ध गुण था। इन्ही दो गुणो के कारण मित्र मडली के हृदय मे वे स्थायी आसन स्थापित कर गये हैं। साहित्यिक प्रभातकुमार की अपेक्षा मनुष्य प्रभातकुमार छोटे नही थे यह परिचय प्राप्त करने का सौभाग्य ज्यादा लोगो को नही हो सका।

ख रचनावली

प्रभातकुमार का जीवन काल सिफ उनसठ वप का है। बाईस वप की उम्र से उनकी रचना नियमित रूप से प्रकाशित होने लगी। अडतीस साल की साहित्य साधना मे उ होने तीस कहानी सग्रह और उप यास प्रकाशित किय हैं। और अभी भी उनकी बहुत-सी अप्रकाशित रचना उस जमाने के सामयिक पत्रो मे बिखरी पडी है।

कहानी और उप यास दोनो मे उनकी शक्ति और प्रतिभा का चिह्न स्पष्ट है। फिर भी बगाल मे उनका आदर प्रधानत कहानीकार के रूप मे ही है। अब तक प्रकाशित हुए तेरह कहानी-सग्रहों मे कुल एक सौ इक्कीस कहानियाँ प्रकाशित हुई हैं। जिस जमाने मे रवी द्रनाथ की अति उत्कृष्ट और अद्वितीय कहानियो की रचना से बगाल का पाठक समाज मत्रमुग्ध था, उसी समाज के लौकिक मनुष्य के

साधारण सुख दुःख की कहानियाँ लिखकर पाठक समाज में आदर पाना स्वल्प प्रतिभा का परिचायक नहीं है।

प्रभातकुमार के प्रकाशित गल्प संग्रहों के नाम और प्रकाशन की तारीख इस प्रकार है—(१) नवकथा १८९९, (२) षोडशी १९०६, (३) शाहजादा और फकीर कन्या की प्रणय कहानी, कटा सिर, गुल बेगम की आश्चर्यजनक कहानी १९०९, (४) देशी और विलायती १९०९, (५) गल्पांजली १९१३, (६) गल्पवीथि १९२४, (७) त्रिपुष्प १९१७, (८) गहनों की पेटी १९२१, (९) हताश प्रेमी १९२४, (१०) विलासिनी १९२६, (११) युवक का प्रेम १९२८, (१२) नई बहू १९२९, (१३) जामाता बाबाजी १९३१।